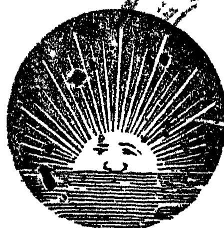
विद्याभास्कर-ग्रन्थ-मरीचि-माला, प्रथम-मरीचि



श्रीमान् लार्ड हार्डिंग महोदय गवर्नर जनरल के वर्तमान डा० और सेंट्रल इण्डिया के भूतपूर्व मेडिकल आफिसर श्रीमान् डा० राबर्ट्स महोदय लिखित भूमिका सहित।

शुश्रूषा।

लेखक—डाक्टर श्रीगोपाल रामचन्द्र तांबे
एम० ए०, बी० एस सी०, एल एम० एंड एस०
स्टेट सर्जन (इन्दौर स्टेट)

सम्पादक
श्रीगिरिधरशर्मा
नवरत्नसरस्वतीभवन
झालरापाटन

प्रथमावृत्ति १००० | प्रकाशक—एस० पी० आ० एं० को Jhalrapatan Rajputana | मूल्य १)

श्रीराघवेन्द्र प्रेस प्रयाग।

PREFACE.

A knowledge of nursing is becoming very essential for Indian Hospitals & homes, and a work on this subject, which will make it, in an easy form, available for Indian Ladies, is one I consider to be most valuable. I am glad to see that my freind Dr. Tambe has taken this point of view, and is presenting to the Indian pablic a treatise on nursing.

He has taken the various subjects, treated in the work, from well known English authors and adapted it in a form that will suit the requirements of this country.

Indore C. I.
Ist June 1910

[Sd] Lt. Col. ROBERTS I. M. S.
Residency Surgeon
&
Administrative Madical Officer
in C. I. Indore.

भूमिका।



श्रीमान् डा० गोपाल रामचन्द्र तांबे एक मार्मिक डाकृर हैं। उन्हों का असाधारण अनुभव है। उन्होंने लोकोपकार की बुद्धि से इस पुस्तक को लिखा है। आज उनकी इस पुस्तक "शुश्रूषा" को "विद्याभास्कर-ग्रन्थ-मरीचि माला" के प्रथम मरीचि रूप में हिन्दी सज्जनों के सन्मुख प्रकट करते हुए अत्यन्त आनन्द होता है। यदि जीवन रहा तो इस माला में हम और भी उत्तम उत्तम ग्रन्थ अपने भारतीय बन्धुओं के सन्मुख रक्खेंगे। यह पुस्तक हमें ठाकुर श्रीउमराव सिंह जी जागीरदार श्याम पुरा, ए. डी. सी. श्रीदर्बार बहादुर झालावाड़ के द्वारा प्राप्त हुई अतएव उनके कृतज्ञ हैं और एस. पी. ब्रादर्स एंड को. को भी धन्यवाद देते हैं कि जिसने इसे प्रकाशित करने का भार अपने ऊपर लिया। इस संस्करण में हम इसकी भाषा को यथोचित न कर सके और प्रेस दूर होने के कारण यथावत् प्रूफ भी न देख सके परन्तु वैसा करने में ग्रन्थ प्रकाशित होने में देरी होती जान हमने शीघ्र ही ग्रन्थ छाप दिया है। क्योंकि हम

चाहते हैं कि लोगों को शीघ्र ही इस विषय का ज्ञान हो जांय । अतएव हम अपने भारतीय भाई बहिनों से क्षमा प्रार्थी हैं । अगले संस्करण में हम इन त्रुटियों को दूर कर देंगे । हम राघवेन्द्र प्रेस के मैनेजर को धन्यवाद देते हैं कि उन्होंने पुस्तक का प्रूफ देखा है और पुस्तक शीघ्र छाप दी है ।

सबसे ज्यादा धन्यवाद तो हमारा श्रीमान् झालावाड़ नरेश्वर **श्रीभवानीसिंहजी महोदय** के. सी. एस. आई. को है; जिनके राम राज्य में हम आनन्द मङ्गल से विद्याव्यासङ्ग में अपना समय स्वतन्त्रतापूर्वक व्यतीत करते हैं और जिनकी कृपा और सद्धर्मपरायणता के कारण हमारा जीवन ब्रह्मानन्द परायण हो सुख में व्यतीत हो रहा है प्रभु इनके मनोरथ सिद्ध करे ।

श्रीगिरधरशर्मा ।



शुश्रूषा।

प्रत्येक मनुष्य को किसी न किसी प्रकार की शुश्रूषा करने का प्रसङ्ग आ ही जाता है। कोई तो घर के घर ही में इस काम को करते हैं और किसी को सार्वजनिक औषधालय में ऐसा प्रसङ्ग आता है। कोई आत्मधर्म के विचार से कोई नागरिक कर्तव्य के विचार से और कोई आजीविका के विचार से रोगी की शुश्रूषा करते हैं। अतएव प्रत्येक मनुष्य को स्वाभाविक रीति से रोग और रोगी का थोड़ा बहुत ज्ञान हो ही जाता है। जिनको रोगी की शुश्रूषा करने का बार बार प्रसङ्ग आता रहता है, उनके ध्यान में यह बात सहज में आजायगी कि रोगी को जो त्रास और तकलीफें होती हैं उनमें से बहुत सा भाग अनिवार्य नहीं है क्योंकि उनका रोग के साथ निकट का सम्बन्ध नहीं है। उन सब का मूल अशुद्ध और अपूर्ण वायु, धूप, चमक, गरमी, अँधेरा, मैलापन, कुपथ्य, समय कुसमय औषधादि देने, करने में है।

रोगी को जो जो दुःख हों वे सब रोग के ही चिन्ह हैं ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है; बहुत से दुःख अपने आप मिट जाते हुये देखे गये हैं। परन्तु जहां जहां उनके दूर होने में देरी होती है वहां वहां प्रायः शुश्रूषा की अज्ञानता के कारण ही रोगी को अधिक दुख दर्द सहने पड़ते हैं।

रोगी का देह ठण्डा होगया, उसे बुखार आगया, उसे चक्कर आने लगे, भोजन के बाद जी मचला कर उलटी होगई, या एकही जगह पड़े पड़े उसके अङ्ग में फफोले पड़ गये तो वह दोष रोग का नहीं हैं, बुरी रीति से की हुई शुश्रूषा का परिणाम है। शुश्रूषा शब्द का अर्थ इतना ही नहीं है कि औषधि पिलादी या तपा-तपू दिया या हाथ पांव रगड़ रगड़ा कर छुट्टी पाई; प्रत्युत स्वच्छ और पूरी हवा पहुंचने का प्रबन्ध करना, प्रकाश रखना, ठण्ड न लगने देना रोगी की हिम्मत न टूटने देना, उसे शान्त रखना, उसे स्वच्छ रखना सुपथ्य देना इन सब बातों का समावेश शुश्रूषा में है। गरज़ रोगी की जीवन रक्षा में जो २ करना है वे सब शुश्रूषा में ही समझा जाना चाहिये।

यह बात आमतौर पर मानी जाती है कि शुश्रूषा के काम में स्त्रियां स्वाभाविक रीति से योग्य हैं परन्तु मेरे जान बहुत ही कम स्त्रियां हैं जो शुश्रूषा के मूल

तत्वों को भी जानती हैं। इसके कहने से ऐसा नहीं समझना चाहिये कि जहां जहां रोगी विशेष दुःख पाते हैं वहां वहां सब जगह शुश्रूषा करनेवाली नर्स का ही दोष होता है। रोगी का घर, उसके आस पास का मुहल्ला, उसके सोने का कमरा यदि खराब है तो नर्स कितनी ही चतुर और मन लगा कर काम करनेवाली क्यों न हो वह कर ही क्या सकती है। उत्तम शुश्रूषा के साथ इन ऊपर बताई हुई चीजों की सहायता होना ही चाहिये।

अमुक रोग मिटने जैसे हैं या नहीं, और अमुक बीमारी में दुख अवश्य दूर हो जायगा या क्या? इत्यादि प्रश्नों का उत्तर देना असम्भव है। परन्तु हवा, पानी, प्रकाश, स्वच्छता, खाना, पीना, औषध वगैरः का अच्छी तरह प्रबन्ध करने के बाद भी रोगी को जो कष्ट हो तो उसका मूल रोग ही है और वह रोग के चिन्ह हैं ऐसा कहा जायगा।

बहुत से मनुष्यों की ऐसी समझ है कि रोगी को औषधि दी कि इलाज हो गया, शुद्ध हवा, स्वच्छ जल, योग्य पोषण आदि बातों की ओर ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं ये सब व्यर्थ हैं। इसी समझ के जोर से कभी कभी वे डाक्टरों से प्रश्न करते हैं कि "क्यों डाक्टर साहिब, हवा पानी वगैरः जो इतने महत्व के

हैं तो महामारी सन्निपात वगैरः में दवा दारू न करें तो कैसी हो ?" इसका उत्तर यही दिया जा सकता है कि इन ऊपर कही हुई बीमारियों में किस औषधि का कितना गुण होता है यह निश्चय पूर्वक कहना कठिन है। परन्तु यह बात खास और सर्वमान्य है कि उत्तम शुश्रूषा (Nursing) का परिणाम रोगी पर हुए बिना रह नहीं सकता। •

आरोग्य की रक्षा करना व आरोग्य सम्पादन करना, नीरोग रहना या रोग से मुक्त होना, ये दोनों बातें मोटी निगाह से देखने पर एक नहीं मालूम होतीं परंतु दोनों एक ही हैं। दोनों के नियम भी एक ही हैं। यदि दोनों में अन्तर है तो इतना ही है कि आरोग्य के नियमों का उल्लङ्घन करने पर नीरोग मनुष्य को जो प्रायश्चित भोगना पड़ता है उसकी अपेक्षा रोगी को बहुत ही ज्यादा भोगना पड़ता है और ये नियम भी सर्वजनों को विदित नहीं है।

"इन नियमों का ज्ञान सम्पादन करने के लिये वैद्यक का अभ्यास होना चाहिये सो केवल डाक्टर ही कर सकते हैं। हम कहां के डाक्टर हैं ?" कदाचित् कोई कोई ऐसा कहेंगे ! परन्तु मुझे अपने भाई बहिनों को कहना है कि यह आप का विचार ठीक नहीं है। इङ्गलैंड जैसे सुधरे हुये देश में भी प्रतिवर्ष $\frac{१५}{१००}$ बच्चे एक वर्ष की

अवस्था में मर जाते हैं क्या यह तुम्हें मालूम है? परसों ही मैंने इन्दौर म्यूनिसिपेलिटी की रिपोर्ट पढ़ी है उसमें स्पष्ट लिखा हुआ है कि कुल मृत्यु संख्या में से $\frac{४५}{१००}$ पांच वर्ष की अवस्था के भीतर भीतर के बच्चे मरे इस साल इन्दौर मे कुल २५०० मौतें हुईं। प्लेग नाम मात्र को न था इसमें से केवल इन्दौर शहर में ही १००० से १२०० तक एक वर्ष के भीतर २ अवस्था के बच्चे मरे। क्या यह बात शोचनीय नहीं है। इन्दौर की लोक संख्या भी ८०००० ही है। लंडन में पांच वर्ष की अवस्था के भीतर $\frac{४०}{१००}$ मर जाते हैं, कई जगह यह संख्या $\frac{५०}{१००}$, $\frac{६०}{१००}$ पहुंच जाती है। क्या यह तुम्हें मालूम है? मुझे याद पड़ता है, मैंने कहीं पढ़ा है कि लण्डन में दश वर्ष की अवस्था के भीतर कोई १००७० बच्चे मर जाते हैं। दुनिया में इसका कारण यह समझा जाता है कि बच्चों के लिये स्वतन्त्र हास्पिटल न होने से मृत्यु की संख्या बढ़ती है अतएव बच्चों के लिये स्वतन्त्र चिकित्सालय होने चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि चिकित्सालय होने से बच्चों की जानें बचतीं परन्तु यह बात सही नहीं है कि उनके न होने से ही इतनी ज्यादा बच्चों की मौतें होती हैं। क्या यह किसी को ज्ञात है कि बच्चे को बीमारी किससे होती है? मैलापन, कुन्दपवन,

अन्नजल सम्बन्धी बेपरवाही, अस्वच्छ घर इत्यादि कारणों से बच्चे बीमार होते हैं। गरज कि जैसी कुछ घर की घर में बच्चों की सँभाल रखना चाहिये वैसी कोई रखता नहीं है इसी से वे अशक्त और रोगी होते हैं बहुत से तो ऐसे हैं जिनका लक्ष इस बात के समझने की ओर तक नहीं गया है। बच्चों के चिकित्सालय न होने से उनमें बीमारी बढ़ती है यह कहना ठीक नहीं है और इसी भांति चिकित्सालय होने से रोग होंगे ही नहीं, यह भी कोई बात नहीं है।

स्त्रियां और बहुत सी सीखी सुधरी हुई स्त्रियां तक इस बात को नहीं जानतीं कि आरोग्य किसको कहते हैं और वह कैसे सम्पादन किया जा सकता है। यह बड़ी आवश्यक बात है कि प्रत्येक स्त्री को, घर को स्वच्छ रखने, कपड़े साफ रखने, घर की प्रत्येक वस्तु को स्वच्छ रखने, रसोई के घर, न्हाने के घर और सोने के कमरे में स्वच्छता व शुद्ध वायु रखने, एवं कुटुम्ब में आरोग्य क़ायम रखने का पूरा २ ज्ञान हो। यह कमी चिकित्सालयों के स्थापन कर देने से पूरी नहीं हो सकती। बाल मृत्यु की संख्या देख कर यह सहज में समझा जा सकता है कि अमुक नगर की सफ़ाई कैसी है और आरोग्य कैसा! जब इन्दौर जैसे लगभग पौन लाख बस्ती के शहर में प्रति-वर्ष १००० बच्चे पांच वर्ष की अवस्था के भीतर अकाल मौत

मर जाते हैं तब क्या हमें यह कह कर कि यह प्राणहानि अवश्यम्भावी है, रुक नहीं सकती स्वस्थ बैठ रहना चाहिये? और क्या इससे यह नहीं समझ में आता कि प्रत्येक मां को डाक्टर होना ही चाहिए ऐसी परमेश्वर की वांछा है। स्त्रियों के लिये सब प्रकार की शिक्षाओं में से यह शिक्षा अत्यन्त आवश्यक और हित करनेवाली है कि उन्हें यह बतलाया जाय कि बच्चों को किस भांति आरोग्य रखना चाहिए। जिस सृष्टि में प्रभु ने हमें उत्पन्न किया है उस सृष्टि में उसी की बनाई हुई और और वस्तुओं का (जैसे पवन जल, अग्नि आदि का) हमारे शारीरिक व मानसिक आरोग्य के साथ कितना निकट का सम्बन्ध है और इस सम्बन्ध के न जानने के कारण हमारा आरोग्य कैसा बिगड़ जाता है। इस बात को बहुत सी माताएं, अध्यापिकाएं, और प्रतिदिन नियमित रीति से हास्पिटलों में काम करनेवाली अनुभवी दाइयां तक पूरे तौर पर नहीं जानतीं। आरोग्य किसे कहते हैं, वह कैसे सम्पादन किया जा सकता है उसकी कैसे रक्षा करना चाहिए, शरीर और मन का आपस में क्या सम्बन्ध है, और उनका एक दूसरे पर क्या प्रभाव पड़ता है इत्यादि बातों का ज्ञान हम लोगों की स्त्रियों को है ही नहीं। इतना ही नहीं, उन्हें इस बात की कमी तक नहीं जान पड़ती कि इस भांति का ज्ञान सम्पादन करना अत्यन्त आवश्यक भी है। उनकी दृष्टि में यह काम डाक्टरों

का है और वे उन्हीं का काम साधेंगी। यदि कभी किसी ने उनसे कहा भी है कि अमुक अमुक नियम पालन करने से बच्चा अनायास ही नीरोग रहता है तो वे उसका उत्तर देती हैं कि "यह आप का कहना ठीक है परन्तु जो कुछ आप कहते हैं सो हमारे हाथ में नहीं हैं ठंडे हवा के झोंके चले और बच्चों को ठंड लगी तब उन्हें बंद करना क्या हमारे हाथ की बात है" ?

स्वच्छ वायु व घर में की उष्णता।

शुश्रूषा का पहिला नियम जो नर्स को निरन्तर रात दिन पूरे तौर पर पालना चाहिये, जिसकी ओर लक्ष देना रोगी की प्रकृति के लिये अत्यन्त आवश्यक है, जिसको छोड़ देने से या जिस पर दुर्लभ करने से रोगी के आराम के लिये किये हुए और सब उपायों आदि के व्यर्थ जाने का डर है और जिस पर अच्छी तरह ध्यान देने से और बातों को ओर थोड़ी देर के लिये दुर्लक्ष हो तो कुछ हानि नहीं वह नियम है कि "रोगी के कमरे में जितना शुद्ध वायु हो उतना ही अच्छा। केवल इतनी चतुराई होना चाहिए कि शुद्ध और खूब हवा की तजवीज करने पर रोगी के शरीर पर हवा के झोंके न लगें

परन्तु इस नियम के पालन करने वाले कितने जन मिलते हैं? हज़ारों में जो थोड़े बहुत वायु के महत्त्व को जानते हैं उनमें भी बहुतों के मन में कितनी ही उलटी समझ ऐसी दृढ़ता के साथ जमी हुई है कि जिसका दूर करना असम्भव है। रोगी के कमरे या शफ़ाख़ाने के वार्डों में जो हवा आती है, वह कहां से आती है वह कैसी आती है इसका कौन विचार करता है? कहीं वह नारदानों से आती है, कहीं गन्दी मोरियों की ओर से आती है। कहीं कहीं रोगी के कमरे के बाहर ही रसोई के घर का पानी जमा हो रहता है। कहीं कहीं उसके कमरे की खिड़कियों के बाहर ही कूड़ा करकट का गञ्ज पड़ा होता है। यह बात मैंने अपनी आँखों से देखी है। ऐसे गन्दे स्थानों की हवा यदि रोगी के कमरे में जाने दें फिर चाहे वह खुली हो या बन्द, तो उसका परिणाम ज़हरीली हवा के ऐसा ही होगा। कमरे में बाहर से ही स्वच्छ हवा जाना अच्छा है और जिस ओर की खिड़कियों से उसका आना सम्भव हो उधर से आना चाहिये। चाहे जिस ओर की खिड़की खोल दी जायगी तो उधर से ही हवा कमरे में आयेगी। चारों ओर से बन्द हुए चौक से जो हवा आयेगी वह भी संकड़ी और अंधेरी गली से आनेवाली कुन्द हवा के ऐसी कुन्द ही होगी। ठंड के दिनों में प्रायः हम लोग देख पाते

हैं कि कमरे के सब खिड़की और दर्वाजे बन्द कर और एक जलती हुई अंगीठी रख कर बहुत से मनुष्य सोते हैं। एकाध खिड़की खोली भी तो उसका नीचे का आधा भाग बिलकुल बंद कर देते हैं और ऊपर का भाग वह भी किसी कदर थोड़ा सा खुला हुआ देखने में आता है। इस पर भी उन कमरे में सब तरह प्रकार की अटसट वस्तुएं भरी हुई होती हैं वह तो जुदा ही है। ऐसे कमरे में शुद्ध हवा की एकाध लहर भी कैसे आ सकती है? बाहर से ही जहां शुद्ध हवा प्रवेश होना कठिन है वहां कमरे की हवा की स्थिति का पृथक् वर्णन करने की आवश्यकता ही नहीं है। वह घुटी हुई कुन्द और बूवाली होगी ही। उसमें सोने वाले को दम, खांसी, क्षय, ज्वर, इत्यादि अनेक रोगों में से कौन सा रोग कब होजाय यह नहीं कहा जा सकता। ऐसा होने पर भी सैकड़ों लोग विशेष कर छोटे बच्चे ऐसे दूषित कमरों में सोये बिना नहीं रहते। कमरे में जाकर सोने के पहिले उस कमरे की सब खिड़कियों को खुला देने की तक उन्हें नहीं सूझती, यह बड़ा आश्चर्य है। कमरे के दर्वाजे को यदि खोल दिया जाय तो उसकी खराब हवा अड़ोस पड़ोस के बड़े मकान में घुस कर उसे तक खराब कर देती है उठने बैठने के कमरे की खिड़कियों को देखो तो चारों ओर से सदा बन्द और इसका कारण पूछा जाता है तो घर के

मनुष्य कहते हैं कि घर में नालों की धूल न आजाय इसलिये ऐसा करना पड़ता है। उनकी समझ कदाचित ऐसी जान पड़ती है कि बन्द कमरे में सोने से कुछ हानि नहीं है। तब एक प्रश्न उठता है कि यदि हम खिड़कियों को खुला रखा जाय तो कैसा? इसका उत्तर एक दूसरे ही प्रश्न में दिया जाता है कि खिड़कियां बंद कब की जांय?

सोने के कमरे में पूरी खिड़कियां होने पर और अंगीठी गरम कर रखने पर रोगी के सोने के बाद भी कमरे में स्वच्छ हवा खूब आने देना चाहिये, खिड़कियां खोलने में कभी आगा पीछा न देखना चाहिये। ओढ़ कर सोए हुए मनुष्य को ठंडे झोंके लग कर शीत होना बहुत कम सम्भव है। नर्स यदि बेखबर है या बेवकूफ, तो वह खिड़कियां दर्वाजे व उनको संधे भी चिथड़े व कागज़ भर भर कर बन्द कर देगी और ऐसे बंद हवा के कमरे में रोगी को रख देगी! इतना ही नहीं वह ऐसे कमरे में ऊपर से जलती हुई अंगीठी रखना भी नहीं चूकेगी। यह बात सिर्फ़ बेवकूफ नर्स के हाथ से ही होती हो सो नहीं बहुत सी सुशिक्षित और अनुभव वाली नर्सें भी इस चूक को करती हैं। रोगी मनुष्य थोड़ा चलने फिरने लगा कि फिर तो वे इस विषय (खिड़की वगैरा खुली रखने) में और भी बेपरवाह हो जाती हैं। रोगी के कपड़े बदलते हुए या उसका बिछौना बदलते हुए उसे वे इधर उधर फिराने लगती हैं। पहिले ही तो

वह बहुत देर तक बिछौने पर पड़ा पड़ा थक गया होता है वैसे में ही जो उसे थोड़ा बहुत श्रम होता है तो वह और भी विशेष थक जाता है और उसे पसीना आने लगता है, ऐसी अवस्था में उसे शीघ्र ही सर्दी हो जाना सम्भव है, केवल नाक बहने लगा और सर्दी हो गई ऐसा कोई नियम नहीं है। सर्दी के अनेक प्रकार हैं। हवा की उष्णता में फेरफार हुआ कि उससे थके हुए रोगी की प्रकृति में हानिकारक फेरफार होने की भीति है। जो हवा बिछौने पर सोते हुए रोगी को गुण करती है और उसे आराम पहुंचाती है वही हवा प्रसङ्ग विशेष पर उसी रोगी के खड़े होने पर उसके नाश का कारण हो जाती है। रोगी को शुद्ध और विपुल हवा अवश्य चाहिए; परन्तु इसी पर उसका हिताहित नहीं है। सामने से आने वाली हवा की गर्मी पर भी हमें लक्ष देना चाहिए। वह यदि बहुत ठंडी होगी तो रोगी को उलट कर बुखार आजाना सम्भव है। कमरे की व कमरे के बाहर की हवा सामान रूप से शुद्ध होकर सामान रूप से ही ठण्डी भी होना चाहिए यह कुछ आवश्यक नहीं है। और न यही आवश्यक है कि रात दिन सदा कमरे की हवा गरम ही रहना चाहिए। प्रातःकाल में जिस वक्त ठण्डी हवा चलती हो उस समय रोगी के कमरे में अंगीठी रख कर उस कमरे को गरम कर देने से रोगी को अच्छा

मालूम होता है किन्तु दोपहर के समय जब बाहर की हवा की गर्मी बढ़ती है और रोगी को गर्मी मालूम होती है तब भी जो अंगीठी पास रखदी तो उस बिचारे का जीव असह्य ऊष्णता से नहीं सा हो जायगा। दोपहर के समय खिड़कियां उघड़ी रखने से कुछ हानि न होने पर भी वैसा करने की नर्स हिम्मत नहीं करती।

रोगी ऐसी स्थिति में नहीं है कि वह लाचार होकर बिछौने पर पड़ा रहे और थोड़ा बहुत अपने पावों से चलता फिरता भी है तो उसके कमरे की खिड़कियां ऐसी होना चाहिए कि जिन्हें वह अपनी इच्छा के मुआफिक बन्द कर सके और खोल सके। ताप के ओर से घबराये हुए रोगी की दशा जुदी ही है। वह कदाचित् भ्रम के वश में होकर खिड़की में से कूद पड़े ऐसा भय है सही, परन्तु योग्य ध्यान देकर वह अपघात न होने देना चाहिये, और कमरे में ठंडी और शुद्ध हवा आने में रुकावट न करना चाहिए। क्योंकि ऐसे समय में जितनी ठंडी और शीतल हवा होगी उतनी ही आवश्यक है। सत्यदृष्टि से देखते हुए तो रोगी को जहां चाहिए वहां खोल सके और बंद कर सके ऐसी खिड़कियां हुए बिना कमरे की हवा शुद्ध नहीं हो सकती। रोगी को कब, कितनी और कैसी हवा चाहिए इसे समझने वाले मनुष्य या समझने वाली नर्स बहुत ही कम मिलती हैं। "मेरा

कमरा जहां मैं दिन रात काटता हूं वह मुझे और और स्थानों के मुकाबले में खूब हवादार और अच्छा मालूम होता है वैसा मुझे कहीं नहीं मालूम होता इसका कारण यह है कि मेरे कमरे की खिड़कियां जैसी मुझे चाहिए वैसी ही बन्द कर देता हूं या खोल लेता हूं।" रोगी के मुख से ऐसे उद्‌गार हम बराबर सुनते हैं यह उनका कहना सत्य है।

रोगी के कमरे की खिड़कियां और किवाड़ बन्द कर देने से रोगी के श्वास और शरीर की गरमी से कमरे की हवा गरम होती है इसमें सन्देह नहीं परन्तु ऐसा कौन कहेगा कि कमरे को गरम करने का यह उपाय ठीक है। यह उपाय ऐसा भयङ्कर, हानि-कारक और सहियल है कि जैसा और कोई नहीं है। ऐसा होने पर भी कमरे की खिड़की और द्वार को बंद करके रखने वाली नर्सें बहुत पाई जाती हैं। उनकी इस भूल से उनके अच्छे होते हुए रोगी को कितनी हानि होती है इसका विचार भी उनके माथे में नहीं आता। उनको इस तरह का डर बना रहता है कि न जाने एकदम से ताजी और शुद्ध हवा के लगने से रोगी का शरीर एकाएक ठंडा हम हो जायगा तो क्या किया जायगा ? यह उनकी समझ भूल भरी ही नहीं है बहुत बड़ी घात करने वाली भी है। बारम्बार श्वासोच्छ्वास

करने से अधिक अधिक दूषित होती हुई हवा में रोगी को जो रूँध रक्खा तो उसका जल्दी अच्छा होना दूर रहा मर जाना तक सम्भव है।

मैं थोड़े दिन पहले बम्बई मे प्लेगड्यूटी पर था उस वक्त मिलों के मजदूरों के मुहल्ले की तलाश करने के लिये उनके घर घर जाना पड़ता था। जिन दिनों में मिलें चलती थीं उन दिनों मजदूर सुबह ही में जल्दी उठ कर अपने अपने काम पर चले जाते थे इससे यह नहीं मालूम होता था कि वे अपने घरों में एक एक कोठरी में कितने मनुष्य रहते हैं। परन्तु छुट्टी के दिन उनके घर की एक एक कोठरी में १०-१० मनुष्य सोते हुए मिलते थे। प्रत्येक कोठरी १२ फुट लम्बी और १२ फुट चौड़ी थी। इसमें ही उनकी सारी घर गृहस्थी थी। इसके एक खिड़की और एक दर्वाजा था। यही मात्र उनमें हवा जाने का मार्ग था। इन्हें भी बंद करके रात को इतने मनुष्य भीतर सोते थे। ऐसी कोठरियों को खोल कर भीतर जाने का मौका रोज आता था। क्या कभी तुम भी ऐसी कोठरियों में गये हो? भीतर जाते ही जीव एकदम घुट कर उलटी होगी या क्या! ऐसा हो जाता था और ऐसा होने लगता कि कब बाहर निकल जाऊं।

हम अपने घरों में भी (इतना भयंकर नहीं तो भी) इसके सम ही प्रकार देखते हैं। हमारे बैठने उठने के

कमरों के हम बाहर गये कि नोकर बिलकुल बन्द कर डालते हैं। हम बाहर से आते ही किवाड़ खोल कर भीतर जाते हैं तो एक दम खराब घुटी हुई हवा नाक में घुसने से जी घबरा सा जाता है। ऐसा क्यों होता है और ऐसा न होने दें तो उससे फायदा ही क्या है? कितने ही मनुष्यों की ऐसी समझ है कि जब हम जगते हों और काम करते हों उस समय खूब शुद्ध हवा मिली कि काफी हो गई। रात में जब सोते हों तब शुद्ध और खुली हवा की आवश्यकता नहीं है, परन्तु यह भ्रम है। मेरे विचार में आरोग्य के लिये शुद्ध और विपुल हवा की सोते समय और भी अधिक आवश्यकता है। ऐसा होने पर सोने के कमरे के भीतर की और बाहर की हवा शुद्ध रखने की तजवीज क्यों न की जाय। कमरे के भीतर की हवा बाहर की हवा की ऐसी शुद्ध रखने के लिये दो बातें अवश्य होनी चाहिये। एक कमरे में शुद्ध वायु आने का मार्ग होना चाहिये और दूसरा दूषित हवा निकल जाने का, क्योंकि ये दोनों बातें एकही मार्ग से नहीं हो सकती। इसके लिये ऊंचे पर खुली हुई बारीक खिड़कियां या जालियां होनी चाहिये इसी भांति बिस्तरे के चारों ओर मोटे मोटे परदे न होने चाहिये। खिड़कियां और दरवाजों के परदे न होना चाहिये, मुँह पर ओढ़ कर सोना न चाहिए। गरज यह

कि जिन जिन बातों से रोगी की प्रकृति को धक्का पहुंचे या वह बिगड़ जाय उन उन बातों को न करना चाहिए। जिन खिड़कियों में होकर कमरे में हवा जाती हो वे जमीन से ऊंची होनी चाहिए। किसी हालत में जमीन से लगी हुई न होना चाहिए। कमरे की खराब हवा बाहर निकल जाने के लिये बनाई हुई खिड़कियां छत के पास होकर हमेशा खुली रहनी चाहिए, आवश्यकता के समय बंद होने में भी कोई हानि नहीं। परन्तु जहां एक कमरे में रात के समय दो तीन लोगों का सोना सम्भव हो वहा पर छत के पास की खिड़की दो तीन इंच खुली रहना ही चाहिए। जिस जगह बहुत से बच्चे सोते है वहां पर छत के पास की खिड़की अच्छी तरह खुली ही रखना चाहिए। जहां पर जमीन से लगी हुई खिड़कियां हैं वहां की जमीन में खिड़कियों से आने वाली हवा शीम (ठंढई) पैदा कर देती है। ऐसी शीमी हुई जमीन पर चलने से रोगी को सर्दी हो जाना बहुत सम्भव है। ग्रीष्म ऋतु में कमरे की सब खिड़कियां खुली रखने में कुछ हानि नहीं। सारांश यह है कि सोने के कमरे में और बीमार के कमरे में स्वच्छ और खेलती हुई हवा रखने के लिये बीमार के बदन पर हवा के झोंके न लगने पावें इसका विचार रख कर क्या क्या करना चाहिए ये सब अपनी बुद्धि से जहां तहां ठहरा लेना चाहिए और देख लेना चाहिए कि कहां से स्वच्छ हवा मिलेगी।

अपने सोने या बैठने के कमरे की हवा शुद्ध है या नहीं इसके जानने की रीति यह है कि प्रातःकाल उठते ही कमरे के बाहर जाओ और वहां थोड़ी देर ठहर कर फौरन कमरे में आओ आतेही जो खराब बास आवे तो जान लो यहां की हवा खराब है फिर वहां उठना बैठना न चाहिए, निदान वहां पर रोगी मनुष्य को न सुलाना चाहिए। कभी कभी हम बाग में काम करते हुए मालियों को देखते हैं उस वक्त हमें यह जान पड़ता है कि माली जितना ध्यान अपने पौधों का रखता है हम उतना भी ध्यान अपने बच्चों और बीमारों का कभी नहीं रखते। यदि कभी तुम स्वयं माली का काम करो तो सहज में तुम्हारे ध्यान में आ जायगा कि पौधे भी जीते नहीं रह सकते। जो उन्हें स्वच्छ हवा न मिले और थंडे झोंके बराबर उनपर आने लगें। कमरे में ज़मीन के पास खिड़कियां होने से भीतर की वायु पलटती नहीं है वेही खिड़कियां ऊंचे पर बना कर सदा खुली रखी जायँ तो कमरे की वायु सदा पलटती रहती है। बाहर बहुत थंड पड़ती है तब हम–कूंड़ी के पौधे कुम्हला जायँगे–इस डर से उन्हें घर के भीतर रखते हैं। कमरे में जमीन से लगी हुई खिड़की हुई या सिर्फ दरार हुई और कूंड़ी इसी के साम्हने रखदी तो इनमें होकर आते हुए हवा के थंडे झोंकों की सर्दी से उसके

पौधे मर जाते हैं। यह बात हम कई बार देखते हैं। जब पौधों का यह हाल है तब फिर बच्चों की और रोगियों की भला क्या दशा होती होगी? आप स्वयं इस बात को विचार देखिये कि कमरे में एकाध दरार यदि ऊंचे पर कहीं हुई तो उसमें से आने वाले झोंके सारे कमरे में फिरते हैं और सर्दी नहीं मालूम होती। परन्तु जो वही दरार जमीन के पास हुई तो उसमें होकर कमरे में जाने वाले झोकों से कमरे की हवा में हलचल न होने के कारण कमरा ठंडा और सीमासीमा घुटा हुआ सा मालूम होने लगेगा। इसलिये कृपा कर सोने के कमरे में छत के पास खिड़कियां बनाना चाहिये और उन्हें बराबर खुली रखना चाहिये। वे खुली नहीं रखी जातीं या इस तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता यह केवल आलस्य से होता है। सोने के कमरे में यदि दीपक जलता होगा तो वह, कमरे की छत की ओर खिड़की या दरार होगी तो अच्छा जलेगा; परन्तु वह खिड़की या दरार जमीन के पास होगी तो सारा कमरा धुआं से भर जायगा और दीपक की बू फैल जायगी। बू का एक साधारण नियम यह है कि जहां खिड़कियां नहीं हैं या खिड़खियां खोली नहीं जा सकतीं वहां (हवा आर पार नहीं हो सकने के कारण) सारी बू ऐसी निर्वात जगह पर छा जाती है। रसोई घर में कुछ तला जा रहा हो उस की बू जिस तरह

ऐसे निर्वात स्थान में होती है हवादार स्थान में नहीं होती। इतना ही क्यों, और स्थान की बू तलना बंद होते ही थोड़ी ही देर में मिट जाती है; परन्तु ऊपर कहे हुए निर्वात स्थान की बू बहुत देर तक बंद नही होती। यह अनुभव प्रतिदिन हर एक घर में होता है फिर भी बीमार मनुष्य को सोने के लिये यही कोठरी दी जाती है! बहुत से घरों में भाड़े देने के लिये छोटी छोटी कोठरिया बधाई जाती हैं और उन सब के दर्वाजे एकाध संकड़ी और अंधेरी गुम ऐसी गली में होते हैं। ऐसी गलियों में केवल दीपक जलाने की बू घंटो तक रहती है कोठरियों की रसोई के बघार और तलने की बू सदा बनी ही रहती है। इस पर भी जो कहीं पास ही शौचकूप भी हुआ तो फिर देखिये ही मत। ऐसी जगह यदि रोगी अच्छा भी हो तो कैसे! सार्वजनिक स्थान जैसे शफाखानों के रोगियों के वार्ड, पाठशाला के बच्चों के बैठने की जगह, नाटक-शाला, कचहरी आदि जहां बहुत से मनुष्य एकत्र होते हैं या सोते है वहां हवा को शुद्ध व स्वच्छ रखने की तजवीज करना बहुत जरूरी है। कुंदपन अंधेरा व संकुचित स्थान इत्यादि कारणों से जिस कोठरी में दो बच्चे भी नहीं सो सकते उसमें ४-८-१० सोने लगेंगे तो उनकी प्रकृति क्यों कर अच्छी रहेगी। इस ओर लोगों का लक्ष नहीं जाता। बच्चों के खाने, पीने, पहनने या पढ़ाने, लिखाने की ओर

मा बाप का लक्ष सहज में जितना जाता है यदि उतना ही या उसका बहुत कम भाग भी पाठशाला के कमरों के आरोग्य की ओर जायगा तो छोटे बच्चों के रोगों का रोग चाला जैसेः—छोटी माता, बड़ी माता, खुजली आंख का आना इत्यादि बहुत कुछ कम हो जायँगे, और जहां पर इस तरह लक्ष दिया जाता है वहां इस प्रकार के रोगों की ज्यादती नहीं पाई जाती। मिल, कारखाने, वर्कशाप आदि जहां अनेक लोग पेट के लिये मेहनत करते हैं वहां शुद्ध हवा मिलने के लिये कुछ तजवीज नहीं की गई है। इस कारण वहां के मजदूरों में बहुत रोग चाला है और मृत्यु की संख्यायें भी ज्यादा हैं। छोटे छोटे धंदे करने वाले जैसे तेली, तमोली, दर्जी इत्यादि जहां बैठ कर पेट भरने का धंदा करते हैं वह जगह बहुत करके मैली और संकड़ी गली में होती है। कारण कि गरीबी से जितने सस्ते किराये पर उन्हें जगह मिलती है उतना ही उन्हें सुभीता रहता है। वहां पर इस बात का विचार कौन करता है कि उनके नाक में बू जाती है उनकी आंखों को मैला मालूम होता है, मन में बुरा लगता है और इनके कमरों में जितनी चाहिये हवा नहीं है। पहले कहे मुआफिक १० फुट चौरस जगह मिल गई तो वह अपने बड़े भाग्य समझता है। बड़े बड़े शहरों में तो तहखानों में तक मनुष्य रहते हैं जहां पर महीनों के महीने प्रकाश नहीं पहुंचता

और हवा की बारीक से बारीक लहर भी नहीं मालूम होती। इस प्रकार की बद हवा में सदा रहने वाले मनुष्य यदि थोड़ी देर के लिये खुली हवा में आते हैं तो उन्हें प्रायः सर्दी हो जाती है। उन्हें औरों की अपेक्षा फुस-फुस के रोग भी (कफ, क्षय, दमा, खांसी) जल्दी हो जाते हैं। रहने के घरों का तो यह हाल है और खाने पीने की ओर दृष्टि की जाय तो उधर भी यही बात है। थंडा बासी खराब अन्न वह भी भर पेट नहीं मिलता तो फिर शक्ति आवे कहां से? इस पर ऐसा अन्नादि प्राप्त करने के लिये मेहनत देखो तो आठ आठ दस दस घंटे बराबर शारीरिक श्रम करना पड़ता है। अङ्ग पर कपड़े देखो तो एक फटी लंगोटी और बिना बांह की चींथी लटकती हुई अंगरखी। ऐसी स्थिति में ये लोग अल्पायु हो कर पटापट मरें तो आश्चर्य ही क्या है? थोड़ी देर को सर्व प्रकार का संकट भूलजाने का यदि कोई उनके पास इलाज है तो एक मात्र दारू! दारू के नशे में यह उसके अमल में जितनी मेहनत करना हुई उतनी करके अपना काम पूरा कर देना यही इनका नित्य का नियम है। मजदूर लोग जितना दारू पीते हैं उतना और कोई नहीं पीता। अतएव दारू पीने और अति मेहनत करने से उनका शरीर खोखला हो जाता है, नीति खराब होती जाती है, उन के हाथ से बड़े बड़े

अपराध हो जाते हैं और वे जल्दीही मर जाते हैं। इस बात की ओर उन के मालिकों का लक्ष कदाचित ही आता है। उनकी नीति में कहां ऐसा लिखा है कि मजदूरों के काम करने का स्थान स्वच्छ हवादार और प्रकाशमय होना चाहिये ? दाम दिये और काम ले लिया इतनाही उन्हें मालूम है और इसे ही वे अच्छा समझते हैं। उनकी इस थोड़ी बहुत मजदूरी के लिये मजदूर और मजदूरिनों को अपने तन मन आरोग्य और सुखादि पर पानी फेरना पड़ता है।

बड़े कीमती और तड़कभड़क के कपड़े पहन कर फिरनेवाले श्रीमानों ने उनके कपड़े सीनेवाले दर्जियों की गृहस्थिति का—घर की हालत का—विचार किया है क्या ? अच्छा इसे जाने दो उनके मालिक को ही क्या कुछ फायदा होता है ? कुछ नहीं। गंदी जगह में माल बनाने और इकट्ठा करने में उन्हें बू आती है। मजदूरों पर देख रेख रखने के लिये उन्हें स्वयं उनके पास रहना पड़ता है। इससे उनकी प्रकृति खराब हो जाती है और कुटुम्बियों को हानि पहुंचती है। मजदूरों की प्रकृति अच्छी न होने के कारण उनके हाथ से होने वाला काम अच्छा नहीं होता। इस तरह एक दो क्या सैकड़ों तरह से दोनों ओर की हानि होती है। साधारण तौर से यह समझ फैल गई है कि कारखाने में पानी कैसा ही हो

काम में कोई रुकावट नहीं होती; परन्तु यह भ्रम है। जैसा स्वच्छ पानी पीने के लिये अच्छा होता है वैसा ही स्वच्छ पानी अच्छा माल तैयार करने के लिये भी चाहिये। यूरोप के धनी लोग इस बात को अच्छी तरह समझ चुके हैं कि मजदूरों को स्वच्छ वायु, स्वच्छ पानी, निर्दोष घर और ताजा अन्नादि का अच्छा सुभीता मिलने और स्वच्छता से काम होने से हमारा ही फ़ायदा है।

इस मामले में मज़दूरों का कोई दोष नहीं है यह मैं नहीं कहता। जिन कारखानों में, काम करने के कमरों में शुद्ध हवा पहुंचने का मार्ग नहीं है वहां काम करने से बार बार बीमार हो जाते हैं और और स्थान पर नहीं तो यहां पर उन्हें शुद्ध वायु के फायदे समझ में आ जाते। परन्तु ऐसा न होकर उलटा थंड होती है, ऐसा कह कर खिड़की, दर्वाजे, दरार, छिद्र वगैरह जिधर उस कमरे में हों बन्द कर देते हैं। विशेष कर पास बैठ कर काम करने के जितने धन्दे हैं उनके करने वाले मनुष्य जैसे दर्ज़ी, चमार वगैरः ऐसी दूषित हवा में रात दिन रहते हैं और दिनोंदिन क्षयादिक रोगों से सूख कर अन्त में बेमौत मर जाते हैं। मज़दूरी कर पेट भरनेवाले मनुष्यों को सोचना चाहिए कि सुदृढ़ शरीर ही हमारा मूल धन है और उसे कायम रखने व

बढ़ाने के लिये हमें वहीं पर काम करना चाहिये, जहां स्वच्छ और विपुल हवा हो। उन्हें यह आपस में निश्चय कर लेना चाहिये कि शुद्ध हवा आरोग्य का मूल है।

दूषित हवा मे रात दिन रहने से मा, दाई मज़दूर और मज़दूरिनों की ज्ञानेन्द्रियें इतनी मन्द हो जाती हैं कि उन्हें इस बात का लक्ष भी नही रहता कि उनके बच्चे कहां सोते हैं? कहां बैठते हैं? कहां खेलते हैं? वह जगह स्वच्छ है या मैली। बच्चे जहां पड़े हैं, जहां खेलते हैं कुछ ख्याल नहीं है। यह आदत शिक्षा और विचार से दूर की जानी चाहिये।

अपने देश की पाठशाला का ही उदाहरण लीजिये—पाठशाला में जितने बच्चे बढ़ें उतना ही अच्छा, और इसीमें अपना भूषण है ऐसा मास्टर लोग समझते हैं। परन्तु क्लासों में लड़कों की ज्यादती हुई और यदि उसीके मुआफिक जो कमरे बड़े न किये गये और न पूर्ण वायु आने का प्रबन्ध हुआ तो उससे बच्चे बीमार हो जायँगे और आपस की छूत सारे गांव में रोगचाला फैल जायगा। यह बात मास्टर के ध्यान में नहीं आती। छोटी माता, बड़ी माता, आखें दुखना, खुजली इत्यादि रोगों के फैलने का कारण शाला में जाते हुये बच्चों में है। परन्तु इस बात को बच्चों के मा बाप भी कहां समझते हैं? गांव में माता का रोगचाला है। मैं अपने

बच्चे को पाठशाला में न भेजूंगा। अमुक के बच्चे को खुजली है, अमुक के बच्चे को छोटी माता है। इसलिये उन्हें आराम होने तक स्कूल में न आने दो वरना हमारे बच्चों में भी बीमारी फैल जायगी। नही तो हम अपने बच्चों को नहीं भेजेंगे ऐसे समझनेवाले और कहनेवाले कितने मनुष्य मिलते हैं? ये सब रोग छूत से फैलते हैं और योग्य उपायों से उनका प्रतिबन्ध हो सकता है— लोगों को इसका समझना आवश्यक है। माता एक ईश्वरेच्छा है यदि इलाज करेंगे तो माताजी रूस जायँगी इत्यादि बहस में पड़ कर कितने ही मनुष्य चुपचाप बैठ रहते हैं और योग्य इलाज नहीं करते। इससे न मालूम कितने बच्चे मृत्यु का ग्रास बनते होंगे और कितने काने, खोड़े, अन्धे होते होंगे।

रोगी को या अशक्त मनुष्य को जैसी शुद्ध हवा अवश्य होना चाहिए वैसी ही उनके शरीर की उष्णता कायम रखना भी आवश्यक है। अपने काम को अच्छी तरह जानने वाली और धर्म बुद्धि से अपना कर्तव्य पालन करने वाली नर्स अपने रोगी को कभी खुना (नङ्गेबदन) हुआ नहीं रहने देगी। उसके अङ्ग में उष्णता कायम रखने के लिये वह हमेशा तैयार रहेगी। निरोगी स्थिति में शारीरिक उष्णता जितनी जल्दी तैयार होती है अशक्तपन में उतनी जल्दी नहीं होती। इस कारण जो

उष्णता उत्पन्न हो उसका दुर्व्यय न होने देना नर्स का एक मुख्य कर्तव्य है। कितनीही बीमारियोंमें शारीरिक उष्णता का होना बंद हो जाने के कारण जीवन व्यापार दुर्बल होकर अन्त में मृत्यु हो जाती है। ऐसी बीमारी में रोगी को क्षण क्षण में बड़े ध्यान के साथ सभालना चाहिये। बार बार हाथ लगा कर हाथ पांवों को देखते रहना चाहिए कुछ थंडे मालूम हुए कि फौरन गर्म पानी से भरी हुई बोतलें हाथ पांव पर रखना चाहिये। गरम रूई से, कपड़े की तह से, या इंटों से उसके हाथ पांवों को सेंक कर गरम करना चाहिए। ऊन के मोजे पहना देने चाहिए। गरम गरम दूध पिलाना चाहिए। अंगीठी पास रखना चाहिए। गरज कि रोगी के शरीर में गरमी पैदा करने की तरकीबें करना चाहिये। ऐसे भयंकर समय में इन छोटी छोटी परन्तु बड़े महत्व की बातों के न करने से या लापरवाही से करने से रोगी हाथ से चला जाता है। नर्स बहुत अच्छी होगी तो वह अपने रोगी को समय के समय पथ्य देगी, वक्त वक्त पर औषध देगी और रात दिन जी तोड़ परिश्रम कर संभालेगी; परन्तु ऐन वक्त पर याने हाथ पैर थंडे पड़ने लगे हों उस समय रोगी को गरम बिस्तर में सुलाना और सेंकना न सूझ पड़ा तो रोगी मर जायगा और उसकी इतनी अर्से की की हुई मेहनत व्यर्थ हो जायगी। ऐसे उदाहरण

बार बार बारहों महीने हमारे देखने में आते हैं। यह बात केवल जाड़े की मौसम में ही होती हो सो नही है भर गर्मी में भी होती हैं। यह घातक शीत दिन के थंडे वक्त में होता है अर्थात् ऐन सुबुह पोहफटने के वक्त जब पेट खाली होता है दुख देता है। अशक्त मनुष्य को सबेरे की थंड जितनी बाधा पहुंचाती है उतनी श्याम की नहीं। क्योंकि सबेरे शरीर की ताकत स्वाभाविक कम होने के कारण आपही आप थंड नही दूर होती। सांझ का समय बहुत करके ज्वर का होता है। उस समय हाथ पांव और आंखे जलती रहती हैं। ऐसे रोगी प्रातःकाल में थंड से थरथरांय यह सहज है। ऐसा होने पर भी बहुत करके सभी नर्सों की आदत है कि रात हुई और रोगी के हाथ पांव सेंके, मोजे पहनाये आदि। परन्तु प्रातःकाल में जब इन उपायों की विशेष आवश्यकता है तब इससे बिलकुल उलटा करना। उस वक्त और और कामों के मारे उनका लक्ष ही इस ओर नहीं जाता। वास्तव में उनका ध्यान इधर होना चाहिए। कितनी ही बार रात में सोते वक्त रोगी के पांव गरम पानी से धोकर उसे सुला दिया जाता है ऐसी नर्सों की चाल है। इसमें उनका क्या हेतु होगा? जो कुछ हो; परन्तु वे जिस पानी को काम में लाती हैं वह कभी कभी ऐसा गरम

होता है कि एक बार भी जो वह पानी उनके पांव पर उलट जाय तो फिर रोगी के पांव की ओर देखे ही नहीं। ऐसे गरम पानी से नर्सों के हाथ क्यों नहीं जलते या जिस समय वह पैर धोती हैं उस समय उनका ध्यान कहाँ रहता है यह कहना कठिन है। इतना गरम पानी पैरों पर डालने से पगथलियों का रक्त मस्तक में चढ़ जाता है इसमें कुछ सन्देह नहीं। इतने गरम पानी से रोगी के पैरों में चौबीस घँटे आग सी फुका करती है। पावों पर जो पानी डाला जाय वह इतना गरम होना चाहिये जिसमें उँगली सहज ही डुबाई जा सके। अधिक गरम होने की कुछ ज़रूरत नहीं। कई जगह ऐसी चाल पाई जाती है कि पाव गरम करने के लिये खूब गरम पानी भरे हुए जस्त के डब्बों पर पैर रख सो जाना। परन्तु इन डब्बों को काम में लाना अयोग्य है क्योंकि एक तो वे एकदम बहुत गरम हो जाते हैं और ठंडे हो जाने पर पाँवों को बहुत शीतल लगते हैं। इनकी अपेक्षा रबर की गरम पानी की बोतलें अच्छी। परन्तु इन्हें काम में लाने में कभी कभी नर्सें हार खा जाती हैं। एक तो वे उसमें खूब गरम गरम पानी भरती हैं और दूसरे उसका मुख स्क्रू से अच्छी तरह बन्द नहीं कर पाती। परिणाम यह होता है कि थोड़ा थोड़ा पानी झर कर रात भर में रोगी का सारा बिछौना भीग कर तर हो जाता है।

ये गलती थोड़ा ध्यान देने और नियम से चलने से दूर की जा सकती है परन्तु इतना भी करनेवाली नर्सों का मिलना कठिन है। योग्य तजबीज़ से रोग की कमी कर देना बर्तमान सुश्रूषा का यही मुख्य उद्देश्य है।

सर्दी और खुली हवा इन दोनों शब्दों के सम्बन्ध में लोगों में बड़ी ही गैर समझ फैली हुई है। यह गैर समझ अशिक्षितों में ही हो सो नहीं है बहुत से सीखे सुधरे हुए मनुष्यों में भी पाई जाती है। एकाध कमरे की हवा शीतल होने के लिये उसमें की हवा खेलती हुई होना ही चाहिये, ऐसा कुछ नियम नहीं है और न यही कोई नियम है कि खेलती हुई हवा हो तो कमरे में थंडाई होना ही चाहिये। तो भी कमरे में कुन्द हवा है ऐसा मालूम होते ही नर्सें अंगीठियों को बाहर निकाल देती हैं और पास के थंडे कमरे के दर्वाजे खोल कर उसकी थंडी हवा रोगी के कमरे में एकदम आने देती हैं। किन्तु इतने मात्र से कमरे में शुद्ध हवा खेलती हुई नहीं हो जाती। उसको रोगी के कमरे की खिड़कियाँ खोल कर उसमें जलती हुई अंगीठी रहेगी तो कमरे की उष्णता भी बनी रहेगी और हवा ही खेलती हुई रहेगी। (अत्यन्त थंड और गर्मी के दिनों की बात ही जुदा है) परन्तु नर्सें इस बात को नहीं समझतीं। छोटे कमरों में सर्दी न पहुंचाकर वैसे ही शुद्ध और

विपुल हवा पहुंचा देना विशेष बुद्धिमानी और ध्यान का काम है। बड़े बड़े कमरों में याने ड्राइङ्गरूमों में शुद्ध हवा पैदा करने को इतनी कठिनता नहीं पड़ती।

खिड़कियों को खुली रखने के विरुद्ध हाय तोबा करनेवाली दाइयां बहुत बार कमरे में थंडे झोंके आने देती हुई पाई जाती हैं। और इस बात की खबरदारी रखती हुई नहीं देख पड़ती कि रोगी के अङ्ग पर तो कहीं थंडे झोंके नहीं लग रहे हैं। उनके मत में समाचार पूंछने आने जानेवालों के लिये रोगी के कमरे का दर्वाजा हमेशा खुला ही रहना चाहिये। नर्स यदि चतुर होगी तो पहले कमरे के दर्वाजे को बन्द कर फिर खिड़कियों को बन्द करेगी और खिड़कियां बन्द कर देने के बाद दर्वाजे को खोल देगी। ऐसा करने से रोगी के अङ्ग पर हवा के झोंके नही लगते। झोंके लगने से रोगी का रोग उलट आना सम्भव है। क्योंकि रोगी कभी पसीने में तर होता है। खिड़किया और दर्वाजा एक साथ खुले न रखना चाहिये और इन दोनों के बीच में रोगी का पलँग कभी न रखना चाहिये। जिस समय रोगी का शरीर गीले कपड़े से साफ किया जा रहा हो या खुला हुआ हो उस समय उसे खुली हुई खिड़की और खुले हुये दर्वाजे के बीच में न बैठने देना चाहिये। मतलब यह है कि दर्वाजा और खिड़की दोनों खुले न रक्खे जाने चाहिये।

यदि मूर्ख नर्स से पाला पड़ गया तो वह कमरे में खेलती हुई हवा रखने में बाधा देने लगती है जिससे माथा फिर जाने की बारी आ जाती है। ठंड के दिनों में जब हवा बहुत ठंडी होती है रोगी को बिना कुछ कहे घूमने देने से या उसके अङ्ग में गरम ऊन के कपड़े न पहनाने से उसका गला बैठ जाता है या नाक बहने लगता है यह दोष नर्स का है। उसे चाहिये कि वह ऐसे समय रोगी को बिछौने से न उठने की ताकीद करे। हास्पिटल के वार्डों से कभी कभी हम नर्स के मुख से सुनते हैं कि अमुक पलँग पर सोनेवाले को खासी हो जाती है, बुखार आ जाता है या शीत हो जाता है। इसका कारण यह है कि जो झोंके दर्वाजे से आते हैं वे सब पलँग पर जाते हैं और उस पर के रोगी को दुख पहुंचाते हैं। दर्वाजे से इतने झोंके क्यों आते हैं? और आते भी हैं तो रोगी के अङ्ग पर ही क्यों लगते हैं? वार्डों में प्रत्येक जगह परदे होते हैं फिर वे दर्वाजे और पलँग के बीच में क्यों नहीं आड़े लगाये जाते? या ठीक झोंकों के बीच में पलँग रक्खा गया तो वह उसकी हद से दूर क्यों नहीं किया गया? बात यह है कि ध्यान न लगाने वाली एकाध नर्स जाते हुए तो दर्वाजा खोल कर अन्दर चली जाती है परन्तु भीतर घुसते ही दर्वाजा बन्द कर देने की उसे याद नहीं रहती। इसी कारण उसे जब तक

अपनी भूल मालूम नहीं होती या वह स्वयं बाहर नहीं आ जाती तब तक दर्वाजा खुला रहता है। रोगी के कपड़े बदलते या पसीना पोंछते हुए किवाड़ खुले होने की उसे खबर नहीं रहती। परन्तु रोगी को खांसी या थरथ होने के साथ ही बकने लगती है कि "खिड़की खुली होने से रोगी को शीत हो गया।" जो इसने कमरे के दर्वाजे को खुला न रक्खा होता तो सिर्फ खिड़की के खुले रहने से कुछ हानि न होती। रोगी खुला हुआ बैठा हो उस समय दर्वाजे खोलने, खिड़की बन्द करने या कमरे की हवा साफ करने को कोई भी नहीं कहता ये केवल ध्यान न लगाने के लक्षण हैं।

दूसरी एक बात जो नर्स की समझ से भयङ्कर मालूम होती है वह यह है कि दिन की हवा से रात की हवा खराब होती है और रात में वही मिल भी सकती है। दिन की हवा मिलेगी कैसे? इसी सबब से नर्स बाहर की शुद्ध हवा की अपेक्षा बन्द किये हुए कमरों की कुन्द हवा को अच्छा समझती हैं। अतएव रात होते ही रोगी के कमरे के खिड़की और दर्वाजे बन्द कर देती हैं। यह दुर्गुण सर्वसामान्य है। इसका कारण क्या है सो नहीं कहा जा सकता। जितनी तरह की बीमारियां हैं, प्रायः उनमें $\frac{५०}{१००}$ खिड़कियां बन्द कर सोने से होती हैं

यदि हम यह किसी से कह दें तो उसे यकायक इस बात का विश्वास भी होगा या नहीं इसमें भी सन्देह ही है। सोने के कमरे की खिड़कियों के ऊपर का हिस्सा खोल कर सोने से बारहों महीने किसी को कुछ हानि नहीं होती। बड़े बड़े शहरों में दिन में मनुष्यों को काम (धन्धे) होने से हवा में धुआं वगैरः बहुत कुछ होते हैं। रात में सब ओर शान्ति होने से हवा शुद्ध और निर्मल होती है। अतएव रात में खिडकियां खोल कर सोना बड़ा हितकारी होता है। ऐसे स्थान पर दिन में खिड़किया बन्द रक्खें और रात में खुली रक्खें तो उन्हें मैं बुरा नही कहता। दिन में मिल वगैरः कारखानों से धुआ के गुब्बारे के गुब्बारे चिमनियों में से निकल कर हवा में मिलते हैं। रात के दस बजे से प्रातःकाल के साढ़े पाँच बजे तक मिल वगैरः कारखानों के बन्द रहने के कारण हवा में धुआं वगैरः हानिकारक पदार्थ नहीं मिलते और वह दिन की अपेक्षा शुद्ध रहती है। अतएव रात में खिड़कियां खुली रखने में फायदा ही है। परन्तु जो पासही गटर याने नादोना हो या शौचकूप की बू घर के पास से ही आती होतो खिड़कियों का बन्द कर देना मजबूरी से आवश्यक है। परन्तु बड़े बड़े शहरों में इस तरह की बू घर में या घर के आस पास रहने देना अच्छा नहीं है। दूसरे खिड़की बन्द करने का वक्त वह है जिस समय बेहद ठण्ड पड़ती हो।

कमरे में जितनी हवा आने को हो उतनी ही घर के बाहर से आनी चाहिये और शुद्ध आनी चाहिये। "दर्वाजे बन्द करने के लिये और खिड़कियां खुली रहने के लिये ही बनाये गये हैं" यह एक लोकोक्ति है। लोग इसके रहस्य को नहीं समझते। कितनी ही नर्सों की आदत होती है कि दर्वाजे खुले रखना और खिड़किया बन्द। दर्वाजे के खुले रहने से बाहर की बू कमरे में आती है। दर्वाजे में से आने वाली हवा जिस जिस ठौर से आती है वैसी वैसी हीं वह दूषित होती है। दर्वाजे में एकाध दिया जलता होगा तो उधर से आनेवाली हवा धुआं से भरी हुई होगी ही। इतना हीं नहीं दिये के योग से हवा का *आक्सीजन कम होता है। एक दिये में इतना आक्सीजन खर्च हो जाता है जितना सात मनुष्यों के लिये पूरा हो सकता है। सोने के कमरे के दर्वाजे के बाहर ही यदि रसोई घर, स्नान की मोरी या शौचकूप आदि हुये तो उधर से आने वाली हवा कितनी शुद्ध और ताज़ी होगी यह बात जिनकी उन्हें

---

* आक्सीजन एक प्रकार के वायु का नाम है। वह सब जगह मिलती है। उसी के योग से प्राण रक्षा होती है अतएव हिन्दी में उसे प्राणवायु कहते हैं। किसी भी पदार्थ के जलने के लिये प्राणवायु होना चाहिये वह $\frac{४}{१००}$ के प्रमाण से वायु मेंमौजद है।

ही देखना चाहिये। सोने के कमरे के जितने दर्वाजे होंगे उतने ही से उसमें इस प्रकार की बू आयेगी। इसलिये कमरे में एक ही दर्वाजा होना ठीक है।

बाहर की जितनी ही, कमरे की हवा भी शुद्ध ही होना चाहीए। अतएव पहिले तो दिया धुआं देनेलगे ऐसा न होने देना चाहिये। दिये की चिमनी से धुआं निकलने लगते ही यदि नीचे की जाली साफ करदी कि धुआं बंद हुवा। कही से भी दिये को स्वच्छ हवा मिली कि वह अच्छा जलने लगा। स्वच्छ हवा चिमनी के नीचे की ओर से ही पहुंच सकती है ऊपर की ओर से नही। ऐसी हालत में नीचे की जालियां बंद होगी तो दिया कैसे अच्छा जलेगा? इस बात को जान कर भी कितनी ही नर्सों का ध्यान इस ओर नहीं जाता। वे धुआं देने वाले लेम्पों को रोगी के कमरे में जलता हुआ रखदेती हैं। यही हाल अंगीठी का भी है। अंगीठी की जाली बंद हो गई तो कोयलों को ताजा हवा मिलने का रास्ता ही न रहा तिस पर भी जो अंगीठी के भीतर तली से कोयलों का ढंग कर दिया गया तो फिर देखिये मज़ा। जिधर देखो उधर धुआं ही धुआं। यह सिर्फ आलस्य और बेपरवाही का परिणाम है। ऐसा करने में किसी का यह अभिप्राय नहीं होता कि रोगी को त्रास हो। परन्तु कौन इतनी खट पट करे जाने भी दो थोडासा धुआं भी हुआ तो क्या?" ऐसा

कह कर एक ही ठिकाने चुप चाप बैठ रहने वाली नर्स बहुत हैं अतएव मुझे इस जगह जोर के साथ कहना पड़ता है कि नर्स का पहिला और मुख्य कर्तव्य यह है "कि रोगी को जितनी ज्यादा ताजी हवा पहुंचाई जासके पहुंचाना।" इसलिये कमरे के बाहर की ही हवा शुद्ध होना चाहिये ऐसा कुछ नहीं है। बल्कि कमरे की उन सब चीजों को जिनसे कमरे में बू फैलती हो कमरे से बहुत दूर कर देना चाहिये वरना सारे कमरे की वायु बिगड़ जायगी। इसलिये रोगी के सोने के कमरे में कोई ऐसी चीज न रहना चाहिये। कई जगह रोगी के कपड़े धोकर उसी के कमरे में एकाध डोर पर सुखा दिये हुये मिलते हैं यह बड़ी भूल है। क्योंकि कपड़े का सारा गीलापन हवा में मिल जाने से हवा में गीलापन आ जाता है और वही सांस के साथ रोगी के फुसफुस में चला जाता है। और उससे नुकसान होता है। इस बात को प्रत्येक मनुष्य विशेष कर नर्सें जानती हैं तो भी इस छोड़ देने जैसी व्यर्थ की जाती हुई बात की ओर भी कोई लक्ष ही नहीं देता। रोगी की अंगीठी पर उसका पथ्य न बनाना चाहिये और न रोगी के कमरे में गीलेकपड़े लटकानेचाहिये। इस बात को नम्रतापूर्वक मान लेने वाली नर्सें बहुत कम मिलती हैं। इतना ही नहीं कितनी ही को तो इस नियम का पालन करना करीब करीब असम्भव जान पड़ता है।

नर्स यदि ध्यान देकर काम करने वाली हुई तो रोगी के बिछौने से उठ कर जरा दूर हटते ही—उसके कमरे से बाहर जाने की राह न देख कर—बिछौने की चादर को हटा गादी तकिया वगैरः को ताज़ा हवा लगने देती हैं। गीले कपड़े टुवाल वगैरः कमरे के बाहर दूर पर एकाध खूंटी वगैरः पर सुखाती है। धोती या शरीर में पहननें की अंगरखी इन दोनों में से एक भी चीज़ जो थोड़ी भी गीली हुई या कभी धूप में न रक्खी गई या रोगी के कमरे में ही सूखने को रख दी गई तो उससे जो पानी की भाप निकलेगी। वह रोगी को कितना नुकसान पहुंचायेगी इसका विचार स्वयं वाचकों को करना चाहिये। अच्छे हट्टे कट्टे मनुष्य तक उनके ही श्वासोच्छ्वास से बिगड़ी हुई हवा के कमरे में ज्यादा देर खड़े नहीं रह सकते तो बीमार आदमी की तो बात उनसे भी गई बीती है। हवा के दोष दूर कर देने के लिये इतना ही पर्याप्त—काफी नहीं है कि रोगी के कमरे में ताजा और खूब हवा आने दी कि छुट्टी पाई। बीमार मनुष्य के मल मूत्रादि की बू भी उसके कमरे से बाहर कर देना चाहिये, नहीं तो उसी की बू से रोगी को बहुत तकलीफ होती है। मल मूत्रादि से निकलने वाली बू यदि रोगी के शरीर में फिर घुसी तो इससे रोगी के प्राण जाने का भय है। परन्तु साधारण तया मल

को रोगी के कमरे में कोई ज्यादा देर तक नहीं रहने देते। इससे इस बारे में ज्यादा कुछ कहने की आवश्यकता नहीं दिखाई देती सिर्फ इतना कह देना बस होगा कि पेशाब का भॉड़ा पलँग की चद्दर के किनारे की आड़ में कभी न रक्खा जाय। क्योंकि खास घरों में कभी कभी इस तरह की गलती होती हुई देख पड़ती है। पलँग के नीचे पेशाब का बर्तन रखने से वहां की हवा कितनी गन्धा जाती है इसका कभी तुम्हें अनुभव करने का मौका आवे तो तुम घबड़ा कर डर जावोगे। ढक्कन बिना का मूत्रपात्र कभी काम में न लाना चाहिये। उससे क्या हानि होती है इसकी खात्री तुम्हें ढक्कन को भीतर की ओर से देखने से हो जायगी। ढक्कन के भीतर की ओर दाग की तरह बू वाली भाप जमी हुई मिल जायगी। जब ढक्कन न होगा तब यह दुर्गन्ध फैलाने वाली भाप भला जायगी कहां?

मूत्रपात्र पर ढक्कन है इस विचार से उसे भरे का भरा एक दिन से दूसरे दिन के सुबह तक २४ घंटे पड़े रहने की आदत कभी न रखनी चाहिए। यदि कोई पूछे कि इसके कहने की क्या आवश्यकता है तो इसका उत्तर इतनाही है कि बहुतसी अच्छी अच्छी नर्सों के हाथ मे भी यह पाप होता हुआ देख पड़ता है। एक बार एक रोगी को दस्त लगे। वह दिन में दस दस दफे शौच जाने

लगा। हरबार वह शौच पात्र पर बैठा और शौच जाने के बाद उस पर ढक्कन लगा दिया गया। चौबीस घंटे में एक बार वह पात्र साफ करने को बाहर ले जाया करता था। इससे नर्स को दस दिन तक यह बात मालूम न हुई कि रोगी दिन में कितनी बार शौच जाता है। दिन भर ऐसे पात्र सोने के कमरे में रहने देना और उसमें गटर बना देना, पाखाना खोल देना एक ही बात है। शौचपात्र और उसका ढक्कन मेहतर ने स्वच्छ किया है या नहीं इस बात को हरबार नर्स को अपनी आंखों से देखना चाहिये। जो नर्सें यह कहती हैं कि "यह काम हमारा नहीं है इसमें हमारी इज्जत कम होती है।" वे नर्स का काम करने के लिये सर्वथा अयोग्य समझी जानी चाहिये। कुछ कुछ अङ्गरेज़ी नर्सें इतनी होशियार और विदुषियां मेरे देखने में आई हैं कि जो सौ दो सौ रुपये महीना तो सहज में ही कमा लें। परन्तु केवल इस विचार से कि परोपकार में अपने शरीर को लगा कर हमें अपना जन्म सफल करना चाहिये उन्होंने नर्स का धन्दा स्वीकार कर लिया है। इतना ही नहीं, रोगी का कमरा उसके रहने के योग्य होना चाहिये इस विचार के वशीभूत होकर रोगी के कमरे को अपने हाथों से धोते हुए मैंने उन्हें देखा है। नर्सों को अपने हाथों से कमरे को धोने की आवश्यकता

नही है। इतनी मेहनत करना व्यर्थ है। परन्तु इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे बाइयां नर्स के धन्धे की कितनी पात्र हैं और उसे किस खूबी से चला सकती हैं। उनका पहला विचार रोगी को सुख आराम पहुंचाने की ओर होता है और वे कैसे पहुंचाये जा सकते हैं इसी बात में सदा मग्न रहती हैं। अपने रोगी को अमुक चीज़ की आवश्यकता है और वह अमुक मनुष्य जायगा तो ला देगा। उस समय तक प्रतीक्षा करना, बाट देखना जरूरी है एसे विचार से स्वस्थ बैठे रहने वाली बाइयों को लाचारी के साथ नर्स के काम में अयोग्य समझना पड़ता है।

रोगी के उपयोग के लिये जो पात्र दिये जाँय वे स्वच्छ, चीनी मिट्टी के होने चाहिये। भीतर अच्छी पालिस किये हुए लकड़ी के बर्तन भी अच्छे है। इन बर्तनों को बीमार के कमरों में कभी न माँजना चाहिये न धोना चाहिये। उन्हें कमरे के बाहर ले जाकर मोरी पर माँज मूंज, धो धुआ, पोंछ पॉछ, साफ कर देने के बाद कमरे में लाना चाहिये। कितनों की आदत ऐसी होती हैं कि छोटे छोटे बरतनों को कमरे में बैठे बैठे वहीं धो डालते हैं यह खराब है। क्योंकि एक पात्र की बू दार चीजें दूसरे पात्र में भर देने के बाद उस पात्र को वहीं पलङ्ग के नीचे सरका देने से कमरे की

बू मिट नहीं जाती। यह रीति बहुत तकलीफ पहुंचाने वाली है इस बात को हर कोई मान लेगा। बड़े बड़े हास्पिटलों में तो रोगी के बरतन वार्डों में कभी धोने को दिये जाते ही नहीं। वे बहुत दूर पर एक नल के नीचे ले जाकर धोये जाते हैं और साफ होने के बाद फिर वार्डों में लाकर रक्खे जाते हैं।

औषधि से याने फिनाइल, गन्धक की धूनी, इत्यादि से कमरे की बू दूर करने की अपेक्षा बू वाले पदार्थों को ही वहाँ से दूर ले जाना बहुत ही अच्छा है। मेरे ख्याल में हवा साफ करने वाले सब द्रव्य बुरी बास वाले होते तो बहुत अच्छा होता। क्योंकि उसकी बू दूर करने के इरादे से तो लोक कमरे की खिड़कियों को खोलते और उसमें ताजा हवा आने देते और यह बड़ी अच्छी युक्ति हाथ आती।

प्रकरण २

नीरोग घर।

किसी भी घर के नीरोग रहने के लिये पांच बातें होना चाहिये :–

१ स्वच्छ वायु। २ स्वच्छ जल। ३ स्वच्छ पाखाना, नादोना मोरी वगैरः। ४ स्वच्छता। ५ पूर्ण प्रकाश।

इनके बिना घर में आरोग्य रहना असम्भव है। इनमें से जिस बात की जितनी कमी हो घर भी उतना ही दूषित समझना चाहिये। स्वच्छ हवा आने के लिये घर इस तरह का बना हुआ होना चाहिये कि उसके कोने कोने में बाहर की शुद्ध और स्वच्छ वायु पहुँच सके। घर बनाने वाले उस्ता और सिलावटों को यह बात मालूम ही नहीं होती, क्योंकि यह बात उनके ध्यान में ही नहीं आती। भाड़े के लिये जो मकान बनाये जाते हैं उनमें रहने वालों के आरोग्य की ओर घर का मालिक ध्यान ही क्यों देने लगा? क्योंकि

वह तो इस फिक्र में होता है कि सैकड़े लार बारह आने का व्याज क्यों कर मिल जाय। वह इस बात का विचार क्यों करने लगा कि दूषित घर में रह कर बीमार होने के कारण अपने भाड़ेतियों को डाक्टरों की कितनी फीस देनी पड़ती है। भाड़ेती अगर इस बात का निश्चय करलें कि खराब घर में रहना ही नहीं तो घर के मालिक की फौरन आखें खुल जायँगी और फौरन मकान सुधारा जायगा। बिलफैल तो ऐसी चाल पड़ी हुई है कि जिससे भाड़ा ज्यादा आवे वैसे ही ढङ्ग पर मकान बनाये जावें। एकाध घर में एक के बाद एक करके चार पांच आदमी मर जाते हैं तो भी लोग यह कह कर कि ईश्वर से किसी का जोर नही है उसी मकान में रहते हैं। मूर्ख मनुष्य अपनी बेहूदा समझ को नहीं छोड़ते। मैला वार्ड जैसे हास्पिटल के रोगियों के लिये खराब है वैसे ही खराब घर, घर में रहने वालों के लिये बुरा है। घर की हवा बुरी रहती है या क्या यह देख लेने के बाद कहा जा सकेगा कि रोग ने यहां सदा के लिये अपना घर बना लिया है या क्या?

क्या शहरों में और क्या गावों में चारों ओर से ताजी और शुद्ध हवा घरों में पहुंचने की तजवीज़ कर लेने पर, बहुत से रोग तो अपने डेरे डांड़े, अपने आप उठा ले जांयगे, इस बात का कोई विचार नहीं करता।

घर में ताज़ी हवा आने के लिये ही खिड़कियां बनाई जाती हैं परन्तु प्रत्येक शहर और प्रत्येक गाव में ऐसे भी सैकड़ों घर मिलते हैं जिनकी खिड़किया बर्षों तक नहीं खोली जातीं। कितनी ही जगह खिड़कियों में कांच जड़े हुए होते हैं और एकाध दूसरे तावदान खुले रक्खे जाते हैं। यह तावदान यदि खिड़की से ऊपर की ओर हुए तब तो ठीक और यदि खिड़की के नीचे की ओर हुए तो उनमें होकर ठंडे झोंके कमरे में निरन्तर आये बिना न रहेंगे।

इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव कर देखिये। छोटे छोटे घरों में छोटे छोटे कमरे होते हैं। सब घरों में एक या दो कमरे सोने के लिये नियत होने से घर के सब आदमी उसी में सोते हैं। इससे सहज भीड़ होती है और भीड़ होने से उस कमरे की हवा विशेष कर रात में खराब हो जाती है। उनमें बहुत सी खिड़कियां होंगी तो साफ़ हवा आ सकेगी। परन्तु बहुत से कोने कोचरे में हवा जाने का कोई मार्ग नहीं है। इससे वहां की खराब और बन्द हवा की बू घर भर में फैलती है। घरों में धूप जाने का मार्ग होना चाहिये परन्तु वह नहीं होने से घर में प्रकाश नही पहुंच सकता। बहुत से घरों में धोली दोपहरी में अन्धकार होता है। ऐसा होने का कारण किससे पूछा जाय? घर के मालिक को!

प्रायः वह मूर्ख होता है। ऐसे घरों में केवल तावदानों को ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर कर देने से ही बहुत कुछ भेद समझ में आ जायगा। ऊपर के झरोके शाम के वक्त घड़ी भर खुले रक्खे जांयगे तो थोड़ा बहुत प्रकाश मकान में पहुंच जायगा और इससे घर काम में लाने वालों को लाभ पहुंचायेगा। घरों में धूप जाय चाहे न भी जाय परन्तु काम में लाने के कपड़े जैसे ओढ़ना, बिछौना, कुर्ता वगैरः रोज़ थोड़ी बहुत देर धूप में रखने चाहिये। और खिड़की का आधा भाग खुला रखने की भी वैसे ही तजवीज करना चाहिये। जो घर तावदान वाले हैं उनके ऊपर के तावदान खुले रखना चाहिये। छोटे छोटे मकानों के कमरों में भीड़ की वजह से समझो चाहे अटसट चीज़ों के पड़े रहने से समझो बुरी हवा तीन चार फुट ऊंची होती है। इस कारण उसमें बैठने वाले या खड़े रहने वाले मनुष्यों को इसी हवा में श्वासोच्छ्वास करना पड़ता है। इस खराब हवा को कमरे से निकाल देने के सीधे उपाय यहां बताये जाते हैं :—

(१) छत के पास भीत में एक ईंटों की जाली बनवाना।

(२) खिड़की बनवाना।

(३) धुआं निकलने की चिमनी साफ रखना।

रोज़ रात में सोने के पहले खिड़की खोल देना चाहिए। खिड़की के ऊपर का आधा भाग खोलना चाहिए नीचे का नहीं। यह बात गांव गांव के लोग समझ जायँ ऐसी तजवीज़ करना चाहिए। विशेष कर स्कूल के मास्टरों को यह काम करना चाहिए। इतना सुधार यदि सब जगह हो जायगा तो जो फायदा इससे होगा वह सैकड़ों हास्पिटल और औषधालयों से नहीं हो सकेगा। खराब हवा से होनेवाले रोगों का प्रतिबन्ध हो सकने पर भी क्यों नहीं किया जाता यह समझ में नहीं आता।

अज्ञान और गरीब लोग जो खुली हवा आने में बाधा देते हैं इसका कारण यही है कि उनके ध्यान में खुली हवा ठण्ड पहुंचाने वाली जंचती है। परन्तु इस समझ को दूर करने के लिये विशेष यत्न करना आवश्यक है।

जैसे शुद्ध वायु आरोग्य के लिये आवश्यक है वैसे ही दूसरी आवश्यक वस्तु स्वच्छ जल है। शुद्ध ताजा और मीठा पानी बहुत जगह मिलता है परन्तु कितनी ही जगह मीठे पानी की विपुलता बहुत ही कम है और इसीसे वहा के मनुष्य खारा पानी काम में लाते हैं। पानी के खारेपन का आधार उस जमीन के क्षार पर अवलम्बित है। परन्तु और जगह की बावड़ी बेवरी या नल का पानी खराब होने का कारण शहर के मलमूत्रादि

बहा ले जाने वाली नालियां बहती हुई हैं या नालियों का बूदार पानी जमीन मे भरकर बेवरी आदि में भिरता है इस बात पर है। बहुत से बड़े बड़े शहरों में जहा तालाब से नल लाये गये हैं वहां पर पानी निर्मल और विपुल है। परन्तु नल के पानी का प्रचार पांच पचास वर्ष के इधर इधर ही हुआ है। इसके पहले बहुत जगह बेवरी का पानी पीने का ही रिवाज था। उस समय बेवरी का पानी हलका है या भारी इसके सिवाय पानी के गुण दोष कहा समझते थे? और यह भी कहां, मालूम था कि हलका किसे कहते हैं और भारी किसे? बहुत से बड़े बड़े बाड़ों में कच्चा शौचकूप है और पास ही पानी की बेवरी! ऐसी स्थिति में महामारी आदि रोग चाला फैले तो अचम्भा ही क्या है? जिस पानी में बू आती हो, जो बे स्वाद हो और जो देखने में स्फटिक की भाति स्वच्छ न हो उसे कभी न पीना चाहिए। इसी तरह सोने या बैठने के कमरे में खुले हुए बर्तन में पानी रखना ठीक नहीं है। क्योंकि दूषित वायु पानी में बहुत जल्दी मिल जाती है। इससे पानी बिगड़ जाता है और पीने करनेवाले को हानि पहुंचाता है। उसकी बू से कमरे की हवा बिगड़ती है और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न कर देती है। छोटे छोटे गावों की बेवरियों के पानी को शुद्ध करने का एक सहज उपाय है।

जो बेवरी का पानी बिगड़ जाय तो समझना चाहिए कि मलमूत्रादि पदार्थों का क्षार जमीन में होकर उसमें कहीं न कहीं से आता है। उसे बन्द करने के लिये बेवरी के मुँह के पास चारों ओर छः फुट चौड़ा और छः फुट लम्बा गड्ढा कर रेत निकाल देना चाहिए और उसमें नई साफ रेत कूट कूट भर देना चाहिए। ऐसा करने से उस मार्ग से बेवरी में कोई दूषित पदार्थ न जायँगे।

एकाध शहर में आप घूमेंगे तो आपको ऐसे भी घर मिल जायँगे कि घर का बदबूदार पानी घर का घर में भरता है। कोई जगह नारदाने वगैरः हैं तो कोई जगह नाममात्र को भी नहीं हैं, और जो हैं, उनमें भी कुछ न कुछ दोष मिलता है। ऐसे नारदाने आदि हुए तो क्या और न हुए तो क्या? इसका कारण यह है कि नारदाने, पायखाने, वगैरा कैसे बनवाने चाहिए, इस बात को बहुत ही कम मनुष्य समझते हैं। घर की मोरियों का बहाव सार्वजनिक नल में जा पहुँचे, इस प्रणाली से मोरियां बनाई जायँ तो यह कुछ भी न हो। सार्वजनिक नल यदि स्वच्छ न रक्खे गये या आधे स्वच्छ रक्खे गये तो उनके आसपास जो घर होंगे उनमें रोग वाला उत्पन्न होवेहीगा। यह बात सहसा किसी के ध्यान में न जाने क्यों नहीं आती? शहरों में ही इन खराब पनालों की तकलीफ नहीं है। छोटे गांवों के घरों में

तक इस तरह की तकलीफ उठाना पड़ती है। बल्कि मेरे विचार में तो गांवड़े के घरों में विशेष दुःख भोगना पड़ता है। क्योंकि गांवड़े के घरों की भ्यालों पर मोरले मूल में ही नहीं होते हैं। शहर के घरों में थोड़े बहुत मोरले होते हैं इससे उनमें स्वच्छ हवा खूब खेल सकती है। जैसी मोरले वाले घरों में स्वच्छ हवा हो सकती है वैसी उन घरों में नहीं हो सकती जिन में मोरले नहीं होते। गावड़े के घरों में पक्की फर्श नहीं होती। कच्ची जमीन गोबर से लीपी हुई होती है। शहरों में तक यही हाल है। यह नहीं कहा जा सकता कि फर्शवाले घर सौ में दश पांच भी हैं या नहीं। कच्ची जमीन को यदि बार बार साफ न किया जाय या न लीपा जाय तो उस पर जगह जगह खड्डे खोचरे हो जाते हैं और उनमें कूड़ा करकट जमा हो जाता है। घरों में मोरले न होने से सील होना सम्भव है। इतने से ही कुछ खराब घरों का वर्णन पूरा नहीं हो जाता। गांवड़ों में ही नहीं शहरों में तक गायों का ठान घर के घर में होता है। इससे गायों के गोबर और पेशाब की बू घर में ही फैलती है और सारे घर में दुर्गन्ध ही दुर्गन्ध होजाती है। कभी कभी घर के मनुष्यों के सोने का कमरा, ठान के पास या पाखाने के पास होता है।

कितने ही गांव पहाड़ के पास बसे हुए होते हैं इस कारण उसके घरों में सदा सीम और तरी रहती है। इसलिये वहां बुखार वगैरा रोग बार बार हो जाते हैं।

कितनेक मनुष्यों का ऐसा ख्याल है कि गांवड़े में रहने से स्वास्थ्य अच्छा होना ही चाहिए और यदि ऐसा न हो तो बड़ा आश्चर्य है। परन्तु ऐसा मानना भूल है। स्वास्थ्य के नियमों पर ध्यान नं दिया तो क्या शहर में और क्या गांवड़े में तबीयत बिगड़ेगी ही।

विद्वानों पर यह बड़े महत्व का कर्तव्य स्थित है कि वे घरों घर में आरोग्य के नियमों को समझा दें। शाला मास्टर, डाक्टर आदि सरकारी कर्मचारियों को चाहिए कि वे इस विषय पर बार बार वाद विवाद कर लोगों को इसके महत्व को समझा दें। थोड़े से ज्ञान के प्रचार करने से, बहुत ही थोड़े खर्च से, विशेष सामग्री लगते हुए भी आरोग्य और आराम ये दोनों साध्य हो सकेंगे। शाम के वक्त सूर्य अस्त होते ही एकाध ऊँची जगह से शहर के दृश्य को देखें तो दिखाई देगा कि कितने ही घरों के छपरों पर धुंधसी छा रही है। ये सब घर ओछे और एक मंजिले होते हैं। इनके आस पास सीम बहुत होने से इन पर धुंध छाई हुई होती है। धुंध इस बात का सबूत है कि हवा में नमी है। जो घर ऊँचे हवादार और खाली है उनके छप्परों पर धुंध नहीं पड़ती और यदि पड़ती

भी है तो बहुत ही पतली, थोड़ी ही देर में बिखर जाने वाली पड़ती है। उन मकानों का खराब पानी घर में भरने दिया नहीं होता घरों में से नालियों के जरिये से बहुत दूर निकाल दिया होता है। जहां पर धुन्ध ज्यादा होती है वहां की हवा में तरी होने से वहां विशेष कर बुखार, खांसी इत्यादि रोग होते हैं। इसलिये घरों के मोरले ऊँचे ऊँचे होकर छत भी ऊँची होना चाहिए और घर भी ऊँचे ऊँचे होने चाहिए। घर का सारा बूदार पानी मोरियों से नालियों में डालकर बाहर निकाल देना चाहिए। गाय भैंस का ठान, घोड़े का तबेला और कचरे की रोड़ी घर से बहुत दूर परे होना चाहिए। और वे इस प्रकार के और ऐसी जगह बनाने चाहिए कि सहज में धोये जा सकें और उनका पानी नालियों में होकर अपने आप बह जाय। याने इनकी बू घर में या घर के साम्हने न फैलने पावे। गांवड़ों में और कभी कभी बड़े बड़े शहरों में भी यह रीति देख पड़ती है कि घर के पास ही या आंगन में ही एक खड्डा खोद कर उसमें घर का सारा बदबूदार पानी नाली के जरिये से इकट्ठा कर दिया जाता है। उसे बारबार साफ नहीं करने से उसके पानी में बू आने लगती है। ये सब खड्डे मिट्टी से भर देने चाहिए या इनके नीचे के हिस्से में नल डाल कर पानी का अच्छा निकाल कर देना चाहिए। एक घड़ी भर भी कुदाली का

उपयोग किया जायगा तो इन खड्डों से पानी निकाला जा सकेगा। घरों के आसपास एकाध बूदार नाली हो तो उसके तल में नल लगा कर उस पर मिट्टी का भराव कर नाली को ढँक देना चाहिए।

बहुतों की ऐसी आदत है कि कूड़े करकट और गोबर को खात और कण्डों के लिये घर के पास ही जमा करते हैं। थोड़े से फायदे के लिये रात दिन बू देने वाली चीजों की बू सहन करने में उन्हें कुछ हानि नहीं मालूम होती। इस रीति से जो बीमारी होती है उससे आराम पाने में बहुत व्यय पड़ता है। गोबर की आय कुछ इतनी हो नहीं जाती। जब ऐसा है तब क्या यह बात अत्यन्त हितकर नहीं है कि बू को घर से बहुत दूर पर पहुंचा देना चाहिए। बीमारी से बचना यह भी एक प्रकार से धन की ही बचत है। यह सिद्धान्त ही है कि जहां दुर्गन्धि वहीं पर बीमारी। जिस घर में पैर रखते ही बू आती हो वहां पर घड़ी भर बैठने से भी कौनसा रोग कब आ दबावेगा यह कहा नहीं जा सकता। ऐसे घर में कभी पैर भी न रखना चाहिए। यदि वहां पर रहना ही पड़े तो सबसे पहले यह तलाश करना चाहिए कि बू किधर से आती है और क्यों आती है और इसके बाद दुर्गन्धि आने के कारणों को नष्ट करना चाहिए। दुर्गन्ध जब तक बिलकुल बन्द न हो जाय तब तक वहां

रहने का विचार भी मन में न आने देना चाहिए। 'जहां दुर्गन्धि वहां बीमारी' यद्यपि यह सिद्धान्त सत्य है तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि जहां दुर्गन्धि नाम मात्र को भी नहीं हो ऐसे घर सदा नीरोग ही रहते हैं। दुर्गन्धि दूर करने से बीमारी दूर हो जाती है या टल जाती है यह कोई बात नहीं है। परन्तु चाहिए यह कि जिन वस्तुओं से बू निकलती है वह वस्तु दूर की जानी चाहिए।

बड़े बड़े शहरों में नाना प्रकार के रोगों का फैलाव होता है उसका कारण यही है। घर में जहां तहां मोरी खड्डा और रोड़ी हो तो उसमें बीमारी आवे तो आश्चर्य ही क्या है? प्रत्येक शहर की नालियां, पानी के पुराव का स्थान और मार्ग स्वच्छ होंगे तो शहर की हवा का बिगड़ना बहुत ही कम सम्भव है। ऐसे निर्दोष शहर भी बहुत जगह देखे जाते हैं। ऐसा होने पर भी और और शहरों की अपेक्षा ऐसे कई एक शहरों में मृत्यु संख्या विशेष होजाती है। इसका कारण यह है कि सार्वजनिक नालियां, पानी या रास्ते कितने ही स्वच्छ क्यों न हों, जब तक घर घर में कूड़े कचरे के ढङ्ग पड़े रहने दिये जाते हैं तब तक शहर रोगी ही रहेगा। क्योंकि उनकी सारी बू जमीन में घुस जाती है या उनसे निकलनेवाली बू हवा में मिल कर घर की हवा पीने के पानी, कुएं

और खाने के अन्न को दूषित कर डालती है। ऐसा होने से शहर की सफाई कैसे ही अच्छी क्यों न हो रोग चाला और मृत्यु संख्या जितनी बढ़ी हुई होगी उतनी बढ़ी हुई रहेगी ही। कच्चे पाखाने और बदबूदार पानी की नालियां बन्द हुए सिवाय इस प्राण हानि से छुटकारा होना कठिन है। यह सुधार जहां जहां अमल में लाया गया है वहां के सब शहर खूब नीरोग हो चले हैं। कभी कभी ऐसे लोग भी मिलते हैं, जो कहते हैं कि यह सब सुधार किये गये तो भी कुछ फायदा न हुआ। परन्तु इसका उत्तर इतना ही है कि "बाबा अमुक काम न करो इतना कहने से तुम्हारा कर्तव्य पूरा नहीं होता। प्रत्येक को इस बात का ही विचार करना चाहिए कि अमुक एक करने का काम रह गया है और उसे करना चाहिए"।

गांवड़ों के घरों की मोरियों का पानी बहुत ही थोड़े खर्च में घर बाहर किया जा सकता है। सब मोरियों का पानी एक नाली में छोड़ कर वहां से उसे नल के जरिये दूर परे सहज में पहुंचा देना चाहिए।

स्वच्छता और आरोग्य सम्पादन करने में बड़ा भारी त्रास तो अधिकारी वर्ग से होता है। सत्ताधारी लोक यदि अज्ञान व अशिक्षित होंगे तो सार्वजनिक आरोग्यता की कल्पना भी उनके ध्यान में नहीं आ सकती। वे अपनी ही कमी को छुपाने के लिये बहुत से मनुष्यों की भूल को

देखी अनदेखी कर देते हैं। वास्तव में देखा जाय तो सार्वजनिक आरोग्य की जवाबदारी जिन पर है उन्हें स्वयं बड़ी सख्ती के साथ नीति पर दृढ़ रहना चाहिए। परन्तु ऐसा दृढ़ उनका चरित्र नहोने के कारण वे ही लोक-हित का घात करते हैं। दूसरा आम लोक अपने ही घर में या घर के आसपास बदबू फैला कर महल्ले की तन्दुरुस्ती को बिगाड़ते हैं इससे होता है। मैं अपने घर में बैठ कर जो कुछ चाहिए वह करता हूं ऐसा कह कर दूसरों को हानि पहुँचाने वाले शख्स को कानूनन् सजा (राज्य नियमानुसार दंड) होनी चाहिए। परन्तु इस तरह का कानून हिन्दुस्थान में कोई जगह है और कोई जगह नहीं। इसका कारण यह है कि जहां के अधिकारी स्वयं ऊँघने वाले हैं वहां पर वे होते हुए कानून को भी कैसे अमल में लायँगे? जहां पर इस कानून का अमल होता है वहां के गरीब आदमियों को इस विषय का ज्ञान नहीं है और उन्हें तकलीफ पहुँचाने वाले उनके से गरीब नहीं होते। इसलिये बिचारे उनका साम्हना करने की हिम्मत नहीं कर सकते। ऐसे मनुष्यों को आरोग्य के नियमों की शिक्षा देने का काम डाक्टरों और विद्याखाते वालों का है। कौन से घर रोगी हैं और कौन से घर निरोगी, गरीबों के रहने के लिये योग्य घर बनाने को क्या करना चाहिए इस बात को उस जगह के डाक्टर व कारीगर लोग जैसा कुछ कहेंगे

वैसा कोई नहीं कह सकेगा। किस घर में नियमित बीमारी रहती है। इस बात को उस गांव का डाक्टर जितनी अच्छी तरह कह सकता है उतना किसी और को तो मालूम होना सम्भव भी नहीं है। इसलिये म्यूनिसिपेलटी के बोर्ड में डाक्टर अवश्य होना ही चाहिए। उसे रोगी के घर की हालत मालूम होती है और घर को ठीक करने के लिये क्या करना चाहिये इसे भी वही कह सकता है। छोटे छोटे घरों में रोग चाला होने का कारण यह है कि उसमें कई आदमियों की भीड़ होती है। दस फुट चौड़ी और दस फुट लम्बी कोठड़ी में सारे कुटुम्ब के मनुष्यों का गुजर होने लगता है और एक कुटुम्ब में कभी कभी पांच पांच छः छः मनुष्य होते हैं। ऐसी कोठरियों में खिड़कियां खोल कर जो ताजी और स्वच्छ हवा आने का सुभीता कर दिया तो कुछ रोग चाला कम हो जायगा परन्तु बिलकुल नीरोग होने के लिये उनके सिवाय अलग ही बहुत से घर बनाने का मार्ग ही अच्छा है।

अपने बहुतसों के घरों में चौकोनी मोरियां बनाने की चाल पड़ी हुई है। ये चौकोनी मोरियां सब तरह खराब हैं। इनके कोनों में बदबू जम जाती है। उसे धोकर साफ कर देना बहुत कठिन है। तिसपर भी दिन भर में एक बार प्रातःकाल में ये धोयी जाती हैं। इसके बाद २४ घंटे तक जो बूदार चीजें मोरी में, पड़ती हैं उनकी

बू सारे घर भर में फैल जाती है। खिड़कियां बन्द रख घर का दर्वाजा खुले रखने की भी चाल लोगों में है। इससे घर में चारों ओर बूदार वायु फैल जाती है और ज्यों ज्यों मोरियों से बू निकलती रहती है घर में फैलती रहती है खिड़किया बन्द होने से बाहर निकल नहीं सकती। बहुत से पुराने घरों के जीने भीत में हैं। और उनमें ताज़ी हवा आने को खिड़कियां वगैरः नहीं होतीं। इससे मोरियों की बू भरी हुई जीने जैसी अंधेरी गुफा या गली में जमती रहती है। परन्तु आश्चर्य तो यह है कि इस ओर किसी का ध्यान भी नहीं जाता। मोरियों का बूदार पानी बाहर ले जाने के लिये जो नालियां बनाई जाती हैं कभी कभी वे इस तरह की बनादी जाती हैं कि आँगने से पोल तक ठेठ घर में से गई होती हैं। घरों में से नालियों का लेजाना अच्छा नहीं है। इससे बड़ा धोका होना सम्भव है। घर की सब नालियां घर के बाहर बंधवाना ठीक है। यह बात कहते ही सब लोग गर्दन हिलाने लगते हैं कि यह बात बड़े ही महत्व की है परन्तु इसीके मुआफिक़ अमल करने वाले बहुत थोड़े हैं। बहुत से रोग इसी कारण से होते हैं ऐसा समझने वाले उससे भी कम हैं। अपने घरों में बोदरी माता, बड़ी माता या आंख दुखने की बीमारी फैली हो उस समय पहले हमें यह सूझना चाहिये कि

"यह कहाँ से आई होना चाहिये?" जिन्हें यह बात सूझती भी है उनमें से बहुत से इस बात को न देखते हुये कि हमारा घर स्वच्छ भी है या नहीं—छूने से होने वाली बीमारी का पाप दूसरों के सिर डालते हैं। अमुक के घर में बच्चों की आंखें दुखती हैं और हमारा बच्चा वहां गया था इससे इसकी आंखें दुखने आगईं इत्यादि। अमुक गृहस्थ के बच्चों को माता निकल आई यह बात जानते ही हम कह उठते हैं कि उसने अपने बच्चों को टीका न दिलवाया इस तरह की बात हम दूसरे के विषय में विचारते हैं। हम इस बात की तलाश नहीं करते कि हमने अपने बच्चों के भी माता का टीका दिलवाया है या नहीं।

घर में स्वच्छ हवा आने के लिये काफी दर्वाजे और खिड़कियां हैं तो भी जबतक घर के भीतर और बाहर स्वच्छ हवा न रहेगी तबतक वैसी हवा आवेगी कहां से? घर बाहर की बदबू घर में न आने पावे इसलिये बन्द कर रक्खे हुये, खिड़कियां और दर्वाजे चारों ओर देख पड़ते हैं। धनवालो के गायों के थान, तबेला, गाड़ीखाना इत्यादि जितना घर के पास हो उतनी सुगमता रहती है दूर होने से कठिनता पड़ती है। सोने के कमरे की खिड़की के बाहर यदि रोड़ी हो तो फिर उसमें स्वच्छ हवा आवेगी कहां से? ऊपर कहे हुये

तबेले वगैरः जो लाचारी के दरजे से बिल्कुल घर के पास ही हो तो फिर यही उत्तम उपाय है कि उन्हें स्वच्छ रक्खा जावे और घर की सारी खिड़कियों को खुली रक्खी जावें। घर चाहे जहां क्यों न बनाया जाय यदि उसके भीतर और बाहर वास फैली हुई है तो घर के बाल बच्चों में बीमारी फैलना क्या आश्चर्यकारक है? बच्चों की प्रकृति को ठीक रखने योग्य आरोग्य के नियम प्रत्येक मां बाप को मालूम होते तो बच्चों की बहुत सी बीमारियां दूर हो जातीं और बहुत सी बन्द।

घर की हवा खराब करने के कारण गायों के थान, तबेले, रोड़ी वगैरः ही हैं और कुछ नहीं, ऐसा कुछ सिद्धान्त नहीं है। मैले कुचैले कपड़े, काली स्याह छत, भीतों की दरारें, सील, मैलापन, फटे हुए शतरञ्ज व गुदड़े इत्यादि चीजों से भी रोड़ी के जितनी ही घर की हवा खराब होती है। हम लोगों को इस बात का विचार करने की परिपाटी ही नहीं है कि घर की हवा कैसे स्वच्छ रखना। इस कारण जो कुछ बीमारी आती है उसे हम योंही मान बैठते हैं कि यह ईश्वर के सङ्केत से आई है अतएव मिट नहीं सकती, और शान्त होकर, बिना किसी प्रकार का उपाय किये हुये, चुपचाप भोगते रहते हैं। कुछ आदमी ऐसा समझते भी हैं कि किसी प्रकार के अमङ्गलपने से (अस्वच्छता कुपथ्य आदि से)

बीमारी आती है तो वे यह नहीं जानते कि इसे दूर कैसे करना चाहिये। घर चाहे कितना छोटा और जगह जगह से जुड़ा हुआ (दरार वाला) हो परन्तु साल भर में दो दफे भी जो भीतर बाहर चूना लेप दिया जायगा तो बहुत से रोग तो योंही दूर हो जायँगे।

घर में अंधेरा न होना चाहिये। जिन घरों में अंधेरा हो उन्हें बीमार घर समझना चाहिये। क्योंकि ऐसे घरों में हवा खराब होती है और उसकी बू निकल नहीं जाती। जहां प्रकाश नहीं होता वहां प्राण-वायु (आक्सीजन) कम होता है। इतना ही क्यों वहां बहुत सी बीमारियों का मूल जम जाता है। अंधेरे में रक्खे हुये पौधे पीले पड़ जाते हैं। अंधेरे में रहने वाले मनुष्य फीके पड़ जाते हैं परदे में रहने वाली स्त्रियां या नवीन तरुणियां भी निस्तेज और फीकी हो जाती हैं। इसका कारण यही अंधेरा है कि इसका विचार हम और भी करें।

हमारे घर नीरोग नहीं होते इसके मुख्य कारण तीन हैं। (१) घर की मालकिन रोज उठ कर इस बात को नहीं देखती कि घर में कहां वास आती है, कहां बिल हो रहे हैं और कहां जमीन खाड़ खड़ीली हो रही है इत्यादि (२) कैसा ही घर क्यों न हो रहने योग्य होने के लिये उसमें हवा और प्रकाश को आने का मार्ग

होना ही चाहिये इसका कोई विचार नहीं करता (३) एक एक कमरे में एक एक खिड़की हुई तो बहुत है यह भी भद्दी समझ है। कितने ही थण्डे मुल्कों में प्रत्येक घर में सोने और बैठने के कमरों में एक अंगीठी होती है और उस पर धुआं के निकास के लिये चिमनी होती है। अंगीठी पर की गरम हवा हलकी होकर ऊपर जाती है। उसे निकल जाने के लिये चिमनी होना ही चाहिये। यदि गरम हवा बाहर न जायगी तो ताजी और थण्डी हवा के कमरे में आने का मार्ग ही न रहेगा। चिमनी जो धुआं के काजल से बन्द हो गई हो तो उसे ऊपर की ऊपर साफ कर देना चाहिये। कमरे में हवा आने के लिये एकही खिड़की या दर्वाजा होगा तो कमरे में खेलती हुई हवा नहीं रह सकती। कई आदमी कमरे के दर्वाजों को यों सोचकर बन्द कर देते हैं कि बाहर की धूल आकर कमरे को न खराब कर दे; परन्तु ऐसा करना बुरा है। ऐसा करने से कमरा स्वच्छ न रह कर और भी ज्यादा खराब हो जाता है।

घर की मालकिन का सबसे पहिला काम यह देखना है कि घर का कूड़ा करकट निकाल कर इतना स्वच्छ किया गया है कि नहीं कि फूंक देने से भी अस्वच्छता न नजर आवे और सामान कपड़े लत्ते बर्तन

वगैरा इतने साफ हुए हैं कि नहीं कि देखते हुए भी मैले हों। यह सब उसे अपने हाथों से ही करना चाहिए ऐसा कुछ नियम नहीं है। नौकरों से ठीक वक्त पर ऐसा काम ले लेना चाहिए। बहुत सी स्त्रियों को सब काम अपने हाथ से करना ही अच्छा मालूम होता है। जहां पर सम्भव हो वहाँ पर अपना काम अपने हाथों से करना तो बहुत ही अच्छा है। बिलकुल काम न करने की अपेक्षा थोड़ा थोड़ा अपना काम आप करना बहुत अच्छा है। तुम काम न करो तो वह हो ही नहीं सकता जो ऐसा न हो तो तुमने अपना कर्तव्य पालन कर लिया जैसा ही हुआ समझो। तुम्हारे बाद में भी तुम्हारा नौकर ठीक वक्त पर काम करता रहेगा जो तुम्हें इतना यथार्थ विश्वास हो गया हो तो एक प्रकार से तुमने 'गृहिणी' का एक प्रकार का कर्तव्य निभाया कहा जायगा। हाथों से काम करने और नौकरों से काम लेने में कुछ विशेष फरक नहीं है। मुख्य बात तो यह है कि काम वक्त पर हो जाना चाहिए। तुम्हारी दृष्टि में 'गृहिणी' का यह काम तुच्छ जान पड़ता होगा। परन्तु इस बात को दूर रख देना चाहिए कि तुम्हें क्या जान पड़ता है और मुझे क्या। केवल परमेश्वर का हेतु क्या है उस ओर ध्यान देना चाहिए। निर्मलता रखने में क्या फायदा है या परमेश्वर की क्या इच्छा है यह देखा कि

बस हुआ। ईश्वर ने जो नियम बना दिये हैं उन्हें छोड़े कि हमें दण्ड मिलता है। स्वच्छ हवा में रहना छोड़ा कि बीमार पड़े फिर चाहे तुम राजमहलों में रहो या गरीब घर में। खराब हवा गरीबों को सताती है और धनवानों को नहीं ऐसा तो कोई नियम है ही नहीं। ऐसा होने पर भी लोग अपने घरों की हवा को स्वच्छ रखने का यत्न नहीं करते यह बड़े आश्चर्य की बात है। क्या यह अचंभे की बात नहीं है कि बार बार दुख भोगने पर भी आदमियों की आखें नहीं खुलतीं। प्लेग से दूषित घर हो, उसमें चूहे मरे पड़े हों और यदि वहां से मनुष्य निकल न जायँगे तो उन्हें प्लेग होवे ही गा। यह बात अनुभव से सिद्ध हो चुकी है। परन्तु बहुत से ऐसे मनुष्य मिलते हैं कि जो इस प्रकार का १२ वर्ष का प्लेग विषयक अनुभव हो जाने पर भी प्लेग से दूषित घर में रह कर भी सारे कुटुम्ब का नाश होने देते हैं। अनुभव का परिणाम उन पर औंधे घड़े पर पानी कासा होता है। हम लोगों में बीमारी होने पर उस पर विचार करने की रीति है। परन्तु उसके मिटने बाद इस बात को देखने वाले कोई नहीं हैं कि यह बीमारी फिर लौट कर न आवे या ऐसी बीमारी फिर न होने पावे इसके लिये क्या करना चाहिए।

"बीमारी अमुक घर से बाहर पांव ही नहीं रखती। घर भी छोटासा खूबसूरत है फिर ऐसा क्यों होता है ?" बार बार यह बात हम लोगों के मुंह से सुनते हैं। तलाश करने पर जान पड़ता है कि घर से जाने वाली सब नालियों की बास घर में ही फैलती है और वह भी इस दर्जे पर कि घर में अच्छी तरह बैठा नहीं जा सकता। विशेष तलाशी करने पर मालूम होता है कि नाली कहीं से फूटी हुई है और घर के सब दरवाजे खुले हैं और खिड़कियां बिलकुल बन्द ! ऐसी सूरत में बू को बाहर निकलने का मार्ग न होने से घर में फैल गई है। कोई कहता है कि रसोई के बर्तन बासी पानी में मांजे जाते हैं इससे लोक बीमार पड़ते हैं। किसी के विचार में बिछौने महीनों तक धूप में न रखने के कारण उस घर में बीमारी होती है। किसी का कहना है कि महीनों तक घर की फर्श को न धोने से बीमारी होती है। कोई कहता है मुद्दत तक—सालों साल भी—भीतों से जाले वगैरा नहीं निकाले जाने से घर खराब हो जाता है। कोई कहता है कि मकान की लिपाई पुताई तो होती ही नहीं फिर भला वह कैसे नीरोग रहे ? इस प्रकार घर के रोगी होने से सैकड़ों आदमी सैकड़ों कारण बतलाते हैं। और प्रायः वे हैं भी ठीक। खिड़कियां बन्द कर सो जाने बाद श्वासोच्छ्वास रुंध कर जीव

घबरासा जाय तो मनुष्य स्वयं उठ कर खिड़की खोलदे तब तो ठीक, नहीं तो दूसरों को इसका न कुछ दर्द होता है न कुछ याद । इसका कारण यह है कि लोगों को किवाड़ बन्द करना तो मालूम है परन्तु खिड़कियां खोलना उन्हें किसीने सिखाया ही नहीं है । यह बात कुछ बनावटी नहीं है। प्रत्येक आदमी के तजरबे में प्रतिदिन आने योग्य है। एक घर में एक बार छः आदमी हैरान होगये । इसका कारण यह था कि घरकी हवा विषैली होगई थी । कभी कभी ऐसा भी देखने में आता है कि अमुक घर ठंड में और गरमी में नीरोगी रहता है, बाकी के दिनों में रोगी । ऐसे अनुभव से कहा जाता है कि उसके बनाने में कुछ न कुछ गलती हुई है। परन्तु ऐसे अनुभव का फायदा कौन उठाता है? परमेश्वर जब भरपूर दंड देता है तब कहीं आंखें खुलती हैं। ईश्वर जब सिखाता है तब हम सीखते नहीं हैं। ईश्वर की सूचना का ठीक अर्थ समझ कर जो हम चलें तो बहुत से रोग तो अपने आप टल जायँ ।

मनुष्य को आरोग्यता के लिये ईश्वर ने कुछ नियम बना दिये हैं । उनको दृढ़ता के साथ पालने पर आरोग्य का दारोमदार है। फिर क्या होगा यह कहा नहीं जा सकता । तब उसकी जिम्मेवारी अपने माथे कौन ले, यह कहना तब सच्चा हुआ होता जब आरोग्य के नियम

बिलकुल ही न ठहराये जाते। और जो अपने बनाये हुए नियमो को आप ही तोड़ कर सृष्टिकर्ता जादूगर बन जायगा तो आरोग्य के नियम पालन करने की जिम्मेवरी हम पर रहेगी ही नही।

"भगवान करे वह जल्दी अच्छा हो जाय" ऐसे आशीर्वाद हम बार बार रोगी को देते हैं। परन्तु जो वह अच्छा नहीं हुआ तो वह कृत्य भी भगवान का ही है। रोगी मरने वाला होगा तो मरेगा और अच्छा होने का होगा तो अच्छा होगा। भगवान ही मारता है और भगवान ही जिलाता है। उसके बनाये हुए नियमों का उल्लङ्घन करोगे तो वह मारेगा और उन्हें पालोगे तो दीर्घजीवी करेगा। "परमेश्वर की इच्छा ही ऐसी थी। इसीसे अमुक मनुष्य मर गया।" ऐसे कहने वाले मनुष्य ईश्वर के नियमों को उल्लङ्घन करते हैं। आराम होना या मरना इन दोनों बातों का आधार ईश्वर के नियम पालने और तोड़ने पर है। और उन नियमों का ज्ञान प्राप्त करना तथा उनके अनुकूल चलना यह एक प्रकार से ईश्वरोपासना ही है।

आपके घर जैसे स्वच्छ हवा में है वैसे ही स्वच्छ हवा में नौकरों के घर भी हैं। किन्तु देख रेख पूरी पूरी न होने से कहो या उनकी बनावट अच्छी न होने से कहो या नौकरों के गैरअमल के कारण कहो कि उनकी

कोठरियों में ऐसी बुरी बास आती है कि वहां पर पांव भी नहीं रख सकते। इसी बू में रात दिन उठने बैठने से नौकरों के शरीर सुदृढ़ नहीं रहते। यह बात कुछ शहरों में ही नहीं होती गांवड़ों में भी ऐसा ही मिलता है। इससे बोदरी माता, बड़ी माता, प्लेग या हैजा आदि छूत की बीमारी गांव में फैली कि सबसे पहले गरीब लोग एकदम मरने लगते हैं। कई एक बीमारियां इतनी छूत वाली होती हैं कि सिर्फ बू से ही घर दबाती हैं। ऐसी हालत में जो घर छोटे हैं, जिनके खिड़कियां कम होती हैं और वे भी बन्द रहती हैं, घर के बाहर कचरा पड़ा होता है। पनालों में पेशाब की बू आती है, एक की एक कोठरी में ही खाना, पकाना, उठना, बैठना, सोना वगैरः होता है और वहीं तेल का दिया जलता है, इत्यादि दोषों से घर के सब आदमी एकाएक एकही रोग में मुब्तिला हों तो अचम्भा ही क्या है? नौकर लोग अपने घर को स्वच्छ रखने की ओर ध्यान देते तो उनमें की बहुतसी बीमारियां कम हो जातीं।

हमारे बड़े बूढ़ों के समय के घरों में और आजकल के घरों में जमीन आसमान का फरक है। उनके समय (प्राचीन समय) के घरों में खिड़की वगैरः कुछ नहीं है एक भीतर का दर्वाजा और एक पौल का। ये दोनों

दर्वाजे सदा खुले रहते थे। इन्हीं के सामने खुले बदन से बुड्ढियां बैठी हुई हैं। बाहर फिर सर्दी हो या गर्मी इसकी कुछ परवाह नहीं है। कोठरी के बाहर कहीं पर सड़ाबुसा अन्न पड़ा है, कहीं पर कूड़ा करकट पड़ा है, कहीं जलने की छोटी छोटी लकड़ियां पड़ी हैं कहीं पर मोरी के पानी का खाबड़ा भरा हुआ है। इस तरह बहुत तरह की बू आ रही है। ऐसा होने पर भी, उनकी अवस्था देखो तो कोई ७० वर्ष की है, कोई ८० वर्ष की। कोई कोई ९०, ९५ वर्ष की होकर मरी सुनी गई हैं। इस वक्त की ओर देखिये तो ५०, ६० वर्ष के होगये तो हट्ट हो गई। उस समय के ७० वर्ष के मनुष्यों में जो बल और जो शक्ति थी वह इस समय के ३५ वर्ष के जवानों में भी नहीं पाई जाती। पहले के मनुष्य इतने कड़कदार क्यों थे और अबके इतने नाजुक क्यों हैं? एक पीढ़ी इतनी दृढ़ क्यों थी और उसीकी सन्तति इतनी अशक्त क्यों है? कुटुम्ब के कुटुम्ब, जाति की जाति, राष्ट्र का राष्ट्र इतना अशक्त क्यों हो चला? इतना अशक्त क्यों हो चला यह निश्चय-पूर्वक बतला देना कठिन है; परन्तु इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि यह बात बहुत जगह देख पड़ती है। खा पीकर सुखी कहलाने वाले धनवान घरों के बच्चों को देखिये। प्रायः वे फीके, सूखे हुये, बावले, और फूले हुये मिलते हैं। उनकी शारीरिक और मानसिक स्थिति

इतनी खराब हुई होती है कि कुछ पूँछिये ही नहीं। ऐसा होने पर भी ऐसेही ऐसे बच्चों की शादियां बहुत कम उम्र में कर दी जाती हैं। दुनिया इसी में मग्न है। अतएव पीढ़ी दरपीढ़ी कमजोरी आती जाती है। हम कहां रहते हैं, क्या करते हैं, क्या खाते पीते हैं और इनका हमारी सन्तति पर क्या असर पड़ेगा इस बात की ओर किसी का ध्यान ही नहीं जाता। अपने दिल की तरङ्ग पूरी हुई कि बस सब हो गया।

क्षय की उत्पत्ति खराब हवा से होती है। विशेष कर मनुष्यों के गंदे रीति रिवाज से यह रोग जितना उठता है या फैलता है उतना और सब कारणों के इकट्ठा हो जाने पर भी नहीं। कितने ही आदमियों को—डाक्टर मण्डली तक को—यह बात सच नहीं मालूम होती। खराब अन्न या कम अन्न से तक क्षय होता है। कोठा बन्द होने की हालत में जुलाब देने की रीति है। और जब दस्त लगे हुये होते हैं तब दस्त बन्द करने के लिये अफीम जैसी औषधियां दी जाती हैं। परन्तु इन दोनों उपायों में यह बात नहीं पाई जाती कि पचन शक्ति को ठीक करने के लिये भी कुछ उपाय किया हो।

कई एक कुटुम्ब में क्षय रोग पीढ़ी से चला आया हुआ मिलता है। कई मनुष्य उसे 'अनिवार्य' न मिटने जैसा समझते हैं। यह बात बिलकुल सच है कि एकाध

कुटुम्ब में दो एक मनुष्य क्षय रोग से मर जाने पर उस कुटुम्ब के और और मनुष्यों का भी इस रोग का बलिदान हो जाना सम्भव है। परन्तु इसका कारण यह है कि उस कुटुम्ब की रीति भांति ही बड़ी खराब होना चाहिये। एकही बिछौने में सोना, एक दूसरे के बर्तनों को काम में लाना, आदमियों के झूठे बर्तनों में स्त्रियों का भोजन करना, कुटुम्ब के कुटुम्ब में ब्याह शादी कर लेना इत्यादि कारणों से एक के बाद एक करके बहुत से मनुष्य क्षय के भेट हो जाते हैं। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि क्षय रोग पीढ़ी जात और न मिटने योग्य है। हमने अपनी गंदी रीति भांति को छोड़ा कि क्षयरोग के संसर्ग का भय काफूर हुआ। एक घर के सब आदमियों ने ख़राब आम खूब डट कर खाये और वे सब बीमार होगये तो क्या यह कहा जायगा कि उनकी बीमारी पीढ़ी जात है? या छूत से पैदा हुई है? छूत का होने देना, न होने देना सर्वथा हमारे ही हाथ की बात है। क्षयरोग से जैसे अग्निमन्द होता है वैसे ही अग्निमान्द्य से और किसी कारण से अशक्त हुए मनुष्य को क्षयरोग का शीघ्र होजाना सम्भव है। अग्निमन्द होजाने के बहुत से कारण हैं परन्तु विशेष कर व्यसन, कसरत करना, रात दिन घर में बैठे रहना, खराब हवा में काम करना, खराब अन्न खाना आदि हैं।

घर के घर में ब्याह शादी करने की रीति बहोरे लोगों में बहुत है। उसमें सगे काका बाबा के बेटे बेटी का–बहन भाई का–विवाह हो सकता है। इससे नजदीक सम्बन्ध होना सम्भव ही नहीं है। यह चाल और भी जातियों में मिलती है परन्तु इस प्रमाण में नहीं। ऐसी चाल से घर के बहुत से मनुष्यों को एक ही बीमारी हो सकती है, विशेष कर क्षय जैसी। यह यद्यपि सही है तो भी केवल सम्बन्ध करने से ही क्षय जैसी बीमारी होती है सो नहीं है। बहोरों का ही उदाहरण लीजिए। उनमें कंठमाला, कफ, क्षय, संग्रहणी इत्यादि अनेक प्रकार क्षय के पाये जाते हैं। परन्तु यह बीमारियां विशेष कर स्त्रियों में ही क्यों होती हैं? पुरुषों में क्यों नहीं होती? और यदि पुरुषों में होती भी है तो बहुत ही कम क्यों होती है? इसका कारण यह है कि बहोरों के मकानात बड़ी गन्दी जगह में होते हैं। औरतें कभी घर से बाहर नहीं निकलतीं। घरों में स्वच्छ और ताजी हवा के आने का अकाल होता है। ऐसी हालत में उन्हें गर्भ की हालत में अचानचक क्षय (Consumption) होजाय या यक्ष्मा होजाय तो आश्चर्य क्या है? पुरुष अपने धंदे के पीछे दिन भर फिरते रहते हैं। उन्हें ताजी और स्वच्छ हवा मिलने के साथ ही साथ कसरत भी सहज में हो जाती है। इसीसे यदि स्त्रियों को क्षय हो तो भी उनका संसर्ग उन्हें विशेष दुःख नहीं पहुंचाता।

यह बात बड़े दुर्भाग्य की है कि हमारे देश में जन्म मरण की नोंध नियमित रीति से नहीं होती। परन्तु तलाशी करने पर जान पड़ता है कि नीरोग प्रान्तों में जैसे मृत्यु की संख्या कम है वैसे ही जन्म की संख्या भी कम है व रोगी प्रान्तों में मृत्यु की तादाद ज्यादा है तो जन्म संख्या भी विशेष है। इस पर से यह अनुमान किया जा सकता है कि रोगी प्रान्तों में आयुष्य की मर्यादा कम है। रोगी की स्थिति में जो बच्चे जन्म पाते हैं उनका पीछे क्या होता है इस बात को लिखने की अपेक्षा कल्पना करना ही अच्छा होगा। एकाध गांवड़े के किसान के बच्चे को देखिये। वह कैसा गोलमोल, तेजवाला, कसदार, दृढ़ दिखाई देता है और उसके साथ ही शहर के एकाध कारकुन के बच्चे को देखिये। वह आपको सूखे चम्मड़, टींट केसे हाथ पैर वाला, बैठी हुई छाती वाला, पेटल, कुबड़ा, फीके चेहरेदार बैठी आंखोंवाला, "च्याँ च्याँ" कर रात दिन रोता हुआ मिलेगा। एक सदा खुली हवा में पड़ा हुआ होता है और दूसरा सदा घर में माके कूल्हें (Buttocks) पर पड़ा हुआ मिलता है। (शहरों में ऐसे सैंकड़ों बच्चे मरते हैं तो अचंभा क्या है)? आरोग्य की दृष्टि से देखते हुए शहरों के बच्चे गांवों के बच्चों से निर्बल और अल्पायु हैं। ऐसे बच्चे हर साल सैकड़ों भी पैदा हुए तो वे किस काम के?

केवल स्मशान को भरने के हैं। गांवड़ों में पूरे पांच वर्ष के हो जाने पर $\frac{३०}{१००}$ बच्चे मरते हैं तो शहरों में पांच वर्ष की अवस्था होने से पहिले ही $\frac{५०}{१००}$ मर जाते हैं। और जो पांच वर्ष होजाने के बाद जीते हैं वे रोगी और दुर्बल होने से मृत्यु संख्या में बढ़ती करने में ही उपयोगी होते हैं।

यह बात कुछ हँसी में उड़ा देने की नहीं है, सबके विचार करने लायक बड़े महत्व की बात है। विचार करने पर जो नसीहत मिले उसका प्रचार कर उसके अनुकूल आचरण करने की सबको चेष्टा करना चाहिए।

घर की आरोग्यता का विचार करते हुए एक बात मुझे और सूझी है और जिसे हम प्रायः घरों में देखते हैं। वह यह है कि घर में हवा आने का एक ही मार्ग होता है। वह मार्ग प्रायः एकाध कमरे में होता है। घर का कोई मनुष्य बीमार हो जाता है तो उसे उसमें रखते हैं और कमरे की खिड़की भी अधखुली रक्खी जाती है और दर्वाजा भी कुछ खुला और कुछ बंद रक्खा जाता है। ऐसा करते हुए कोई क्या इस बात का भी विचार करते हैं कि रोगी को इससे कितने प्रकार से हानि पहुंचती होगी? ऐसा न कर घर और उसके आसपास की जगह को स्वच्छ और हवादार रक्खा जाय तो क्या बीमार को फायदा न होगा?

इस बात को बहुत कम मनुष्य जानते हैं कि संसर्ग किसे कहते हैं और छूत वाले रोग किसे? शीतला छूत वाली बीमारी है। एक रोगी के स्पर्श से दूसरे को हो जाती है। इससे उसके रोगी को बिछौने में सुला कर ओढ़ना उढ़ा देते हैं और उसके कमरे में जलती हुई अंगीठी रख कर दर्वाजे और खिड़कियों को बन्द कर देते हैं यह रीति पुराने समय से चली आई है। ऐसी हालत में कमरे की हवा बुरी तरह बिगड़ जाती है। कोई मनुष्य वहां गया कि विषैली हवा उसको खबर लिये बिना नहीं छोड़ती। दिनों दिन विद्या का प्रचार होता जाता है इससे यह बेवकूफी भी कम हो चली है। अब शीतला के रोगी को दुलाई से न ढक कर पतली चादर उढ़ाने लगे हैं। और उसके कमरे की खिड़कियों को भी खुला रखने की भी रीति चल निकली है। अतएव पहिले का सा शीतला का जोर भी नहीं रहा। रोगी को छूते ही रोग उड़ कर लग जाता है ऐसे विचार से आज कल के लोग अपना बचाव करने के लिये रोगी को एक ओर डाल कर उसको पास से दूर हो जाते हैं। इससे इस रोगी की जैसी शुश्रूषा होना चाहिए नहीं होती। यही क्यों उलटी उसकी बेदरकारी होती है। बिचारे को प्यास लगी होती है तो कोई पानी पिलाने के लिये भी उसके पास नहीं फटकता। प्लेग की बीमारी की ऐसी

ही हालत होने से बेपरवाही और निर्दयता के कारण सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं। प्लेग के बीमारों को ध्यान देकर सँभाला जाय तो $\frac{३०}{१००}$ बच सकते हैं। यह बात अनुभव सिद्ध है।

छूतवाले रोगियों को सँभालने से या उनकी शुश्रूषा करने से ही छूत तकलीफ नहीं देती। थोड़ी सी होशियारी रखने से इसका कोई डर नहीं रहता और रोगी के प्राण बचाये जा सकते हैं। सच्ची और इमानदार नर्स का काम यही है कि वह स्वच्छता रक्खे, ताजी और विपुल हवा के लिये खिड़कियाँ व दर्वाजों को खुला रक्खे, ठीक वक्त पर औषधि दे पथ्य दे इत्यादि और जिस रीति से रोगी को आराम हो वही करे तथा उसकी रक्षा करे। अन्तःकरण में रोगी की फिक्र रखने और उसकी ध्यान पूर्वक शुश्रूषा करने से ही अपना भी बचाव हो सकता है रोग कोई कुत्ता बिल्ली जैसा जानवर तो है ही नहीं। स्वच्छता और मैलापन की तरह रोग भी एक प्रकार की शरीर की अवस्था है और वह अपनी ताबेदारी में रह सकता है। या यों कहो कि हम अपने शरीर को जिस स्थिति में ला रखते हैं उसी स्थिति का नाम रोग पड़ गया है। रोग की यदि कोई स्वतन्त्र सत्ता होती तो एक प्रकार के रोग से दूसरे प्रकार का रोग न उत्पन्न होता।

कुत्ते से बिल्ली नहीं उत्पन्न होती। एक घर में खूब सील हुई या एक कमरे में बहुत भीड़ हुई तो उनसे अनेक प्रकार के बुखार और गरमी पैदा होती है। और वही भीड़ जो ज्यादा ज्यादा होती गई तो वही बुखार या गरमी विषमय स्वरूप धारण कर लेते हैं। भीड़ को कम किया और कमरे में या घर में खूब स्वच्छ हवा को आने दिया तो ये सब रोग अपने आप न कुछ से हो जाते हैं। इस तरह से रोगों का विचार किया जायगा तो उनका उपाय भी योग्य हो सकेगा।

साधारण समझ ऐसी है कि बच्चों को कुछ कुछ बीमारी हो (जैसे शीतला छोटी माता, खांसी धांसी अछ बड़ा Chickin Pax इत्यादि) तो वह कभी कहीं न कहीं से आई हुई होना चाहिए। इसके सिवाय कोई गति नहीं है। अब मैं पूछता हूं कि बच्चों को यह आई ही क्यों? आप कहेंगे कि बच्चों में बच्चे खेलते हैं, मदरसों में एक ही जगह बैठते हैं। वहां पर एक बच्चे को माता निकली हो तो दूसरे को निकल आना सहज है—वाजबी है। परन्तु पहिले ही बालक को माता निकली सो क्यों? अच्छा दूसरों के बच्चों को माता निकली तो तुम्हारे बच्चे को भी निकलना ही चाहिए ऐसा कहां लिखा हुआ है?

घर के घर में ही आरोग्य रक्षा कैसे हो सकती है इस बात के जो नियम हैं वे तुम्हें पसन्द होंगे और

उन्हें तुम विश्वास पूर्वक पालन करोगे तो तुम्हारा घर नीरोगी ही रहेगा। स्वच्छता रखना, ताजी हवा आने देना, भीतों पर चूना पोतना, ऐसे ऐसे साधारण नियमों का पालन करने से ही वे बीमारियां कदाचित् होगी ही नहीं जिन्हें तुम बाल बीमारी कहते और अनिवार्य हो समझते हो।

प्रकरण ३ ।

फुटकर व्यवस्था ।

नर्स ने बहुत से काम अच्छे किये और जो एक बात पर ध्यान नहीं दिया तो उसकी सारी मेहनत का व्यर्थ चला जाना सम्भव है। वह बात यह है। उसे इस बात की खबर रखना चाहिये कि जो छोटी बड़ी बातें उसके सामने की जाती हैं वे सब उसके पीठ फेर बाद भी वैसे ही ठीक समय पर अच्छी व्यवस्था से की जाती हैं या नहीं। और उसे इस बात की तजवीज करने देना चाहिये कि वह वैसे ही हों। नर्स या घर का मनुष्य कितना ही मुस्तैद और फिक्र रखने वाला क्यों न हो कोई २४ घंटे तक तो बीमार के सिरहाने बैठा ही नहीं रह सकता और न बैठे रहने की आवश्यकता ही है।

वह अपनी परवाह न कर या और काम धन्दे को भूल कर चौबीस घंटे रोगी के पास का पास बना रहेगा तो सम्भव है कि याद न रहने से किसी छोटी सी बात के न करने की चूक कर बैठे। ऐसा होने से निन्दा होकर बदनामी उसके पल्ले पड़ेगी। दूसरी नर्स जो पहिली जितनी होशियार नहीं है परन्तु फुटकर बातों की ओर ध्यान देती है तो वह इतने ही से नाम कमा लेती है और स्वतंत्र रहती है। क्योंकि इसके रोगी की जितनी फिक्र रक्खी जायगी उतनी पहिली के रोगी की नहीं।

ऐसी बारीक बातें व्यवहार से और ध्यान से ही करने की हैं वे सिखाई नहीं जातीं। नर्सिंग (शुश्रूषा) एक बार सिखाई जायगी परन्तु और और व्यवस्था करने का ज्ञान उनके (नर्सों के) दिमाग़ में मूल से ही होना चाहिये। इसके सिवाय प्रत्येक रोगी की और उसके आस पास की स्थिति भी सदा एक सी रहती हो यह कुछ नियम नहीं है। इसलिये अपने पीछे से रोगी की व्यवस्था कैसी रहती है और कैसी रहना चाहिये? इस बात का पूरा पूरा विचार नर्स को करना चाहिये। वह हो तब खिड़कियां खोल देनी चाहिये उसके पीछे से बन्द करदें तो कोई हानि नहीं है। काम चलही जायगा ऐसा विचार ठीक नहीं है। परन्तु मौज तो यह है कि यह बहुत कम नर्सों को सूझता है। यदि किसी को सूझता

भी है तो उसका परिणाम यही होता है कि ईमान से काम करनेवाले को दम मारने को भी विश्रान्ति नहीं मिलती। क्योंकि उसे कोई छुट्टी नहीं देता। बीमार मनुष्य के कमरे में कोई अनजान आदमी भूल से चला गया और उस वक्त बीमार की आंखें लगी हुई हुईं तो वह बीमार एकदम चमक कर उठ बैठता है और फिर उसे नींद नहीं आती। एक बार नींद गई कि गई। यह बात सच है कि कोई मनुष्य—फिर वह घर का हो या बाहर का—इस विचार से रोगी के कमरे में नहीं जाता कि उसकी नींद उड़ जाय, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि जाने का बुरा परिणाम रोगी पर हुये बिना नहीं रह सकता। उसे मालूम होता है कि आपने कुछ भूल की और उसके ध्यान में तक नहीं आती। परन्तु नर्स को चाहिये कि दिन में या रात में बाहर जाते वक्त इस बात का बन्दोबस्त करके बाहर जावे कि रोगी के कमरे में कोई जाने न पावे।

रोगी के कमरे की खिड़कियां सदा खुली रहना चाहिये और दर्वाजे बन्द। "रोगी की फिक्र रखना इस बात में खिड़कियों को खुला रखने का ही नहीं, मकान को ठीक रखने का भी समावेश है।" यह बात सहसा अच्छी तरह ध्यान में न आने से कमरे की खिड़कियां और दर्वाजे दोनों खुले छोड़ दिये जाते हैं। इससे रोगी के बदन पर हवा के ठंडे झोंके लगने लगते हैं। बहुत दिनों तक खाली पड़े हुये और सिर्फ

रङ्ग से रँगे हुये कमरे भी रोगी के लिये ठीक नहीं हैं। रोगी के कमरे की टाड़े किवाड़ वगैरः भी साफ रहना चाहिये ऐसा न हो कि वे बहुत दिनों तक साफ न किये जायँ। यदि साफ न किये जायँगे तो कमरे की हवा का बिगड़ जाना सम्भव है। कमरे की ही क्या? घर भर की हवा दूषित हो सकती है। नर्सों का ध्यान सहसा इस बात की ओर नहीं जाता। वे तो सिर्फ खिड़कियों को खुला रखना जानती हैं। नया रङ्ग किये हुये कमरे बन्द रहने से सर्वथा स्वच्छ नहीं रहते उनमें महीनों तक रँग की बू आती रहती है। वहां पर रोगी को रखने से पहिले, उनकी खिड़कियों को खुली रखना चाहिये। देखने में यह बात चाहे जैसी तुच्छ हो परन्तु इस पर ध्यान देना नर्स का काम है। जिसके खिड़की दर्वाजे बन्द रक्खे हों ऐसे कमरे में पैर रखते ही कुछ महीनों के बाद भी रङ्ग की बू आवे तो इसमें क्या आश्चर्य है? क्योंकि बू को जाने का मार्ग रहा था कहां?

रोगी को कौनसे समाचार सुनाने चाहिये और कौनसे नहीं, कौनसे पत्र, तार आदि देना चाहिये और कौनसे नहीं, तथा उससे किसको मिलने देना चाहिये और किसको नहीं; इन इन बातों का विचार नर्स को करना चाहिये और इस बात की भी पूरी तजवीज कर देना चाहिये कि उसके पीछे से भी उसके आज्ञा के अनुसार सब काम होवे। बीमार आदमी के

कमरे में पूछे बिना एकदम आने का क्या कारण ? उसके कमरे का दर्वाजा सदा बन्द रहेगा तो बिना परवानगी के कोई आ ही कैसे सकेगा ? कोई भीतर से दर्वाजा खोलेगा तो बाहर का आदमी भीतर जायगा।

यह बात सच है कि एक नर्स इन बातों को नहीं कर सकती कि वही रोगी को सँभाले, वही दर्वाजों को खोले बन्द करे, वही लोगों के समाचार कहे और उनका जवाब दे, और वही अपने खाने के वक्त को भी साधे। परन्तु उसके बाद में जो मनुष्य उसके कामों की जिम्मेवरी अपने ऊपर लें उन्हें इन सब बातों की ओर ध्यान देना चाहिये। इन सब बातों को अकेली नर्स ही क्यों न करले ? तो यह कहा जायगा कि ऐसा होना असम्भव है। असम्भव होने पर भी जो कोई नर्स हाथ डालेगी तो हर एक काम को दौड़ भाग में करने लगेगी और इस दौड़ भाग का रोगी के मन पर बुरा असर होगा। यदि नर्स को इस बात का पूरा विश्वास हो कि मैं इन सब कामों को अच्छी तरह कर सकती हूं तो वह बात ही न्यारी है।

अमुक जगह से चिट्ठीपत्री का जवाब आने वाला है सो अमुक दिन आ जायगा। बीमार आदमी को ऐसी ऐसी बातें याद रहती हैं। उसे ऐसे ऐसे सन्देह हुआ करते हैं कि अमुक गृहस्थ मुझसे मिलने को आयगा तब

नर्स उसे भीतर आने देगी या नहीं, मेरी चिट्ठियां लादेगी या नहीं इत्यादि। परन्तु नर्स को चाहिये कि वह रोगी को ऐसी ऐसी चिन्ता करने का मौका ही न आने दे। उसे स्वयं ऐसे फुटकर मामलों का पहिले ही इन्तजाम कर देना चाहिये। रोगी यदि चल फिर सकता हो और कुछ काम भी कर सकता हो तो उसे उन उन कामों को कर देना अच्छा है।

यदि तुम (नर्स) कहीं बाहर जाने वाली हो तो तुम्हें पहले ही से अपने रोगी को कह जाना चाहिये कि तुम फिर कब आओगी, कितने दिनों में आओगी या कितनी देर में आओगी।

कितने ही मनुष्यों का मत है कि "रोगी को इस बात के कहने की कोई जरूरत नहीं है कि तुम अमुक दिन या इतने बजे बाहर जानेवाली हो। क्योंकि इससे उसका ध्यान इधर खिंच जाने से तकलीफ होने का डर है"। परन्तु यह ठीक नहीं है। तुम्हारा जब जब बाहर जाना बिलकुल जरूरी है। और किसी काम के लिये नहीं तो तुम्हें अपनी प्रकृति के सुधार के लिये ही बाहर जाना चाहिये। थोड़ी देर के लिये ही जाना चाहिये। परन्तु स्मरण रहे कि तुम्हारे रोगी को यह बात मालूम होना चाहिये। यह बात तुम्हें चाहिये कि उसे पहले ही कहदो। यदि तुम बिना कहे चली जाओगी और उसे पीछे से मालूम

होगा तो उसको इस बात का सन्देह होने लगेगा कि जो काम तुम पर आधार रखते हैं वे तुम्हारे पीछे से ठीक वक्त पर ठीक ठीक होंगे या नहीं। यह शङ्का झूठी नहीं है, $\frac{९०}{१००}$ केसों में ठीक हो जाती है। बाहर जाते वक्त रोगी से न कहने में रोगी को यह न मालूम होगा कि तुम लौट कर कब आओगी। और जिस वक्त जो काम करने का होगा उसकी ओर दुर्लक्ष होगा। न रोगी किसी से उस काम को करा सकेगा न स्वयं करने की कुछ तजवीज करेगा।

प्रायः हमारे सुनने में आता है कि नर्स या डाकृरनी के अपनी जगह पर न होने से ऐसी ऐसी खराबी हो गई या रोगी बेमौत मर गया इत्यादि। इसका एक उदाहरण देना अनुचित न होगा। एक रईस थे। उनकी बहिन गर्भवती थी। उसके प्रसव के लिये और बाद में भी शुश्रूषा करने के लिये एक डाकृरनी रक्खी गई। वह रात दिन उसके पास रहने लगी। प्रसूत होने के बाद अठारह दिन तक अच्छी तरह काम चला। बच्चा भी अच्छा था और बच्चे की मां भी। उन्नीसवें दिन प्रातःकाल में डाकृरनी जरूरी काम से थोड़ी देर के लिये बाहर चली गई। जिस वक्त वह गई बच्चे की मां सो रही थी इससे रोज के मुआफिक पूँछ कर न जासकी। नर्स को वहां

बिठा जाना उसे न सूझा। पीछे से बच्चे की मां जगी और मोरी पर जाने को उठ कर चली। एकदम चक्कर आये और गिर कर मर गई। यह बात हो जायगी ऐसा किसी के ध्यान में भी न था। इसका सारा दोष डाकृरनी के माथे पड़ा। लोग कहने लगे कि "डाकृरनी खास तौर पर जब बाईजी के लिये ही रक्खी गई थी तो वह छोड़ कर गई ही कैसे? वह अपनी जगह पर रहती तो ऐसा न होने पाता"। ऐसी ऐसी बातें दुनिया के मुंह से क्यों निकलती हैं यह नहीं जान पड़ता? रात दिन एकही आदमी एकही जगह पर निरन्तर कैसे बैठा रह सकता है। उसे हाथ मुंह धोने को, खाने पीने को तो कभी दूर जाना ही पड़ता है। कभी कभी बहुत जरूरी काम आ जाने से एकदम बाहर जाना पड़ता है। हमारे विचार में बाहर जाना कोई बुराई की बात नहीं है परन्तु अपने काम का ठीक ठीक बन्दोबस्त न कर चला जाना वास्तव में दोष की बात है।

सायङ्काल होते ही दिया बत्ती करने की जैसी आदत पड़ गई है वैसीही आदत इसकी भी होना चाहिये। बाहर जाने से पहले ठीक ठीक काम हो जाने का पक्का बन्दोबस्त करदें; परन्तु बहुतसों को इस बात का विचार ही नहीं रहता। बड़े बड़े दवाखानों में जहां (एक नर्स के ताबे बहुत से रोगी होते हैं) ऐसी छोटी सी बात की

ओर भी, जो कुछ भी लापरवाही हो गई तो उसका बड़ा भयङ्कर परिणाम हो सकता है। जिसकी कल्पना करना हम अपने पढ़ने वालों पर ही छोड़ते हैं। खास उनके घरों में भी उतना बुरा परिणाम नहीं निकल सकता। एक नया उदाहरण लें। किसी मनुष्य को भ्रम रोग है उसके कमरे में डोरी, चाकू या उस्तरा वगैरः न रहना चाहिये। यदि रह गया तो रोगी नर्स की आंख बचा कर फांसी न खालेगा या गला न काटलेगा इसकी क्या खातिरी ? इस तरह की लापरवाही होने से आत्महत्या कर लेने के बहुत से उदाहरण मिलते हैं।

अपने घर पर हो या सार्वजनिक दवाखानों में हो, नर्स को या जिसकी देखरेख में रोगी हो उसे, इस प्रकार की तजवीज करना चाहिये, कि रोगी के लिये जो जो किया जाना ठीक हो सो सो सब बराबर होता रहे। हर एक बात मैं ही करूंगी कह कर स्वस्थ बैठ रहना ठीक नहीं है। यदि ऐसा होगा तो उसके पीछे से ग़लती हुई ही समझना चाहिये। यदि बाहर जाना ही हो तो रोगी के संभालने की पूरी पूरी तजवीज करके ही जाना चाहिये। बिल्ली को चोरी से दूध पीते जान पड़ता है कि मेरी आंखें बन्द हैं त्यों सारे जहान की आँखें बन्द हैं। वैसे नर्स का यह काम नहीं है कि वह यों समझ

ले कि मैं स्वस्थ हूं तो संसार में सब जगह स्वस्थता ही स्वस्थता है। हम अपना काम छोड़ कर बाहर चले जावें और पीछे से कुछ गड़बड़ हो जावे तो वह दोष हमारा है या रोगी का? हम अपनी जगह पर न हों तो क्या रोगी प्राण छोड़ने के लिये हमारा रास्ता देखेगा? अमुक बात न कर सकी या फलां गलती के हो जाने से मेरा बीमार मर गया इत्यादि बातों का पीछे से करना अच्छी नर्स का काम नहीं है। ऐसी गलती हो जाने के बाद तो सिर्फ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि फिर से वैसी गलती न होने पावे।

मेरे विचार में बहुत ही कम ऐसे स्त्री या पुरुष हैं कि जो इस बात को समझते हों कि जवाबदारी कहते किसे हैं और उसे पालना क्योंकर चाहिए। इसीसे छोटे छोटे अपघातों से लेकर बड़े बड़े भयङ्कर परिणामों तक ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं जो इस तरह के अनजानपन से हुए हैं। हम प्रायः समाचारपत्रों में पढ़ते हैं कि छोटीसी बात की ओर ध्यान न देने से अमुक बड़ा भारी दारू का कारखाना भभक गया, अमुक कोयले की खान जल उठी, या अमुक वाष्पयन्त्र टूट गया और हजारों आदमी मर गये। गञ्जी के चौकीदार ने तम्बाखू पी और बिना ठंडी किये चिलम को यों ही औंधी कर दी इससे गंजी की गंजी जल गई। बड़े बड़े

घरों में आग जा लगी या गांव जल कर खाक होगया। ऐसी ऐसी बातें क्या हम रोज नहीं सुनते हैं ? रसोई घर में बघार का तेल जल उठा और छपरे में आग जा लगी। ऐसी ऐसी बातें क्या दुनिया में कम होती हैं ? इन सब बातों का कारण यही है कि लोगों को अपनी जिम्मेवरी का ज्ञान नही है और यदि है भी तो वे इस बात को नहीं जानते कि उसे पूरा क्योंकर करें।

बड़ी बड़ी जिम्मेवरी का उदाहरण दिया। अब एक और प्रकार की जिम्मेवरी का जिक्र करें। एक बीमार को पागलपन की लहर उठी और उसने डाक्टर के या नर्स के सामने ही अपने शरीर को जला डाला या आत्महत्या करली। ऐसी हालत में किसी का भी दोष नहीं है कह कर चुप हो रहने की चाल पड़ी हुई है। क्योंकि अपघात किसी को कह कर तो आता नहीं है। परन्तु इस बात को कोई भी कबूल कर लेगा कि थोड़ी सी भी होशियारी से काम लिया तो अपघात दूर किया जा सकता है। काम सिर्फ इतना ही है उस उसको अपनी जिम्मेवरी समझ रखना चाहिए।

अपनी जिम्मेवरी को पूरा पूरा निभाने में हरएक बात अपने हाथ से ही करना चाहिए ऐसा कुछ नियम नहीं है। अपनी देखरेख में सब कुछ हो जाय इतनी

याद रखना चाहिए। अपने कर्तव्य कर्म में कुछ बाधा नहीं आती या कोई विघ्न नहीं करता इतना देखा कि बस हुआ। जिन पर छोटे बच्चों की या बीमारों की जिम्मेवरी है उन्हें अपने कर्तव्य को खूब समझ रखना चाहिए।

एक जहाज के कप्तान के लिये यह बहुत ही जरूरी है कि वह इस बात को ख़ूब जाने कि उसे अपने खलासियों को कैसा हुक्म देना चाहिए और उस हुक्म की तामील किस तरह होती है इस पर निगाह रक्खे। इसी तरह प्रत्येक गृहिणी को यह बात बहुत अच्छी तरह मालूम होना चाहिए कि बच्चों को किस प्रकार शिक्षा देनी चाहिए, उनका चरित्र कैसा बनाना चाहिए और ठीक वक्त पर नौकरों से कैसा काम लेना चाहिये। जो हुक्म मानना जानते हैं वे हुक्म करना भी अच्छी तरह जानते हैं। हम लोग हुक्म पालना ही नहीं जानते फिर देना कहां से जानेंगे?

बड़े बच्चे उनकी मां को या उनके मास्टर को खूब मदद दे सकते हैं। कभी कभी हम देखते हैं कि मास्टर कहीं बाहर जाने पर एकाध लड़का सारे क्लास को ठीय व्यवस्था के साथ चलाता है। शाला मास्टर को जैसी जल्दी यह बात मालूम होती है वैसी ही यदि माओं को भी हो जाय तो वे अपने छोटे बच्चों को अकेला न

छोड़ कर बड़े बच्चों के सुपुर्द किये बिना न रहेंगी। यदि वे ऐसा करेंगी तो जो छोटे बच्चे गरम पानी से या दिये से या गरम दूध से जल जाते हैं सो बन्द हो जायगा। पांच वर्ष के बच्चे उनसे छोटे बच्चों की ऐसी सम्हाल रखते हैं कि वैसी सम्हाल स्वयं उनकी माओं से नहीं रक्खी जाती। कितनी ही डाक्टरनियों और नर्सों को ऐसा घमंड होता है कि हमारे बिना फलां काम हो ही नहीं सकता क्योंकि हमारे जैसा होशियार शायद ही कोई मिलेगा। और वे अपनी युक्तियों को या रीति भांति को लोगों को नहीं बतलातीं। यह बड़ी भूल है। जो इस बात की आशा रखती हों कि हमारे पीछे से भी हमारा काम अच्छी तरह चले उन्हें चाहिए कि हर एक काम अपनी एवज काम करने वाले को अच्छी तरह बता देवें। अच्छी तरह बतला देने से ही हम अपनी जिम्मेवरी दूसरे के माथे डाल सकते हैं। चोरी रखने से—अच्छी तरह नहीं बतलाने से—काम अच्छा नहीं होता।

प्रकरण ४।

कलबलाहट या शोरोगुल।

बीमार मनुष्य के पास गड़बड़ या शोरोगुल होने से उसे तकलीफ होती है। कानों को तकलीफ दे या कर्कश आवाज हो उसकी तो बात ही न्यारी है वरना इस तकलीफ का आधार धीमी या भारी आवाज पर नहीं है। मामूली बातों से भी उसे तकलीफ होती हो सो नहीं है; परन्तु उसके पास बैठ कर दांताकचकच करना उसे अच्छा नहीं मालूम होता। उसके सामने ही व्यर्थ की कानाफुसफुस करना उसे ठीक नहीं मालूम होता। कानाफुसफुस करने वाले फिर चाहे घर के हों या जान पहिचान के, उसे उन पर बहुत चिढ़ छूटती है। उसे शङ्का होती है कि ये सब मेरी बीमारी की ही बातें कर

रहे हैं। जिस बीमार के मस्तिष्क (Brain) में किसी प्रकार के आघात (Accident) से चोट पहुंची हो या धक्का लगा हो उसे बिलकुल धीमी आवाज से भी तकलीफ होती है। इसके सिवाय और प्रकार के रोगियों को एकदम से हुई आवाज सुनार को खटखट या धीमे गाढ़े रोने की आवाज वगैरः दुखदाई होती है। और जिस आवाज से बीमार की नींद उड़ जाय वह उसे कभी नहीं अच्छी मालूम होती। उससे वह संतप्त हो जाता है। इतना ही नहीं कभी कभी इस सन्ताप का परिणाम बड़ा ही भयङ्कर निकलता है। रात दिन समानभाव से होने वाली आवाज से भी वैसा त्रास नहीं होता फिर वह आवाज कितनी ही भारी क्यों न हो।

रोगी को यदि नींद आ रही हो तो उसे जगाना न चाहिये न उसकी नींद उड़ने देना चाहिये। यह नियम बहुत अच्छा है और प्रत्येक अच्छी नर्स को उसे पालना चाहिये। एक बार उड़ जाने के बाद फिर बीमार को नींद नहीं आती। चार घंटे सो लेने बाद मनुष्य को फिर नींद आ सकती है; परन्तु आखें लगते ही यदि किसी ने बीमार को उठा दिया तो फिर उसे नींद आती नहीं है। इसका कारण क्या है सो कहा नहीं जा सकता। परन्तु है यह बात बिलकुल सच। दुःख से दुःख बढ़ता है और भूलने से कम होता है। नींद आने से यदि कुछ

भी आराम मालूम होता हो तो नींद के समय बिल्कुल शान्ति रहना चाहिये।

नींद न आने से जो आवाज बीमार को कर्कश मालूम होती थी वही आवाज नींद आ जाने के बाद वैसी त्रास देने वाली नहीं जान पड़ती! सोये हुये रोगियों को जगाने का कारण भी यही है। नींद को इतना महत्व देने का भी यही कारण है। शुरू ही रात में अगर किसी ने बीमार की नींद को उड़ा दिया तो फिर रात भर उसे नींद न आना सम्भव है। तन्दुरुस्त आदमियों को दिन में सो जाने से रात में नींद नहीं आती परन्तु बीमार मनुष्य की बात ही जुदी है। वह जितना सोवेगा उतनी ही उसे नींद आवेगी।

बीमार की नींद उड़ गई हो तो अच्छी नर्स को चाहिये कि वह गरम पानी से बीमार के पैरों को सेंके या बीमार के पैर दाबे। बीमार को त्रास न पहुंचे इस तरकीब से वक्त पर औषधि पानी दे। और मीठी मीठी बातों से रोगी को धीरज बँधा कर नींद लाने का यत्न करे। बीमार को त्रास होगा इस विचार से यदि बीमार के पैरों को गरम रखने की कुछ तजवीज न की तो प्रातःकाल में उसके पैर ठिठर जायँगे। ऐसे मौके पर यह कहने वाली नर्स कि बीमार को त्रास न होने पावे इस लिये मैंने उसके पैरों को गरम पानी से नहीं धोये या

मोजे नहीं पहनाये—निकम्मी और बेपरवाह समझी जायगी चाहे फिर वह कैसी ही होशियार क्यों न हो।

कभी कभी डाक्टर लोग भी रोगी के कमरे में जाने से पहले या रोगी के देख कर आने बाद उसके कमरे के बाहर बहुत देर तक खड़े खड़े बातें किया करते हैं इससे रोगी को दुःख होता है। डाक्टर आये हैं यह बात मालूम होने बाद रोगी पल पल में उनके अपने पास आने की बाट देखता है। इससे ज्यों ज्यों देर होती जाती है त्यों त्यों रोगी की बेचैनी बढ़ती जाती है। देख कर जाने बाद बाहर की घुसपुस सुनने से उसे शङ्का होती है और वह समझता है कि मेरी ही बात की जा रही है। रोगी यदि शान्त स्वभाव, सुशील और विचारवान होगा तब तो वह उस ओर ध्यान न देकर और ही कुछ करने लगेगा परन्तु मेरे विचार में डाक्टरों की ये दोनों बातें ठीक नहीं हैं। क्योंकि इनसे रोगी को त्रास होता है और उसका श्रम कम न होकर दूना हो जाता है। कुछ घंटे के लिये उसका चैन उड़ जाता है। कमरे के कमरे में खड़े रह कर कानों में बातें करना और भी बुरा है। क्योंकि रोगी का लक्ष उधर गये बिना रह ही नहीं सकता। खटाखट बूट बजाते हुए चलना या चोर की तरह दम रोक कर चलना ठीक नहीं है इससे बीमार को दुःख होता है। हलके पैरों से होशियारी के

साथ चलना चाहिये। डाक्टर और रोगी के सम्बन्धियों में घुस पुस होते रहने से रोगी के चेहरे पर कैसी उतावली बढ़ती जाती है जो देखने से ही जानी जा सकती है। प्रत्येक नर्स को अपने रोगी के चेहरे पर होनेवाले फेर-फार उनके मतलब और सबबों को समझ लेने पर लक्ष देना चाहिए। ऐसी घुसपुस से बीमार को गुस्सा चढ़ आता है और ताप बढ़ जाता है, कभी कभी भ्रम तक हो जाता है। एकाध समय जीव पर धक्का लगने से रोगी मर तक जाता है। यदि रोगी पर आपरेशन का प्रयोग करना हो और ऐसे वक्त डाक्टर दूसरों के साथ घुसपुस करने लगे तो रोगी बहुत ही घबड़ा जाता है डाक्टर को चाहिए कि वह प्रसन्नता के साथ रोगी के सामने ही बड़ी शान्ति से बात चीत करें कि अस्त्र चिकित्सा से बीमारी अवश्य मिट जायगी और रोगी की खातरी करदे। इससे रोगी न घबड़ावेगा और आपरेशन मंजूर कर लेगा एवं धीरज से आपरेशन करने देगा। ऐसा न कर यदि उसे पहले ही घबड़ा डाला तो मारे डर के सम्भव है कि वह आपरेशन के पहले ही प्राण छोड़ बैठे।

बीमार मनुष्य के बारे में उसके स्नेहियों से या घर वालों से डाक्टर को कुछ बात चीत करना ही हो तो रोगी से दूर, घर के बाहर (जहां पर न रोगी की दृष्टि

ही पड़े और जहां से न रोगी को कुछ सुनाई दे) करना चाहिये। जो कुछ कहना हो वह रोगी को देख कर जाने बाद कहना चाहिये। चोर की तरह धीरे धीरे डर डर के चलने से और धीरे धीरे कानाफुसफुस करने से रोगी को तकलीफ होती है। चिढ़ कर बोलना रोगी को अच्छा नहीं मालूम होता। अपनी जैसी स्वाभाविक बोल चाल हो वैसे ही बोलना चाहिये। बोलने में कृत्रिमता नहीं आना चाहिये। नर्स के कपड़े साफ, सुथरे खेलते हुये और खड़खड़ न करनेवाले होने चाहिये। काम पड़े पर धरेजा सकें ऐसे होने चाहिये। नर्स के पांव साफ हलके और फुर्तीले होने चाहिये।

तात्पर्य यह है कि रोगी के पास फजूल गड़बड़ न होना चाहिये क्योंकि उससे ज्यादा रोगी को त्रास देनेवाली दूसरी बात नहीं है। आवश्यक गड़बड़ की वह परवाह नहीं करता चाहे फिर वह कितनी ज्यादा क्यों न हो परन्तु व्यर्थ की गड़बड़ उसे ठीक नहीं मालूम होती। ऐसी छोटी छोटी बातों पर ध्यान देनेसे ही नर्स पर रोगी का स्नेह हो जाता है और ध्यान न देने से तिरस्कार। धोबी के यहां से इस्त्री कर आये हुये ताजे कपड़ों को एकदम पहन कर नर्स रोगी के सामने चली जायगी तो वह उसे एक प्रकार का पालक जान पड़ेगा क्योंकि तुरत के कपड़े खड़खड़ाहट किये बिना न रहेंगे। चाहे रोगी कुछ कहे नहीं परन्तु उसके चेहरे पर दुःख प्रकट हुए बिना रह नहीं सकता। इस्त्री किये हुये

कपड़ों की खड़खड़ाहट, कुञ्जियों के गुच्छे की आवाज बूटों की खटखटाहट इत्यादि बातों से रोगी को जितनी तकलीफ होती है उतना आराम लाखों रुपया खर्च कर दवाइयां देने से नहीं होता।

नर्स के पांव धमाधम न बजना चाहिये और चलने में न उसके कपड़े बजने चाहिये। कपड़े का विचार करते हुये मुझे एक बात और याद आगई। वह यह है। कपड़े सफेद हों, स्वच्छ हों, बदन में ठीक बैठे हुये हों, बहुत फैले हुये भारी न हों और न जमीन पर घिसते हुये हों। बहुत जगह घासलेट का दिया जलाने की चाल हो गई है। इससे सब घरों में ऊंचे ऊंचे पर दिया जलाना तो सम्भव नहीं है अतएव हलकी कीमत के और कभी कभी एक एक पैसे की टीन की चिमनियां काम में लाई जाती हैं। खुले दियों को जला कर जाते वक्त घांघरे की लावन लग जाती है और नये कपड़ों की औरतें जल मरती है। अक्सर हमारे सुनने में आता है कि "कपड़े में लग कर अमुक औरत जल गई"। यद्यपि जल कर मरने वाली औरतों की गिनती अलग नहीं की गई तो भी अपने शहर में (इन्दोर में) हर साल दो तीन वाके ऐसे हो ही जाते हैं। इसके सिवाय किसी का हाथ जल गया, किसी का पांव जल गया, किसी का मुंह, आंख जल गये इत्यादि बातें हो जाती हैं वे तो जुदा ही हैं। कपड़े

यदि ठीक बैठे हुये पहने जायँ तो यह अकस्मातें कम हो जायँ। धोबी कपड़ों की इस्त्री करते समय चावल के मांड में फिटकिरी भी डाल दिया करे तो ठीक उससे सब कपड़े इकदम से नहीं भभक सकते।

बीमार के कमरे के खिड़की और दर्वाजे खोलते वक्त फटाफट न बजने चाहिये। उनके किवाड़ बराबर बन्द न किये जाने से भड़भड़ाहट होती है अच्छी नर्सों के हाथ से सो न होना चाहिये। बेकाम कमरे से बाहर और बाहर से भीतर आने जाने में हरबार दर्वाजे को खोलना और बन्द करना पड़ता है। रोगी को इससे त्रास उत्पन्न होता है। नर्स को चाहिये कि कमरे में जाने के पहिले ही इस बात का विचार करले कि उसे कौन कौन सी चीज चाहिये और उन सब चीजों को यकबारगी ही कमरे में ला रखे। हर एक चीज के लिये दर्वाजा खोल खोल कर बाहर जाना अच्छा नहीं है। इसी तरह रोगी के कमरे में जाते वक्त या उसमें फिरते वक्त नर्स को नीचे देख कर चलना चाहिये। क्योंकि ऐसा न करने से नीचे रखे हुये दिये, पानी के वर्तन, अंगीठी, दवा की शीशी वगैरः ठुकरा जाती हैं। यह देख कर रोगी भयभीत हो जाता है। वह समझने लगता है कि नर्स गुस्से में हो रही है; इससे नर्स के कमरे में आने के पहले ही, इस भय से कि नर्स इन्हें फेंक देगी; नर्स की नापसन्दगी की चीजों को

छुपा देता है, वह भी इतनी फुर्ती से कि उठने की ताक़त न होने पर भी 'खुरड खुरड' करते हुये इतना काम कर डालता है। नर्स खिड़की में से न फेंक दे इतना विचार आते ही खिड़कियों को बन्द करते हुये भी नहीं चूकता। दर्वाजा खुला रहना ही है! प्रत्येक सुशिक्षित नर्स का काम है कि वह रोगी के कमरे में जाते ही पहले इस बात का बन्दोबस्त करे कि कमरे के खिड़की और दर्वाजे 'कट कट' न करें। यदि खिड़की और दर्वाजों पर चिक के परदे पड़े हों तो वे हवा के झोंकों से हमेशा हिलते न रहें और उनके नीचे का हिस्सा देहली पर तड़ातड़ न बजा करे। रात में रोगी से पूछ कर जाने के पहले नर्स को चाहिये कि इन सब बातों को कर दे। इन सब बातों के लिये रोगी को कहने की नौबत न पड़े। यदि उसे कहना पड़ा तो नर्स का फिर महत्व ही क्या रहा? कितने ही रोगी लाजवाले और गरीब स्वभाव के होते हैं अतएव वे नहीं चाहते कि हमारे लिये किसी दूसरे को तकलीफ हो; और कितनों को इस प्रकार का प्रण होता है कि चाहे हम तकलीफ उठालें परन्तु दूसरों को दुःख न होने देंगे। इससे उन्हें बिलकुल जगते हुये रात पर रात काटनी पड़ती है। नर्स यदि किसी बात को भूल गई हो तो उसे याद दिला देना कोई पाप नहीं है परन्तु वे इतना भी नहीं करते।

खिड़कियों के परदे हों और उनकी आवश्यकता न हो तो उन्हें छिटके न रहने दे, बांध देना चाहिये। छिटके हुये परदे हवा के झोंकों से हिलेंगे और उससे रोगी का चित्त व्यग्र हुये बिना न रहेगा।

किसी प्रकार की धांदल से या गड़बड़ से रोगी का मन अस्वस्थ हो जाता है। जिस वक्त उसका चित्त किसी जरूरी काम में गुथा हुआ हो उस वक्त सब प्रकार की गड़बड़ उसे और भी दुःखदायक होती है। समाचार पूछने को आये हुये इष्ट मित्रों में से कोई कोई ऐसे निकलते हैं कि वे अपना ही दलना दला करते हैं। बीमार को बोलने ही नहीं देते, कोई ऐसे होते हैं कि हर एक बात को हँसी मजाक में डाल देते हैं। इन दोनों प्रकार के मनुष्यों से रोगी को त्रास आता है। तीसरे प्रकार के मनुष्य ऐसे आते हैं कि हजार बार बैठने के लिये कहो तो भी उस पर ध्यान नहीं देते और घंटों खड़े खड़े गप्पें मारा करते हैं। ऐसे आदमियों से कुछ मनोरञ्जन (Recreation) तो होता नहीं है खाली कष्ट मात्र बढ़ता है। रोगी के समाचार पूछने को जावें तो चाहिये कि मनुष्य रोगी के पास अच्छी तरह बैठे और शान्तिपूर्वक बात चीत करे। उसका कहना अच्छी तरह सुनले। जिधर रोगी का मुंह हो उधर ही खुद भी बैठे। उसके सामने न बैठ इधर उधर बैठने से रोगी को हमारी बात

सुनने के लिये बार बार (ऊपर तली से) गर्दन मोड़ना पड़ता है। बात करने वाला कितना ही पास बैठा हो और कितने ही ज़ोर से क्यों न बोल रहा हो उसकी ओर देखे बिना सुनने वाले को अच्छा नहीं मालूम होता। यह बात हर एक मनुष्य को अपने ही अनुभव से मालूम होती हैं। अतएव पहले से ही रोगी के सामने बैठना अच्छा है। इसी तरह यदि तुम बराबर खड़े खड़े बोलते रहोगे तो रोगी को अपनी आंखें तुम्हारे मुंह की ओर ऊपर की ऊपर रखनी पड़ेंगी और इससे वे घूमने लगेंगी। ऐसी हालत में रोगी को श्रम हुए बिना न रहेगा। बात चीत करने में हावभाव न करने चाहिये और न मुँह बनाना चाहिये। रोगी के सामने एक जगह बैठ स्वस्थता-पूर्वक अच्छी तरह बात करना चाहिये। हां, एक सूचना और देनी है। वह यह है कि यदि रोगी से बात चीत करना हो तो उसके आगे पीछे खड़े रह कर दर्वाजे में से या फासले पर खड़े होकर नहीं करना चाहिये। इसी तरह रोगी यदि किसी काम में लगा हुआ हो तो बीच में न बोलना चाहिये। यह सूचना कुछ बच्चों की सी बात नहीं है, व्यवहारिक है।

रोगी मनुष्य कुछ अच्छा होते ही थोड़ा बहुत काम करने लगता है। कुछ कुछ अपने उद्योग धन्दे की ओर ध्यान देने लगता है। कभी कभी वह अपनी शक्ति के

बाहर काम करता है ऐसा आक्षेप होता है। परन्तु बहुत दफे यह दोष उसका न होकर उसके आस पास रहनेवाले मनुष्यों का होता है। एकाध चिट्ठीपत्री लिखने को उसने कहा कि लिखनेवाला सैकड़ों प्रश्न पूछ पूछ कर उसे हैरान कर डालता है। इससे वह थक जाता है—उसकी आंखें चढ़ जाती हैं।

बिल्कुल आराम होने के पहले ही जो रोगी अपना धन्दा करने लगेगा और उसका धन्दा खूब सोच विचार का होगा तो उससे उसे बड़ा भारी धक्का लगेगा। बीमार आदमी बेखबर हो या उसे उन्मत्तवायु (Delirium) हो गया हो तो खिलाते समय एकदम उसके मुंह में अन्न पानी नहीं डाल देना चाहिये। ऐसा करने से उसका दम घुटने लगता है और जीव घबड़ाता है। परन्तु जो उसके होंठों पर उंगली या चम्मच फेरते हुए उसका चित्त थोड़ा और तरफ को लगा उसके मुंह में दूध, पानी या औषधि डाला जायगा तो वह अपने आप आसानी के साथ उन्हें पी सकेगा। मस्तिष्क का भी यही हाल है। एकदम बीमार को कुछ भारी विचार करना पड़ेगा या प्रतिज्ञा को सोचना पड़ेगा तो उसके दिमाग़ पर भारी विचार का बोझा पड़ेगा। बीमार मनुष्य से एकदम प्रश्न पर प्रश्न नहीं शुरू करना चाहिये और न एक एक शब्द ठहर ठहर बोल कर उसकी उत्कंठा को बढ़ाना चाहिये।

यह नियम सब जगह के लिये है। बड़े बड़े विद्वानों की भी बुद्धि ऐसे कामों में मन्द हो जाती है। उन्हें भी कुछ नहीं सूझता। वे भी ऐसी भूल करते हैं कि क्या अच्छे मनुष्यों से और क्या रोगियों से बात करते वक्त बार बार अटक अटक कर बात करते हैं। अच्छे आदमी को चाहे इसमें कष्ट न भी हो परन्तु बीमार मनुष्य को अवश्य तकलीफ होती है। बीमार आदमी सहज हवा खाने के लिये तुम्हारे आगे धीरे धीरे चलता हो तो तुम एकाध खबर कहने को या पत्र देने को एकदम दौड़ कर उसके सामने जाओ और न उसे एकदम जल्दी कर ठहरा दो। ऐसा करने का और उसके गाल पर चपत जमाने का परिणाम एकसा होगा। प्रायः हमारे देखने में आता है कि सिर्फ नर्स के दौड़ कर आने से नाजुक प्रकृति के भीरु रोगी चलते चलते बेहोश होकर धड़ाम चित्त गिर गये। यह अकस्मात (Accident) है। नर्स कितनी ही होशियार और काम करने वाली हो, उसके सामने भी एकाध बार आघात हो जाना सम्भव है। परन्तु सिर्फ पत्र देने के लिये या समाचार कहने के लिये ही दौड़ कर जाना या एमदम खड़ा कर दस पांच मिनट तक खड़ा रखना यह बात बहुत ही खराब है। क्योंकि रोगी को दस तक गिनें इतनी देर भी एक जगह खड़े रहने में परिश्रम सा मालूम होता है। परन्तु रोगी के साथ साथ दस पांच

कदम तक धीरे धीरे कहते जाने में रोगी नहीं थकता। इस प्रकार की सूचना देने की यहां पर कोई आवश्यकता न थी परन्तु ऐसी भूल शुद्ध और दयालु अन्तःकरण की नर्सों से होती हुई भी मेरे देखने में आई है।

अपने बीमार में क्षण भर खड़े रह कर बात चीत करने की शक्ति आगई है या नहीं इस बात का अन्दाज यदि नर्स न कर सके तो उसके लिये यह सब से अच्छा मार्ग है कि वह इस बात का नियम करले कि क्या चलते में और क्या खड़े रख कर मुझे बीमार से बात न करना चाहिए। ऐसे बहुत से उदाहरण प्रसिद्ध हैं कि रोगी के जीने पर चढ़ते हुए या जीने से उतरते हुए नर्स ने कमरे के एकदम किवाड़ खोले और दर्वाजे में से माथा निकाल देखने लगी कि रोगी के पांव थरथराये। उसे चक्कर आया और सीढ़ियों पर से गिर गया, वह मर गया। रोगी को अपने आप रक्षा करने के लिये चुपचाप छोड़ देने से या उसे क्षण भर सुस्ताने देकर फिर बात चीत करने से ऐसे आघात बहुत कुछ कम हो सकते हैं। यदि नर्स भी उसके साथ बाहर फिरने गई हो तो उसे चाहिये कि वह रोगी के साथ बात न छेड़ बैठे। हृदय, फुसफुस, मस्तिष्क आदि अङ्गों पर एकदम बोलने का, चलने फिरने का, उठने बैठने का प्रभाव कैसा होता है जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। बीमार मनुष्य अकेले में बहुत ही काम

करता है औरों के सामने नहीं। यह ठीक नहीं है। यह उस पर आरोपमात्र है। हां! यह सच है और हम जानते हैं कि इसकी अपेक्षा वह कुछ विशेष हलचल करता है। परन्तु नर्स को सोचना चाहिये कि वह करता कब है। इस बात को सब कोई मान लेगा कि किसी किसी काम में स्वयं कर लेने में उसे उतनी मेहनत नहीं पड़ती जितनी तकलीफ औरों से काम लेने में हो जाती है। ऐसे मौके पर वह इस बात की परवाह नहीं करता कि मैं कैसा अशक्त हूं। परन्तु वह पहले से ही इस बात का हिसाब कर रखता है कि मैं क्या करता हूं? क्या करना चाहता हूं? और नर्स के बाहर जाकर लौट आने तक मैं काम कर सकूंगा या नहीं। उसके मन में सदा इस बात का भय बना रहता है कि मुझे अमुक काम करते हुए नर्स न आ पकड़े। नहीं तो वह गुस्सा होगी। नर्स के बाहर जाते ही धीरे से बिछौने से उठ कर टुक टुक करता खिड़की के पास जाता है, कुर्सी पर बैठता है, पास के कमरे में पहुंचता है, जीने से उतर कर रास्ते पर जाता है, तम्बोली की दूकान से बीड़ी वगैरः लाकर बिछौने के नीचे छुपा लेता है इत्यादि बातें करना उसे ठीक लगता है। यदि वह ऐसा कर रहा हो ऐसे समय में एकाएक किसी ने उसे आ पकड़ा तो उसकी प्रकृति पर बड़ा भयङ्कर असर होने का भय है। ऐसी बातें वह दिन

भर में एकाध बार ही करता है। इससे उसे नहीं जान पड़ता कि इस तरह छुप कर काम करने में मेरी शक्ति कुछ कम हुई है और इसी से वह ऐसा करने में जुट जाता है। इसके सिवाय एक बात यह भी है कि वह उतना थकता भी नहीं है। क्योंकि वह इस बात को सोच लेने से कि मुझे अमुक समय अमुक काम करना है उसके लिये पहले से ही शक्ति का सञ्चय करता रहता है। नर्स को या बीमार के घर वालों को यह बात भूल न जाना चाहिये। रोगी को ऐसे काम के लिये बहुत तङ्ग न करना चाहिये। जिस रोगी के खड़े रहने में पञ्चायत पड़ती हो—जो रोगी खड़ा भी न रह सकता हो—वह चल क्योंकर सकता है, हमेशा ही ऐसा मानना ठीक नहीं है। हमें इस बात पर लक्ष देना चाहिये कि अशक्त रोगी को एक ही जगह पर खड़े रहने से जैसा कष्ट होता है वैसा चलने में नहीं होता।

बीमार को औषधि खिला पथ्य दे बिछौने पर सुला कर नर्स घर चली गई तो बीमार रात भर आराम से सोवेगा ऐसा कुछ नियम नहीं है। गाढ़ नींद आने के बाद यदि बीमार की नींद उचट गई तो फिर उसे रात भर नींद न आयेगी यह निस्संदेह है।

बीमार मनुष्य से मिलने जाने वाले और उसकी सेवा करने वाले मनुष्यों को एक बात अपने ध्यान में

रखना चाहिये । वह यह कि तुमने रोगी के पास बैठ कर जो बातें कीं उसका परिणाम रोगी पर अच्छा हुआ या बुरा, इस बात को फिर कुछ अर्से के बाद जाकर देखो इससे बड़ा सुधार होगा । इसका यह मतलब नहीं है कि तुम जाकर देखलो कि रोगी क्या कर रहा है और बोलने से कैसा देख पड़ता है और उसकी प्रकृति का अन्दाज लगालो । परन्तु दूसरे दिन तलाश करना चाहिये कि हमारी बात चीत होने बाद रोगी को रात में नींद आई या नहीं और उस पर से रोगी की प्रकृति कैसी रही सो जाना जा सकेगा । श्रम करते वक्त मनुष्य बेसुध कभी ही होता है परन्तु काम पूरा होते ही बेसुध होते हुये मनुष्यों को हम बार बार देख पाते हैं । अत्यन्त परिश्रम का परिणाम हम श्रम करते वक्त नहीं देख पाते परन्तु काम पूरा होने पर उसका अच्छा बुरा परिणाम जो होना होता है सो होता है । बीमार जिस वक्त सन्तप्त या त्रस्त होता है उस समय अधिक मजबूत जान पड़ता है । इसीसे उसकी शक्ति का अनुमान करना पागलपन होगा । "परिश्रम करते हुये भी अमुक रोगी पर कुछ बुरा परिणाम नहीं हुआ" ऐसा कहने वालों के सामने वही रोगी धड़ामचित्त गिरा और मर गया । ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं । मैं अपने अनुभव से कहता हूं कि ऐसा नियम करना ठीक नहीं है । मनुष्य बीमार पड़ा

कि उसके इष्टमित्र समाचार जानने के लिये मिलने को आते हैं। बीमार यदि बेखबर हुआ या आपेबाहर हुआ तो उसीके सामने कहते हैं कि "आज कुछ तबीयत ठीक है"। यदि ऐसे समय रोगी को कुछ सुध हुई तो उसे मालूम होने लगता है कि ये लोग सुध पूछने नहीं आये बल्कि "घड़ी भर कहीं दिल बहलाना ही चाहिये। चलो अमुक को बीमार सुना है वहीं चलें। खबर पूछने की भी बात हो जायगी और वक्त भी निकल जायगा" इत्यादि विचार से आये हैं। ये ही मनुष्य दूसरी बार आते हैं तो बीमार से ही पूछते हैं कि "अहो परसों हम आये थे परन्तु हमारे आने से तुम्हें कुछ तकलीफ तो न हुई"? मुझे अचम्भा है कि रोगी का रोगी से ऐसा प्रश्न ये लोग क्योंकर करते हैं। क्योंकि कौन किससे इतना साफ कह डालेगा कि "आये होगे बाबा, तुम्हारे आने से मेरी तबीयत और भी बिगड़ गई"?

समाचार पूछने आये हुये मनुष्यों के बोलने चालने से रोगी बेसुध हो जाता है या मर ही जाता है ऐसा कुछ नहीं है। परन्तु और छोटे मोटे परिणाम होते हैं और रोगी को उनसे भी बचाना चाहिये। तुम्हारी बात चीत से रोगी पर क्या बीती या बीतेगी इसके जानने से तुम्हारी कुछ हानि नहीं है। परन्तु रोगी इसको न जाने तो उसकी प्रकृति पर खराब परिणाम हुये बिना नहीं

रह सकता। एकाएक बीमारी जोर पकड़ गई तो यह कहना कठिन है, कि वह अमुक समय से और अमुक के आने से बढ़ गई। नर्स यदि होशियार होगी याने उसके अगर आंखें होंगी तो वह बीमारी के पीछे लौट आने के कारण एकदम कह सकेगी। कभी कभी रोगी को इस बात का समझना कठिन हो जाता है "कि मेरी बीमारी फिर क्यों लौटी"।

परन्तु इनके समझने के बहुत से साधन हैं। बीमार के मन पर यदि एकाध धक्का पहुंचता है तो वह इतना खिंच जाता है कि वहां पर बैठता भी नहीं। उसे कितना ही कुछ कहो एक नहीं सुनता। उसका जी किसी ओर नहीं लगता न उसे लिखना सूझता है न पढ़ना। एक बार भी जो दर्वाजे की हद से बाहर होगया फिर उसमें भूल कर भी एक पांव नहीं रखता। उसे अपने सब काम धन्दे छोड़ देने पड़ते हैं। ऐसी हालत हो जाती है। यद्यपि वह फौरन गोली लग कर मरने की भांति नहीं मरता तो भी आने जाने वाले मनुष्यों को उसकी आशा नहीं रहती। जो मनुष्य चाहे जिस वक्त ऐसा कह देते हैं कि "वह तो निडर हो गया है" उनसे बड़ी हानि होना सम्भव है। उसको जो दुःख होता है उसकी अपेक्षा उसका मर जाना अच्छा मालूम होने लगता है। इन अनेक कारणों से कहा जा सकता है कि साय-

हाल में या शान्ति के समय रोगी के पास जा गप्पें मारना ही खराब है।

नर्स को इस बात को याद रखना चाहिये कि जिस पलङ्ग पर रोगी सो रहा हो उसके धक्का न लगने पावे। उस पर पांव रख कर कोई खड़ा न रहे। उस पर कोई बैठ न जावे। बे सबब उसे कोई छुवे तक नहीं। पलङ्ग को धक्का लगने से बीमार को त्रास होता है। कुर्सी पर बैठे हुये जमीन पर पांव रख कर अपना बोझ सँभाला जा सकता है चाहे उसके धक्का ही क्यों न लगे। परन्तु पलङ्ग पर सोते वक्त यदि पलङ्ग को धक्का लगेगा तो सोने वाले को सारे बदन में धक्का लगने जैसी तकलीफ होती है।

रोग दो प्रकार के होते हैं एक सच्चा रोग और दूसरा बनावटी। दोनों एक दूसरे के विरुद्ध हैं। अभी तक जो कुछ मैंने कहा है वह सच्चे रोगी के बारे में कहा है। बनावटी रोगी की शुश्रूषा हो नहीं सकती। यहां तक कि जो कुछ मैंने लिखा है उसमें सच्चे रोगी और बनावटी रोगी के चिन्ह लिखने की आवश्यकता न पड़ी। बनावटी रोगी कितनी ही बातों के बारे में नर्स के सामने प्रकट करता है कि ये मुझसे नहीं होने पातीं और उन्हीं बातों को नर्स के पीछे से बड़ी मौज के साथ करता है। नर्स के सामने अन्न पानी को छूना भी सहन

नहीं करता और उसके पीछे उसके लाये हुये उन्हीं पदार्थों को खा पी कर साफ कर देता है। ऐसा करने का कारण इतना ही है कि वह नर्स को यह नहीं मालूम होने देना चाहता कि उसे भूख भी लगती है, वह खा भी सकता है। सच्चा रोगी यदि कुछ भी खा सकेगा तो वह बड़ी हौंस और उमङ्ग से नर्स के कमरे में आते ही उसको कहेगा। और उसका कहना सुन कर डाक्टर या नर्स नाक भौंह नहीं चढ़ायेंगे तो वह साफ साफ कह देगा कि उसने क्या क्या किया, क्या क्या खाया और कहां कहां गमन किया।

बीमार की सेवा करने वाले में दो बातें अवश्य होना चाहिये। अव्वल व्यवस्थितपना और दूसरे मन की खातरी। रोगी को जो कुछ तुम्हें कहना हो वह थोड़े में, परन्तु स्पष्ट कहो। जिस विषय में तुम्हें शङ्का हो उसकी बात ही रोगी के सामने न निकालो। फिर वह चाहे छोटी न कुछसी बात हो या बड़ी भारी। वह बात कैसे हुई उसमें क्या क्या अड़चनें पड़ीं वे कैसे दूर हुईं इत्यादि बारीक बारीक बातों का पचड़ा लेबैठने की जिनकी आदत हो वे लोग रोगी से मिलने योग्य नहीं हैं।

बहुत सी स्त्रियों के मुँह से मैंने सुना है कि प्रसूती को जब तक डाक्टरनी या नर्स घबड़ाई हुई नहीं देख पड़तीं तब तक तो कुछ भी भय नहीं मालूम होता

परन्तु वे ही यदि घबड़ाये से जान पड़ते हैं तो फिर उसके हाथ पांव ठंडे पड़ जाते हैं। इतना ही नहीं डाकृरनी या नर्स के चेहरे पर शङ्का या चिन्ता के चिन्ह मालूम होते ही उसे जान पड़ता है कि मैं इनसे नही बच सकूंगी। बड़ी नाजुक बीमारियों में (जिनमें बिलकुल धोके में जान होती है) यदि रोगी को मालूम हो जाय कि डाकृर का धैर्य जाता रहा है तो उसकी धीरज बिलकुल छूट जाती है और कभी कभी तो उसके प्राण तक इस धक्के से जाते रहते हैं। यों करूं या यों करूं इस प्रकार जो डाकृर करने लगता है तो रोगी का मन डर जाता है। वह सब ओर से मन को खींच कर अपनी अन्तिम यात्रा करने के लिये तैयार हो बैठता है। अमुक एक इलाज अच्छा है परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसका परिणाम अच्छा होगा या खराब। इस प्रकार कहनेवाले डाकृर का मन शङ्कित देखने से उसके इलाज पर रोगी का भरोसा नहीं रहता। यदि डाकृर एक मत स्थिर कर कहेगा तो उसका कहना मान लेगा और उसका इलाज करने लगेगा फिर वह इलाज कैसा ही क्यों न हो। डाकृर नर्स या घर वालों को चाहिए कि रोगी को कभी कुछ और कभी कुछ न कहे। ऐसा करने से रोगी की शङ्का बढ़ती है। यदि एक बार स्थिर कर तुम अस्त्र-चिकित्सा के लिये भी कहोगे तो रोगी मान जायगा।

परन्तु ऐसा कह कर फिर उससे कहा जायगा कि एक बार औषधि दे देखें फिर जरूरत होगी तो आपरेशन करेंगे तो वह समझने लगता है कि डाक्टर टालमटूल कर रहे हैं और विचार के बोझ में दब जाता है। इसलिए आवश्यक है कि रोगी को जो कुछ कहा जाय निश्चय-पूर्वक कहा जाय। रोगी की कल्पनाशक्ति औरों की अपेक्षा तेज होती है। रोगी को तुमने कहा कि जलवायु का परिवर्तन करने को तुम्हें महाबलेश्वर जाना चाहिये कि वह मानो वहां पहुंच गया हो। इस प्रकार महा-बलेश्वर के सम्बन्ध में कल्पना करने लगता है। इतने में ही उसे किसी ने कह दिया कि महाबलेश्वर से भी देवलाली अच्छी है तो उसके विचार बड़े वेग के साथ देवलाली की ओर फिर जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि महाबलेश्वर और देवलाली दोनों स्थान पर घूम कर आने के बराबर वह थक जाता है।

सबसे विशेष महत्व की बात यह भी है कि रोगी के कमरे में सोचते सोचते, विचार करते करते, न आना जाना चाहिये और न एकाएक घुस जाना चाहिये। ऐसा करने से वह घबड़ा जाता है। तुम्हें यदि उससे मिलने जाना हो तो उसे बहुत देर तक बाट न दिखाओ। ठहराये हुये समय पर जाओ और काम कर चुकने पर आ जाओ। नियमित आचरण और सच्ची बात दोनों

बातों का रोगी पर ठीक असर होता है। उसके सामने धांदली करना या गड़बड़ होना ठीक नहीं है। अपने आप निश्चय किये बाद बोलने चालने से न धांदली ही होती है और न गड़बड़ ही।

ऐसी नर्स रोगी के पास रही तो क्या और न रही तो क्या, जिसका समय, नियमितपन, स्वच्छता, व्यवस्थित-तपन वगैरः रोगी को ही संभालना पड़े (अपने संभालने के बाद)। नर्स कितनी ही होशियार हो परन्तु उसमें ऊपर कहे हुए गुण नहीं हैं और जो बातें उसके ऊपर आधार रखती है उन्हें नहीं कर सकती तो उसका होना व्यर्थ है।

बीमार के कमरे में जोर से बांचते हुए नहीं बैठना चाहिये, क्योंकि जिनमें स्वयं पढ़ने की शक्ति नहीं है वे दूसरों का जोर से पढ़ा हुआ नहीं सुन सकते। बच्चे, आंख दुखनेवाले, या पागल रोगियों को छोड़कर जिन्हें दूसरों का पढ़ा हुआ सुनने में त्रास नहीं होता तो समझना चाहिये कि उन्हें कुछ भारी बीमारी है ही नहीं। गर्मी से जिस वक्त माथा चढ़ा हुआ हो उस वक्त यदि पढ़ने की या सुनने की खटपट की जाय तो मस्तिष्क फिर कर आदमी का बेहोश हो जाना बहुत सम्भव है। बहुतों को ऐसा मालूम होता है कि बांच कर सुनाने से रोगी के माथे को आराम मिलता है। कदाचित् मिलता हो,

परन्तु मेरे विचार में नहीं मिलता। यदि कोई बात रोगी के कानों में डालना ही है तो उसे धीरज के साथ कहना चाहिये। बहुत से आदमी ऐसे मानते हैं कि एकदम कह देने से रोगी के मन में धक्का नहीं लगता किन्तु यह बड़ी भूल है। धीरज से बात कहने में उसका स्वास्थ्य नहीं चला जाता और न यह मालूम होने लगता है कि कब यह बात पूरी हो जावे। यही हाल बांच कर सुनाने का है। ऐसा कहलेवाले रोगी प्रायः मिल जाते हैं कि हमें पढ़ कर न सुनाओ वैसे ही कह जाओ। यदि छोटे छोटे बच्चे बीमार होते हैं तो उन्हें बँचवा कर सुनने की अपेक्षा योंही कहानियां सुनना अच्छा मालूम होता है। वे नही कहते कि कुछ पढ़ कर सुनाओ। वे यही कहते हैं कि कोई बात कहो। पढ़ते पढ़ते कभी ऐसा होता है कि पढ़नेवाले का ध्यान न मालूम किधर का किधर चला जाता है और मालूम होने लगता है कि न मालूम क्या पढ़ गया। फिर आरम्भ से पढ़ने लगता है। जब पढ़नेवाले का यह हाल है तब सुननेवाले का क्या हाल होगा, ? और जो सुनने वाला कोई बीमार हुआ तो उसके त्रास की सीमा ही क्या ? बांचने में एक और भी बात है, कोई गागाकर पढ़ता है, कोई गुनगुनाकर पढ़ता है, कोई जल्दी २ पढ़ता है, कोई अटक अटक कर पढ़ता है। परन्तु बातचीत में किसी के ये दोष नहीं

होते। यदि बीमार को कुछ बांच कर ही सुनाना हो तो धीरज के साथ यथाविधि साफ साफ पढ़ कर सुनाना चाहिये। वह भी बहुत देर तक नहीं। न राग लेले कर सुनाना चाहिये और न मुँह की आवाज मुँह में रहे ऐसा पढ़ना चाहिये। रोगी को क्या सहन होगा और क्या नहीं? इसको पहले ही निश्चय कर लेना चाहिये फिर पढ़ना या बातचीत शुरू करना चाहिये ।

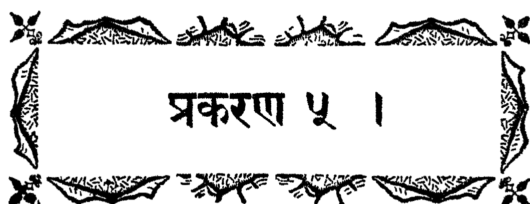
बहुत बार ऐसा होता है कि बांचने वाला मन ही मन में बांचता जाताहै और बीच बीच में से दो दो चार चार सतर रोगी को सुनाता जाता है। इससे दूसरी कोई बेवकूफी बढ़ कर नहीं हो सकती। क्योंकि पुस्तक पढ़ते हुये वह तो आनन्द बराबर उठता है परन्तु उस बीमार के मन की क्या दशा? बीच बीच की सतरों के सुनने से रोगी को वह आनन्द कैसे आयेगा और पुस्तक पूरी होने तक वह आनन्द क्योंकर कायम रहेगा?

एक बात और कहनी रही। कई घर दो दो तीन तीन मंजिल के होते हैं। उनमें रोगी नीचे की मंजिल में है। और ऊपर की मंजिल में कोई चलता फिरता है तो रोगी को दुःख होता है; क्योंकि छत चलने से दनदन करती है। यह त्रास उतना ही ज्यादा होता है जितनी ज्यादा ऊंची लकड़ी की छत होती है। ऊपर की छत पर चलने से नीचे की मंजिल में रहने वाले बीमार का

माथा भिन्नाने लगता है। पुराने पक्के मकानों में पक्की फर्श होने से ऐसी तकलीफ नहीं होती, शफाखाने के रोगियों के लिए भी ऐसा सुभीता होता है। यदि मकान ऊंचा हो और वैसा ही खराब हो तथा रोगी बीमारी से त्रस्त हो गया हो तो उसका परिणाम बुरा हुए बिना नहीं रह सकता। किसी किसी बीमारी में रोगी ऐसा सन्तापित हो जाता है कि यदि उसके सर पर की छत चलने से दबादब करती हो तो वह उसके कष्ट से बेसुध हो जाता है। ऐसे वक्त पर रोगी को जीने पर चढ़ा (थोड़ा श्रम होते हुए भी) उसे, बन सके तो, ऊपर ही ऊपर की मंजिल पर ले जाना चाहिये। वरना ऐसे बीमार को नींद की औषधि पिलाने पर भी नींद नहीं आती। अगर कोई रोगी कहे कि ऊपर कोई चलता है कि मेरी छाती सी फट जाती है तो उसकी ओर दुर्लक्ष न करना चाहिये। जो गलबा रोगी को सहन नहीं होता वह उसके कान में त्रास कर बैठता है तो रोगी को सुनसान करके छोड़ता है। सन्ताप पाया हुआ रोगी चाहे इस बात को पसन्द करले कि दूसरे मनुष्य को एकाध बार उसके कमरे में ही ला रक्खा जावे, किन्तु वह इस बात को नहीं पसन्द करता कि उसके माथे की मंजिल पर कोई फिरा करे और दबादब हुआ करे। ऐसे रोगी के लिए स्वच्छता व शान्ति रखने के लिए कितना

ही खर्च उठाना पड़े इसका विचार न करना चाहिये। क्योंकि यदि बीमार का मन ही ठिकाने न होगा तो अच्छी से अच्छी औषधि देने पर भी कुछ गुण नहीं होगा और न अच्छे से अच्छे सँभालने वाले ही कुछ कर सकेंगे।





प्रकरण ५ ।

स्वभाव वैचित्र्य ।



बहुत दिनों तक एकही कमरे में एकसा पड़े रहने से रोगी को कमरे की हर एक चीज को देख देख कर त्रास ही नहीं होता; किन्तु ऊब भी आने लगती है। बहुत दिनों तक बीमार पड़े रहने से मनुष्य का दिमाग़ कमजोर हो जाता है। इससे वह साधारण से कारण से भी चिढ़ने लगता है। इस पर भी यदि रोगी को कुलन हो रही हो, चक्कर आ रहे हों, पसली दर्द करती हो या ऐसा ही कुछ और हो रहा हो तो फिर कुछ पूछो ही मत। यदि बांयटे ठहर ठहर के आते हों तब तो रोगी बीच बीच में कुछ स्वस्थ हो हँसने खेलने लगता है। बिल्कुल अशक्त हो गये रोगी की बात ही जुदा है।

वह आठों पहर एकही स्थिति में होता है इससे उसे कुछ भी अच्छा नहीं मालूम होता। रोगी को यदि ठहर ठहर के तकलीफ होती हो तब तो वह इतना झुंझलाता नही है। क्योंकि जब बीमारी कम हो जाती है तब कुछ कमरे के बाहर इधर उधर फिर सकता है। कुछ हलचल कर सकता है। ऐसा ही रोगी आनन्दी होता है। एकही एक खाट पर महीने के महीने पड़े रहने वाले रोगी असन्तुष्ट, चिड़चिड़े और टसकने वाले हो जाते हैं। एकही प्रकार के अन्न खाने वाले को जैसे उस अन्न की ओर अरुचि हो जाती है (उदाहरणार्थ ढाबे का होटल का खाना) वैसे ही एकही जगह पर पड़े रहने वाले रोगी को कमरे की नफरत आने लगती है। बीमारी में सुन्दर वस्तु, नये कपड़े और जगमगाहट करते हुये जेवरों का चित्त पर कुछ असर नहीं होता। कभी कभी रोगी भी बड़ा तरङ्गी होता है और उसकी तरङ्गें परस्पर विरुद्ध होती हैं। घड़ी मे वह मिठाई, घड़ी मे खटाई और घड़ी में खारी, चिरपरी चीजें खाना चाहता है। इस प्रकार के लहरी स्वभाव से बीमारी के अच्छा होने का खून हो जाता है। नर्स को चाहिये कि वह ऐसी तरङ्गों की ओर खूब ध्यान दे। रोगी छोटे से कमरे में हो और वहां से यह नहीं दिखाई देता हो कि बाहर क्या हो रहा है तो झुँझला जाता है। ऐसी हालत में

नर्स को चाहिये कि वह फूल का तुर्रा, ताजा फल, हार आदि रोगी को लादेवे। इससे रोगी का मन एकदम प्रफुल्लित हो जाता है और रोगी की बीमारी तक कम होने लगती है। उसे शीघ्र ही आराम सा मालूम होने लगता है।

बहुतसों का कहना है कि इसका परिणाम केवल मन पर होता है परन्तु यह बात नहीं है। शरीर पर भी उसका असर हुये बिना नही रहता। रङ्ग, रूप, प्रकाश, इत्यादि बातों का शरीर पर क्या और कैसा असर होता है, यद्यपि यह कहा नहीं जा सकता परन्तु इस बात को हर एक अपने ही अनुभव से मान लेगा कि इनका कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता ही है। नानाप्रकार की सुन्दर और सुरूप वस्तुओं के देखने से मन में आनन्द होता है और इससे शरीर का क्लेश कम होकर बीमारी के मिटने में मदद मिलती है। इससे यह न समझना चाहिये कि बहुतसी शोभावाली वस्तुएं एकही समय में लादेने से एकदम आराम हो जायगा। क्योंकि ऐसा करने से उसका दिमाग थक कर कुछ का कुछ परिणाम निकल आना सम्भव है। इससे उचित यह है कि रोज रोज एकाध सुन्दर वस्तु उसके देखने के लिये लावे, जिससे रोगी का आनन्द प्रतिदिन बढ़ता जावे और शीघ्र ही बीमारी दूर हो।

बीमार की कोठरी कैसी होनी चाहिये इसके बारे में मनुष्यों के दिमाग़ में कुछ की कुछ बांकीचूकी समझ भरी हुई है। रोगी का कमरा स्वच्छ और खुला हुआ न रख रोगी को वैसी ही बू में पड़े रहने देने में आश्चर्य है कि नर्स को और रोगी के घरवालों को कुछ दोष व हानि नहीं जान पड़ते। और इस पर भी तुर्रा यह है कि यदि उनसे कहा जाय कि आप टेबुल पर एकाध सुगन्धित फूलों का गुच्छा या पौधों की कूँड़ी रख दिया करें तो उनके ख्याल में इससे कमरे की हवा खराब होती है। यह बात किसी प्रकार किसी को भी योग्य न जान पड़ेगी कि छोटे से पौधे की कूँड़ी रखने से या फूलों के गमले के रखने से कमरे में गर्दा होगा। जो कोई कहे कि फूलों से या पौधों से "कार्बोनिक आसिड वायु" निकल कर हवा खराब होगी तो मैं कहता हूं कि उनसे जितनी "कार्बोनिक आसिड वायु" निकलती है उससे तो मक्खी भी नहीं मर सकती। इसके सिवाय यह भी कहा जा सकता है कि फूलों से और पौधों से कमरे की हवा सुधरेगी क्योंकि हवा की कार्बोनिक आसिड को वे खा जाते हैं और खूब आक्सीजन निकालते हैं। यह बात आपको यों स्पष्ट देख पड़ेगी कि एक कांच का ग्लास पानी भर कर लो, उसमें फूल तोड़ कर रक्खो और ग्लास को टेबुल पर रक्खो। आपको फूलों की डंडियों के पास

बुलबुले उठते हुये देख पड़ेंगे। ये बुलबुले पानी का कार्ब-निक आसिड निकल आक्सीजन के प्रकट होने से होते हैं। हां, एक बात कहना है। कुछ फूलों में बास आती है। उन फूलों से रोगी का माथा चढ़ जाता है और रोगी थक जाता है। इससे उन्हें कमरे में न रखना चाहिये। कौन से फूल बास वाले हैं और कौन से नही यह बात किसी भी फूल के सूंघने से जानी जा सकती है।

मन का शरीर पर क्या और कैसा परिणाम होता है इस बात की अब बहुत कुछ चर्चा चल रही है। उसमें बहुत कुछ सत्य भरा हुआ है। परन्तु इस बात का विचार अभी तक किसी ने किया नहीं सुना गया कि शरीर का मन पर क्या असर होता है। हां, इतना तो स्पष्ट है कि बहुत कुछ सोचने विचारने से या त्रास होने से दिमाग थक जाने की हालत में यदि मील दो मील चलने की शक्ति हो तो चलने से बहुत कुछ तकलीफ कम हो जाती है। जो आदमी इतनी चलने फिरने की मेह-नत नही करते और उनके पीछे जो सोच विचार आदि का झंझट लगा तो उनकी बुरी दशा हो जाती है। यद्यपि हम इस बात को अच्छी तरह नहीं बतला सक्ते कि थोड़ा बहुत फिर आने से मनुष्य का त्रास कितना कम हो गया या फिरने का उसपर क्या प्रभाव हुआ तथापि

एकही जगह पड़े पड़े टसकने वाले रोगी की दशा देख कर इस बात की कल्पना की जा सकती है। झुंझलाये हुये रोगी को प्रत्येक स्थान की प्रत्येक वस्तु खराब देख पड़ती है। उसके मन में जो कुछ हो वैसे ही स्वप्न दिखाई देने लगते हैं। उसे नींद नहीं आती। दिनों दिन वह विचार के बोझ और बीमारी के मारे सूखता जाता है। ऐसी हालत में यदि उसे कहीं और जगह ले जाया जावे तो वह सब बातें भूल जाता है।

क्या कभी तुमने सुना है कि बीमारों को अच्छे स्वप्न आते है? बहुत ही कम। बीमारों को स्वप्न भी भयङ्कर और डरावने ही आते हैं। रमणीय दृश्य उनके ख्वाब में भी नहीं आते। स्वयं वे विचार कर बैठते हैं कि ऐसा क्यों होता है? यह दोष उनका नहीं है उनके शरीर की प्रकृति का है। बीमार के माथे में से बुरे विचारों को निकाल देने के लिये थोड़ी बहुत मनोरञ्जक गपसप उड़ाना चाहिये। इससे उनका लक्ष होगई हानि की ओर नहीं जाता। महीनों तक एक ही भीत की ओर तका करने से बीमार को अगर त्रास न होगा तो क्या होगा? एकाध बुखार वाले का बुखार उतरने लगा कि उसे उस भीत पर हमेशा देखते रहने के कारण बांकी टेढ़ी सूरतें दिखाई देने लगती हैं। फूलों के गुच्छों की ओर देखने से ऐसा कभी नहीं होता। पांव उतर जाने से

उस पर लकड़ी की स्प्लिण्ट बांधना होता है और महीने डेढ़ महीने तक रोगी को एक स्थिति में रहना पड़ता है। जैसे यह रोगी झुँझला जाता है वैसे ही एकही कमरे में एकही खाट पर हमेशा पड़ा रहनेवाला रोगी झुँझला जाता है।

रोगी की शुश्रूषा का धंदा स्वीकार कर भूतदया का साग भरनेवाले डाक्टर या नर्स अपने रोगी के साथ ऐसा बर्ताव क्यों करते होंगे, मुझे रह रह कर इसी बात का अचंभा होता है। जैसे उन्हें स्वयं एक ही पोशाक, एकही जगह, एकही घर आदि से नफ़रत होती है और दिन में दोदो तीनतीन बार कपड़े पलटते हैं, घूमने को जाते हैं, अनेक तरह के खेल खेलते हैं वैसे ही रोगी की दशा समझ कर नये नये कपड़े उसे पहनाने चाहियें और नई नई वस्तुएं देना चाहिए। इससे उसे बहुत अच्छा मालूम होता है। परन्तु आश्चर्य है कि इधर किसी का ध्यान नहीं जाता। महीनों तक रोगी का वही बिछौना रहता है। चद्दर आठ आठ, पन्द्रह पन्द्रह दिन तक नहीं धोई जाती। भीतों पर चूना नहीं पोता जाता। उन पर खटमलों का खून वैसा ही लगा रहता है। छत पर मक्खियों के बैठने से कालोंस छाई हुई रहती है। सोने का पलंग जरा भी बाहर नहीं रक्खा जाता। रोगी के साथ थोड़ी बहुत

भी दिल खुश करने वाली बातचीत नहीं की जाती। मुझे बड़ा अचरज है कि ऐसी ऐसी बातों की ओर किसी का भी लक्ष क्यों नहीं जाता।

यहां पर मुझे एक बात याद आगई। वह यह कि एक गरीब मजदूर था। उसे अकस्मात् से चोट आगई। उसकी पीठ की हड्डी दुखने लगी। उसे शफाखाने में रक्खा। वहां पर वह बहुत दिन बीमार रह कर मर गया। जाति का मजदूर था उसे क्या ज्ञान कि सृष्टि-सौन्दर्य किसे कहते हैं और उसका उपभोग कैसे करना चाहिये। परन्तु एक दिन उसके मनमें आयाकि कमरे की खिड़की से बाहर की मौज देखें। उसने नर्स को कहा। नर्स ने उसे कंधे पर उठाया और खिड़की के पास लेजाकर बाहर की मौज दिखलाई। इससे उसकी हविस पूरी हुई परन्तु दर्द बहुतही भयंकर होगया और वह मरते मरते बड़ी कठिनाई से बचा। यद्यपि यह बात उसे मालूम न हुई तथापि और बहुत से मनुष्य इस बात को जान गये। तोभी उनमें से एक को भी यह ज्ञान नहीं हुआ कि जैसे बहुत दिन का भूखा आदमी खाने के लिए तड़फड़ाने लगता है वैसे ही एक जगह पड़े पड़े रोगी की हालत हो जाती है। वह उस जगह से इतना श्रमित हो गया होता है कि प्राणोंपर खेल कर खिड़की में से कूद पड़ते हुए भी नहीं चूकता।

इसलिए आवश्यक है कि रोगी के कमरे में नई नई चीजें लाकर उसका मनोरञ्जन किया जावे। उसके कमरे में कुछ न कुछ नवीनता प्रतिदिन कर दीजाया करे। रोज के भोजन में जैसे कुछ नवीनता न होने से अच्छा नहीं लगता वही हाल कमरे का भी है।

"पर दुःखेन दुःखितो विरलः" एक प्रसिद्ध वाक्य है। दूसरे के ठेस लगी तो मेरी आंखों में क्यों पानी आने लगा? बीमार मनुष्यों के बारे में एक भूलभरा विचार फैला हुआ है। वह यह है कि यदि बीमार चुपचाप रहे या अपने मन को वश में रक्खे तो क्लेश अपने आप कम हो जावे अर्थात् वह सहन किया जा सके। निरन्तर बीमारी का ध्यान करते रहने से वह बढ़ती है। परन्तु यह मैं अपने अनुभव से कहता हूं कि एकाध सुशील रोगी जितना अपने आधीन मन रख सकता है उतना तुम स्वयं रोगी होते तो नहीं रख सकते थे। उसके कमरे में किसी के पैर पड़ने से उसे क्लेश होता है। उसे कुछ स्वप्न आया या उसके मन में कुछ विचार उठा कि वह थक जाता है। परन्तु ऐसी स्थिति में भी जो वह अपने चेहरे को शान्त व गम्भीर रख क्लेश को चुपचाप सहन करता हो तो उसे आत्मसंयमनशील न कहा जायगा तो क्या कहा जायगा?

रात भर जगने के बाद प्रातःकाल में जब चाय देने का वक्त हो उस समय यदि कोई तुमसे कहे कि जरा ठहरो तो तुम उसे क्या कहोगे ? उस समय जो स्थिति तुम्हारे मन की हो वही स्थिति बीमार के मन की सदा बनी रहती है। यह बात अच्छी तरह तुम्हारे लक्ष में आ जाना चाहिये। इससे रोगी के खाने पीने का अच्छा बन्दोबस्त तुम कर सकोगे। उसके चित्त बहलाव का भी बन्दोबस्त हो सकेगा। सुगन्धित पुष्प, उत्तम चित्र वगैरः भी मंगवाओगे इत्यादि। रोगी की रात शत्रु की सी जाती है। एक एक रात युग युग बराबर बीतती है। इसका कारण यह है कि वह प्रकाश के लिये सूर्योदय की बाट देखता रहता है। अन्धकार में कुछ न देख पड़ने से उसे त्रास होता है। यदि दिये से उजाला कर दिया जावे तो वह इतना घबरा नहीं जाता।

प्रत्येक स्त्री पुरुष को कुछ न कुछ काम अपने हाथों से करना पड़ता है। ऐसे मनुष्य बहुत ही कम हैं जिनके धोती, घांघरे, साड़ी आदि वस्त्रों को भी धोने के लिये नौकर ही हों। कदाचित ऐसे मनुष्य मिलें भी तो उनमें और बीमारों में कुछ फरक नहीं। वे जन्म से ही रोगी हैं यद्यपि तुम रोज अपने हाथों से काम करने वाले एका-एक इस बात को नहीं समझ सकते कि ऐसे छोटे छोटे काम करने से तुम्हारे चित्त को क्या आनन्द होता है

परन्तु जिन्हें लकवा होगया हो उन्हें देख कर सहज में समझ जाओगे कि इन छोटे २ कामों के लिये उन्हें कैसा तरसना पड़ता है।

जिन बीमारों में थोड़ी बहुत शक्ति आगई हो उन्हें दिन में कुछ सीने पिरोने से, कुछ पढ़ने से, कुछ खेलने से या करनेसे बड़ा मनोविनोद होता है उनका चित्त प्रफुल्लित हो जाता है। बहुतों का ऐसा मन्तव्य है कि सिर्फ पढ़ने से ही मन बहलाव होता है परन्तु मेरे ख्याल में इसमें गलती है। एकही बात फिर वह कितनी ही अच्छी क्यों न हो हमेशा करते रहने से उसमें त्रास हुए बिना नहीं रहता। इस बात को भूलना न चाहिये। तुम्हारे जितने मनोरञ्जन के साधन तुम्हारे रोगी के पास तो हैं नहीं, इस बात को स्मरण रख कुछ न कुछ नई बात तुम्हारे रोगी के दिल बहलाने को तुम्हें रोज ढूंढ़ निकालना चाहिये।



भोज्य (गिज़ा)

एक कहावत प्रसिद्ध है कि "समुद्र में पहुंच कर भी कोरे के कोरे"। इसी प्रकार बहुत से रोगी खाने पीने को खूब होने पर भी भूखों मरते देखे गये हैं। इसका कारण यह है कि बहुत से मनुष्य इस बात को नहीं जानते कि रोगी को क्या खाने को देना चाहिये और क्या नहीं। इस बात का विचार करना कठिन होता है कि बीमार को क्या खाने को दिया जाय और किस रीति से दिया जाय। रोगी स्वयं इस बात को नहीं जानता कि इच्छा न होने पर भी थोड़ासा अन्न किस प्रकार खाया जा सकेगा इस पर भी और लोग खाने को कह २ कर उसे तंग कर डालते हैं। इन भलेमानसों को इस बात के जानने की

भी इच्छा नहीं होती कि रोगी को किस तरह खाने को देना चाहिये। उदाहरण के तौर पर एक अशक्त रोगी को लीजिए। उसे सुबह के ग्यारह बारह बजे तक भूख नहीं लगती। दाल भात रोटी का देखना भी उसे अच्छा नहीं मालूम होता। ग्यारह बजे तक पेट में कुछ न जाने के कारण वह ज्यादा थक जाता है। उसकी भूख मर जाती है। अशक्त मनुष्य को रात में कुछ ज्वर सा हो जाता है। सुबह ज्वर उतर जाने पर उसका मुख कोरा कोरा होता है। ऐसे वक्त में सूखा अन्न (उ० विसकुट) खाने से उसे विशेष परिश्रम होता है। और यदि ऐसा परिश्रम उठा कर भी उसने खाया तो उसे तकलीफ़ होती है। इसलिये ऐसा न कर थोड़ा सा दूध, चाय साबूदाने का पानी या अरारोट की कंजी के चमची दो चमची घंटे दो घटे बाद पिलाते रहना चाहिए जिससे रोगी का पोषण हो, वह ग्यारह बारह बजे तक थक न जाय। कुछ भात, चपाती या हलवा भी खा सके और वे उसके अङ्ग लगे। जिन्हें घोटने में कुछ त्रास नहीं पड़ता वे पदार्थ सहज में निगले जा सकते हैं। परन्तु ऐसा किया नहीं जाता। सुबह हाथ मुंह धोते ही देख पड़ता है कि किसी जगह बिसकुट, कहीं बाटी, कहीं पूरी जैसे कठिन पदार्थ रोगी के सामने रक्खे हैं। इसका विचार कोई नहीं करता कि सुबह पहले ये पदार्थ कैसे खवायेंगे?

इसी तरह डाक्टर लोग नर्स को कह जाते हैं, कि हर तीसरे घंटे रोगी को पाव भर दूध या खीर पिला देना। यदि रोगी इतना न पी सके तो आध पाव या दो एक चिमची ही पिलाना चाहिए। परन्तु डाक्टर कह गया है इस विचार से जबरदस्ती उस के गले में नहीं औंधाना चाहिये। ऐसी छोटी मोटी बातों पर ध्यान देने से घर में रहने वाले बीमारों की मौतें बहुत होती हैं। शफा-खानों में उतनी नहीं होतीं क्योंकि शफाखानों में डाक्टर और नर्स एक मत होकर एक दूसरे को मदद पहुंचाते हैं। घरों में इस प्रकार डाक्टर व रोगी के संबन्धियों में एक-मत हो नहीं सकता।

बिल्कुल अशक्त हुए रोगी को ठीक वक्त पर पथ्य देना चाहिये। उसमें पांच मिनट की भी देरी होना ठीक नहीं और वह वक्त भी ऐसा ठहराना चाहिये कि उस समय या उस समय के थोड़ी देर बाद तक कुछ काम (शारीरिक व मानसिक) न करना पड़े। भोजन करने के बाद थोड़ी देर तक उसे पूरा विश्राम मिले। अशक्ति के कारण रोगी से अच्छी तरह निगला भी नहीं जाता ऐसी हालत में यदि उसे बोलना पड़े तो बोलने मात्र से ही या कुछ इधर से उधर होने में ही वह बहुत थक जाता है। उस समय फिर वह पानी तक नहीं पी सकता। करवट बदलने बाद या और कुछ हलचल

करने बाद थोड़ा बहुत विश्राम न मिला तो रोगी कुछ खायगा नहीं। ऐसी स्थिति में जल्दी मचाकर उसे खाने को देना, खाने को देना नहीं है; उसे मारने जैसा है। कितने ही बार रोगी का एक एक मिनट इतने महत्व का होता है कि उस पर रोगी के मरने जीने का दार-मदार होता है।

बड़ी भयंकर बीमारियों में (जिनमें मरना या जीना घड़ी दो घड़ी का खेल होता है) अच्छे अच्छे शफाखानों में डाक्टर और नर्स दोनों ही इन बातों की ओर खूब ध्यान देते हैं। भयंकर बीमारियों से बच कर पुनर्जन्म पाने के उदाहरण प्रायः विशेष शफाखानों में ही मिलते हैं। रोगी के घरों में नहीं। क्योंकि रोगी के घरों में ठीक व्यवस्था से वक्त पर काम होना अशक्य है और शफाखानों में डाक्टर और नर्स अपना २ काम एक दिल होकर बुद्धिमानी के साथ करते हैं।

बहुत दिनों तक खाट पर पड़े रहने वाले रोगियों में से ज्यादातर तो उपवास कर कर भूख के मारे मर जाते हैं। सैकड़े में ऐसे कितने उदाहरण होते हैं। यह कहना तो मेरे ध्यान में ठीक नहीं जचता परन्तु बहुत से रोगी ठीक वक्त पर योग्य खाने पीने का बन्दोबस्त न होने से मर जाते हैं। यह बार बार हमारे देखने में आया है। थोड़ी सी भूतदया, बुद्धि और निश्चय का

उपयोग किया जाय तो कभी कभी रोगी को मौत की डाढ से निकाल लिया जा सकता है। पहिले यह देखना चाहिए कि रोगी को भूख कब लगती है। फिर उस समय उसे कुछ भी श्रम न हो इसका ध्यान रखना चाहिए यदि श्रम हुआ हो तो पथ्य के समय को पलटना चाहिए। ऐसी बातों पर ध्यान देने में विचार बुद्धि, निश्चय, दया इन गुणों की आवश्यकता है। यदि प्रसंग आने पर इनका उपयोग किया जावे तो अभी की अपेक्षा बहुत ज्यादा मनुष्यों को बचाया जा सकता है।

रोगी के खाने में से बचे हुए पदार्थ को इस विचार से कि जब इच्छा होगी फिर खालेगा उसके सिराने रख जाना बहुत बुरा है। जो पदार्थ अरुचि हो जाने से छोड़ दिया गया था उसके पास पड़े रहने से उसकी ओर मन नहीं जाता। इतनाही नहीं; उसकी ओर नफरत बढ़ती जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि वह पदार्थ न कुछ सा हो जाता है और उसके बाद यदि कोई दूसरा पदार्थ दिया जावे तो उसकी भी वही गति होती है। इसलिये अच्छा तो यह है कि भोजन के समय उत्तम बर्तन में रखकर पदार्थ लाया जावे और बीमार के खालेने के बाद बाकी पदार्थ तुरंत कमरे के बाहर कर दिया जावे। उसके पलँग के पास कभी न रक्खा जावे। भूख का समय बार २ यह पूँछ कर कि "भूक लगी है"? इत्यादि

प्रश्न पूछकर निश्चित कर लेना चाहिये। हर एक का काम नहीं है कि वे रोगीसे ऐसे २ सवाल किया करें परन्तु नर्स को ऐसा कर भोजन का समय ठहरा लेना चाहिये और उसी समय बराबर रोगी को खाना देना चाहिये। एक दम बीमार के सामने खूब अन्न नहीं लेजाना चाहिये। उसे दूसरे नीरोगी मनुष्यों के लिये बनाया हुआ भोजन न दिखाना चाहिये और न उसकी बू ही आने देना चाहिये। उसके सामने हर वक्त खाने पीने की बात न करना चाहिये और न रसोई की जिन्सें दाल चांवल वगैरः ले जाना चाहिये। इन नियमों पर सदा ध्यान बना रहे। यदि यह नियम भङ्ग हुआ तो थोड़ी बहुत अवश्य, रोगी को अन्न की फड़फड़ी आये बिना नहीं रहेगी। सार्वजनिक औषधालयों में इसनियम का पालन होना कठिन है, रोगी स्वतंत्र कमरे में हुवा और उसके लिये खास नर्स हुई तो कभी कभी उस नर्स को जीम्हने के लिये बाहर बुलाना अशक्य होजाता है। "जीम्हने का वक्त हो गया" इतना सुनतेही या नियत समय पर वहां से नर्स के चले जाने पर रोगी के लक्ष में वह बात आही जाती है और इसका परिणाम वही होता है जो हर वक्त खाना रख कर लाई हुई रकाबी का होता हो। कभी कभी रोगी के मनमें खाने की कोई कल्पना नहीं होती परन्तु केवल नर्स को आते हुए देखकर ही वह फड़फड़ी लेने लगता है।

खाने पर से उसका मन उठ जाता है। कितनी एक बार नर्स के भोजन का समय रोगी को मालूम होता है। वह वक्त होते ही उसके मन में अन्न संबन्धी कंटाला आता है और वह खाने को छोड़ देता है। उस समय के बारे में बड़बड़ाता है। सार्वजनिक शफाखानों में एक ही वार्ड में बहुत से बीमारों को रक्खा जाता है इससे अनेक प्रकार के असुविधा भोगने पड़ते हैं परन्तु साथ ही साथ ठीक समय पर औषध पानी दिया जाना रोगी के भोजन करते वक्त नौकर वगैरः को कुछ काम न करने देना इत्यादि बहुत फायदे भी हैं। इससे थोड़ी बहुत असुविधा की ओर कोई ध्यान नहीं देता। घरों में जिस वक्त रोगी भोजन कर रहा हो उस वक्त नर्स या घर के मनुष्य को इधर से उधर घूम फिर कर सारे कमरे में धूल न उड़ाना चाहिये।

बीमार आदमी जिस वक्त जीम्हता हो उस वक्त उसके कमरे में किसी दूसरे मनुष्य को न जाने देना चाहिये क्योंकि वे नहीं समझते कि वहां किस तरह व्यवहार करना चाहिये। रोगी यदि इतना अशक्त हो कि उसे हर एक भार सा मालूम होता हो तो परोसने वाले मनुष्य को भी चुपचाप काम करना चाहिये। वह न स्वयं बोले न रोगी को बोलावे।

आवश्यक काम होने से या काम की भरमार होने से जिन्हें बीमारी में भी काम करना पड़ता है ऐसी जगह

पर डाक्टर या नर्स को ऐसा सख्त नियम कर देना चाहिये कि कम से कम भोजन के समय तो कोई बीमार के पास काम के बारे में बात न करे और न किसी प्रकार के काम को लासके। जीम्हने के पहिले उसे कोई बातों में न लगाले इत्यादि। इसी प्रकार उसके पास यदि कोई समाचार पूछने को आने को हो तो उसके मिलने का वक्त; जीम्हने के वक्त को व जीम्हने के बाद भी कुछ आराम के वक्त को छोड़ कर ठहराना चाहिये। ऐसा करने से जीम्हने में जल्दी न मचेगी।

ऐसी छोटी छोटी बातों की ओर लक्ष देकर बीमार को भोजन कराया जायगा तो वह कुछ खा सकेगा और उसके थोड़ा बहुत अङ्ग भी लगेगा।

बासी दूध, खट्टे पदार्थ, ठंढा या बदबूवाला अन्न बीमार के पास कभी न लेजाना चाहिये। ऐसा होने पर भी कई बार ऐसी जिन्स बीमार के पास पहुंचाई जाती है कि जिससे लेजानेवाली नर्स के सिवाय हर कोई को कै,सी, आनेलगे। ऐसे मौकेपर नर्स की बुद्धि की अच्छी तरह परीक्षा हो जाती है। होशियार नर्स बीमार के पास कभी खराब वस्तु नहीं आने देती। उसका पथ्य यदि बनाते समय बिगड़ भी जाय तो वह निराश न होकर तुरंत और कुछ तैयार कर देती है। बीमार को ऐसी वस्तुएं खिलाना चाहिये जो पचने में हलकी हों। क्योंकि

बीमार की अग्निमन्द होती है और पाचन शक्ति निर्बल। ऐसी हालत में यदि खराब पदार्थ ला धरें तो वह खावेगा क्या? और जियेगा किससे? यदि नर्स कहे कि मैं तो इतनाही काम करूंगी कि रसोई घर से भोजन ला कर बीमार को देदेना; तो काम कैसे चलेगा। उसे अपनी बुद्धि का उपयोग कर ठहराना चाहिये कि बीमार को क्या देना और क्या नहीं। हम ऐसे बहुत से रोगियों को देखते हैं कि जिन्हें दिन भर भूखों मरना पड़ता है क्योंकि उनके प्रत्येक पथ्य में कुछ न कुछ वस्तु बिगड़ ही जाती है।

ऐसे मौके पर नर्स को सूझना चाहिये कि कौन वस्तु खाने के लिये शीघ्र ही आ सकेगी। यदि उसे सूझे तो समझना चाहिये कि वह काम के लायक ही नहीं है। उसे यह जानना चाहिये कि भोजन के वक्त यदि रोगी कुछ देर के बाद खायगा। परन्तु नर्सें इस बात को नहीं समझतीं। कोई कोई समझती हैं कि इतनी सोचा बिचारी करना नर्स का काम ही नहीं है अथवा कोई कोई कह भी देती हैं कि हमारा यह काम नहीं है। वे इस रोगी के काम को रोगी पर डाल देती हैं। यदि रोगी नर्स को ऐसे ऐसे काम सिखाने की खटपट में पड़ेगा तो उसे विशेष श्रम उठाना पड़ेगा। इसकी अपेक्षा तो यही ठीक है कि वह नर्स के अज्ञान से

होने वाली असुविधा को घड़ी भर सहन करले अर्थात् थोड़ी देर भूखों मरले क्योंकि वह पहलेही बीमार और औटा हुआ होता है दूसरे को सिखाने में इतनी शांतता उसके अंग में आवेगी कहां से। क्या घर में और क्या शफाखानों में अफसोस है कि रोगी को ऐसी असुविधा सहनी पड़ती हैं।

नर्सों को मेरा कहना यह है कि उन्हें चाहिये कि जो कुछ बीमार को खाने को देना हो उसको खूब विचार कर देना चाहिये। पहिले बीमार ने क्या क्या खाया है, उसके पेटे में कितना गया है, अब क्या देना है, रात को क्या देना होगा इत्यादि बातों को उसे सोच लेना चाहिये। रोगी के घर के मनुष्यों को इस बात का नियम करलेना चाहिये कि जो कुछ नर्स दे वही रोगी को मिले और कोई कुछ न दे। नर्स की सुविधा या असुविधा पर खाने पीने का समय ठहराना ठीक नहीं है। रोज अमुक समय या इतने बजे भोजन का समय मुकर्रर कर देने से रोगी को भी उसी समय भूख लग जाने की आदत होजाती है। ऐसी हालत में यदि किसी कारण से नर्स भोजन कराने न आसकी और किसी ने रोगी को ठीक समय पर खाने को न दिया तो उसे कष्ट हुए बिना नहीं रहता। इसलिये नर्स को चाहिये कि वह इस बात का अच्छी तरह इंतिजाम

करदे कि उसके कारण उसके रोगी को कभी कुछ तकलीफ न हो। "क्या करूं मैं लाचार थी, न आसकी," इत्यादि शब्द कह कर दुःख प्रदर्शित करने से कुछ रोगी की वह तकलीफ कम न होजायगी जो उसे हो चुकी है। "आज खाने की चीज़ें नहीं रहीं और बाजार से लाने वाला कोई नहीं है" ऐसा कहकर ठीक समय पर रोगी को खाना न दिया गया तो उसे कितनी देर तक रास्ता देखना चाहिये? जिस बिचारे को इतने दिनों तक एक घड़ी भर भी न देर हुई वह कष्ट भोगे विना चार चार पांच पांच घंटे क्यों कर दम लेगा? ऐसा समझने पर भी ऐसे के ऐसे मामले होते हुए हमारे सुनने में आते ही रहते हैं। जैसी खराब यह बात है वैसी ही खराब यह तरकीब है कि जब नर्स के पास खूब सामान मौजूद हो तब जब चाहा तब खाने को दे दिया या रोगी के मांगतेही दे दिया। यदि कोई फल फूल लाया तो उन्हें नियमपूर्वक उचित वक्त पर न देकर जब रोगी ने मांगे तभी या नर्स के जी में आई तभी देदिये, यह ठीक नही है और न यही ठीक है कि रोगी के सिरहाने छीलछाल कर इस विचार से रखदिये जायँ कि जब बीमार की इच्छा होगी तभी खालेगा। जिसको दूध पचना भी कठिन हो ऐसे रोगी को फल देने से उस का पेट दुखने लगता है और उसके सामने हमेशा फल रहने से उन

से रोगी को घिन आजाती है, फिर वह खा ही नहीं सकता अतएव ये तरकीबें ठीक नहीं हैं।

अन्त में मुझे एक सूचना और देना ठीक मालूम होता है वह यह है कि जिस बर्तन में (प्याला, कटोरी, थाली वगैरः में) खाने का पदार्थ रोगी के पास पहुंचाया जाय वह बर्तन बाहर से मैला न हो। खाने पीने की चीजों के बर्तन भीतर और बाहर से बिल्कुल स्वच्छ और कोरे होने चाहिये। पीने का पदार्थ यदि प्याले में हो और प्याले को मुंह तक लेजाना पड़े तो उसके नीचे कटोरी भी होना चाहिये क्योंकि इससे प्याले का पदार्थ बिछौने पर, कपड़े पर, बदन पर या तकिये पर न गिर कर गिरना हो तो कटोरी में ही गिरेगा। यद्यपि यह बात तुच्छसी है परन्तु इस पर रोगी के असुविधा व कष्ट होने न होने का दारोमदार है। कटोरी न होने से यदि उसके बदन वगैरः पर पतला पदार्थ गिर गया तो फिर वह पतले पदार्थों के पीने से घृणासी करता है।

प्रकरण ७वां

कौनसा अन्न खाना चाहिये ?

यह एक बड़ाही विकट प्रश्न है कि बीमार मनुष्य को क्या खिलाना चाहिये। इस विषय में भांति भांति के मनुष्यों के दिमाग में भांति भांति की कल्पनाएं भरी हुई हैं। विशेष करके कम समझ नर्सों के दिमाग़ में कुछ विचित्र कल्पना भरी होने से उनके हाथ से बार बार ग़लतियां होना सम्भव है। बहुतों को ख्याल होता है कि मांसादि पदार्थ विशेष शक्ति बढ़ाने वाले हैं, इस लिये वे 'शोरवा' वगैरः देने की ओर विशेष झुकते हैं परन्तु शोरवा अनेक भांति से बनाया जाता है। इससे उसके सत्व में बहुत फ़रक पड़जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि गरम गरम शोरवे में चाह की तरह कुछ मादक धर्म है और वह चढ़े हुए बुखार में भी थोड़ा बहुत दिया

जासकता है। किन्तु रोगी के बिल्कुल अशक्त होजाने की हालत में उसी के आधार पर बैठा रहना ठीक नहीं है। बीमारी मिटजाने बाद जो कमजोरी रहती है उसे दूर करने के लिये शोरवे से ज्यादा ताक़त देनेवाली चीज को काम में लाना चाहिये। कितने ही मनुष्य ऐसा समझते हैं कि पाली हुई मुर्गी के अंडे, मांस के बराबर ही ताक़त देनेवाले होते हैं, किन्तु यह समझ भूल भरी हुई है। इसके सिवाय एक बात और भी है। वह यह है कि अंडे सबको एकसा गुणभी नहीं करते। पित्त प्रकृति वालों को तो वे ठीक होते ही नहीं। यह बात कुछ छिपी हुई नहीं है कि यदि रोगी पहिले से ही मांस खाने वाला हो और मौजूदा हालत में भी खा सकता हो तो उसके लिये मांस खाना ही ठीक होगा; परन्तु यह याद रहे कि केवल मांस के खाने से प्रकृति ठीक न हो सकेगी, मिश्र अन्न खाना ठीक होगा। क्योंकि केवल मांस खानेवाले मनुष्य को "स्कर्वी" नाम के रक्त दोष से पैदा होनेवाले रोग होजाते हैं, मुँह और जीभ पर छाले हो जाते हैं, मसूड़ों से खून गिरने लगता है। सन्धें दुखने लगती हैं और चक्कर आने लगते हैं। मांस खाने के साथ ही शाक, भाजी, पाला, फल फूल वगैरः भी खाने ही चाहिये, यह बात नर्स को हमेशा याद रखना चाहिये। यह बात मंजूर है कि अरारोट की दरडी भी शोरवे की तरह ही फूंक मारते हुए जल्दी ही पक

जाती है और शीघ्र ही पच जाती है, परन्तु है तो आखिर में पानी ही। इससे तो थूली अच्छी क्योंकि उसमें कस विशेष होता है और जल्दी बुस नहीं जाती (बिगड़ नहीं जाती)। इसलिये जहां कुछ हानि नहीं हो वहां अरारोट की जगह थूली देना ठीक है।

कहीं दूध और दूध से बनाये हुए पदार्थ रोगी के लिये ठीक समझे जाते हैं। सब स्निग्ध पदार्थों में मक्खन हलका होता है। यद्यपि उसमें और दूध में बहुत फ़रक है तोभी उसमें पुष्टिकारक तत्व है और उसके साथ रोगी थोड़ी बहुत रोटी, चपाती वग़ैरः खा सकता है। गेहूं की धानी, चने के भूंगड़े, चावल के चिवड़े, अरारोट, साबूदाने, तेपिको आदि से वह विशेष पसन्द आता है। बहुत दिनों तक रेंगती चलती हुई बीमारी में मलाई के समान शक्ति बढ़ानेवाला पौष्टिक पदार्थ कोई दूसरा नहीं है। वह पचने में दूध से भी हलका है। उससे रोगी को घिन नहीं होती। दूध से ख़ास तौर पर एक पदार्थ और बनाया जाता है उसका नाम है बांसोदी। यह बड़ी पुष्टि-कर्ता और स्वादिष्ट होती है परन्तु पचने में बड़ी कड़ी होती है। अतएव बीमार को देने लायक चीज़ नहीं है।

ताजा दूध एक अनमोल चीज़ है। परन्तु उसका उप-योग ठंढा होने के पहले पहल किया जाता ठीक है। उसे बासी न होने देना चाहिये। यदि वह बासी होगया तो

उसके बराबर हानि पहुंचानेवाली दूसरी चीज़ कोई न होगी। उससे दस्त लग जाते हैं। इसलिये नर्स को चाहिये कि वह दूध पिलाने से पहिले इस बात की जांच करले कि दूध खराब तो नहीं होगया है। बड़े २ शफाखानों और सार्वजनिक संस्थाओं में, इस बात पर जैसा ध्यान दिया जाना चाहिये, नहीं दिया जाता। गरमी के दिनों में दूध बहुत जल्दी खटा जाता है। बाजार में जो दूध बिकता है वह खराब होता है,। बीमार के योग्य नहीं होता। चाह के भीतर यदि कोई पोषण करनेवाली चीज़ मिलाई जाती है तो वह दूध ही मिलाया जाता है। जो रोगी चाह पर ही रहता है उसके पेट में पोषण करनेवाली वस्तु दूध दी जाती है। यदि वह दूध भी खराब हुआ तो फिर रोगी की दुर्दशा का क्या ठिकाना रहा? मक्खन निकाल लिया हुआ दूध, दूध से बिलकुल जुदा पदार्थ है। उसे तपाने की हम लोगों में मनाही है परन्तु वास्तविक दृष्टि से देखते हुए कहा जा सकता है कि तपाने में थोड़ा बहुत फ़ायदा ही होता है।

बीमार को मिठाई अच्छी नहीं लगती, फिर वह बीमार जवान हो या बूढ़ा हो, स्त्री हो या पुरुष हो, धनवान हो या गरीब हो, घर में हो या ख़ैराती शफाख़ाने में हो, इसी प्रकार मेरे देखने में यह भी नहीं आया कि अच्छी हालत में जिन्हें मिठाई न भाती हो उन्हें

बीमारी में भाने लग गई हो। हां, ऐसे उदाहरण बहुत मिले हैं कि अच्छी स्थिति में जिन्हें मीठा अच्छा लगता था उन्हें बीमारी में शक्कर से घिन होगई। बुख़ारवाले को प्रायः खट्टी, चरपरी चीज़ें अच्छी मालूम होती हैं, सिर्फ 'स्कर्वी' के रोगी को मिठाई खाना अच्छा लगता है।

मुरब्बा घर के बड़ी बूढ़ी बाई बापड़ी, या वैद्य हकीमों को बहुत पसन्द है। पित्त पर जितनी दवाई चूर्ण मात्र वगैरः दी जाती हैं प्रायः मुरब्बे के साथ लेने को कहा जाता है। ऐसी भी परिपाटी है कि प्रातःकाल उठतेही बहुत से मनुष्य मुरब्बा खाते हैं। कोरा मुरब्बा कितना पुष्टिकारक है सो कहा नहीं जा सकता। मेरे ख़याल में तो कुछ भी पुष्टिकारक नहीं है। मीठे के ख़याल से इसे खाना है तो फिर इसकी जगह शक्कर ही शक्कर क्यों न फांकी जावे।

दूध की पोषणशक्ति के बारे में सब का मत एकसा नहीं है। कितनेही मनुष्य दूध को अन्न में नहीं गिनते, परन्तु यह बात भूलने लायक नहीं है कि पाव मांस में जितना अन्न का अंश है, उतनाही अन्नांश आध सेर दूध में भी है। यहां पर यह विचार नहीं करना है कि दूध या और कोई चीज़ पौष्टिक है या नहीं, मुख्य प्रश्न तो यह है कि कौन सी वस्तु रोगी को मानेगी और कौनसी

नहीं। रसायनशास्त्र का मत यहां पर उपयोगी नहीं हो सकता, रोगी को स्वयं निश्चित कर कहना चाहिये कि उसे अमुक वस्तु मुआफ़िक होती है। प्रायः ऐसा होता है कि जो अन्न अच्छे आदमी को फ़ायदा पहुंचाता है, वह बीमार को और भी बीमार कर डालता है। और जो अन्न बीमार को फ़ायदा पहुंचाता है उसको लेने से अच्छा आदमी कमज़ोर हो जाता है। इससे जिसको जो माने वह अन्न देना चाहिये।

कितनेही रोगियों को बाज़ार की पकी हुई चीज़ें अच्छी नहीं मालूम होतीं। मेरे देखने में ऐसे बीमार आये हैं कि जो कई दिनों तक सिर्फ इसलिये उपवास किया किये कि वहां पर रोज़ बाज़ार से खाना मंगवाया जाता था। परान्न का ग्रहण न करनेवाले अत्यन्त ग़रीब मनुष्य भी ख़ैराती शफ़ाख़ानों में जाकर नहीं रहना चाहते, इसका भी कुछ ऐसाही कारण है। जो चीज़ बाज़ार से आने के कारण उनके खाने में नहीं आती, यदि वही चीज़ उनके घर की मंडली के द्वारा लाई जावे, तो वे उसे बड़ी खुशी के साथ खालेते हैं। परन्तु ऐसे लोगों में प्रायः अशिक्षित ही विशेष होते हैं।

रोगी को क्या खिलाना चाहिये, इस बात को जानने के लिये, शुश्रूषा करनेवाले को जान लेना चाहिये कि बीमार के कोठे को मुआफ़िक़ क्या आता है। पुस्तक के

लिखे हुए लेख को पढ़ने से काम न चलेगा। कारण कि स्वच्छ हवा के बराबर ही यदि कोई महत्व की वस्तु है तो स्वच्छ और उत्तम अन्न ही है। इसके लिये बीमार को चाहिये कि डाक्टर और नर्स की मदद करें। डाक्टर चौबीस घंटों में एक दो बार रोगी को देखने आता है और कभी कभी तो वह चार, चार, छह, छह, आठ आठ दिन में आता है। उस बिचारे को कैसे ज्ञान पड़ेगा कि रोगी को अमुक वस्तु मुआफ़िक आई या नहीं? यह बात तो रोगी को स्वयं कहना चाहिये, या उसके सगे रिश्तेदार इष्ट मित्रों को कहना चाहिये। डाक्टर तो सिर्फ इतना कह सकता है कि "प्रकृति पहिली बार से अच्छी है या बुरी, अथवा वैसी ही" है। मेरे विचार में नर्स का एक मुख्य काम यह है कि वह इस बात का खूब ध्यान रक्खे कि, "अन्न खाने बाद रोगी की प्रकृति पर उसका 'अच्छा बुरा' क्या परिणाम हुआ"। डाक्टर के मिलते ही सब हाल नर्स को कह देना चाहिये।

चाय के बारे में बहुत से मनुष्यों की राय बड़ी मजे की है। बहुत से मनुष्य चाय को बहुत हानि करने वाली मानते हैं। वे रोगी को एक बूंद भी चाय नहीं पीने देते और दूसरे जो चाय के कट्टर सेवक हैं वे उठते बैठते रोगी को चाय के सिवाय और कुछ नहीं पीने देते। हमेशा चाय पीनेवाले मनुष्य यदि बीमार होजाते हैं

तो उन्हें चाय नहीं भाती, परन्तु जब उनकी प्रकृति सुधरने लगती है तब सबसे पहले उनका जी चाय पीने को चाहता है। यह समझना चाहिये कि उन्हें चाय पीने की इच्छा हुई तो प्रकृति सुधरने लग गई है। चाय और काफी दोनों उत्तेजक पदार्थ हैं। इससे यह मतलब नहीं है कि जितने प्याले चाय पियेंगे उतनी ही फुर्ती आवेगी। थोड़ी सी चाय, या काफ़ी के पीने से जो फुर्ती आती है वह बहुत पीने से नहीं आती। उसका तो परिणाम ही उलटा होता है। शरीर अपने वश में नहीं रहता और पाचनशक्ति कम होजाती है। एकाध प्याले के देने से कुछ फुर्ती आजाती है, इस विचार से जो ज़्यादा चाय या काफ़ी नर्स पिला देगी तो ठीक न होगा। कितने ही मनुष्यों को चाय का व्यसन ऐसा लग जाता है कि उनका काम, बीमार होने पर भी, चाय के बिना नहीं चलता और कुछ उनके मुआफ़िक़ ही नहीं आता। ऐसे रोगियों को चाय की जगह क्या देना चाहिये यह नहीं जान पड़ता। सुबह उठते ही रोगी को प्याला भर चाय पिला देने से दो तीन घंटे नींद आजाती है। जिन्हें चौबीस घंटे नींद नहीं आती उन्हें सायंकाल के पांच बजे बाद कभी चाय न पिलानी चाहिये। क्योंकि चाय के नशे में पहिली रात में नींद नहीं आती, एक बार नींद उड़ कर फिर जल्दी ही न

आगई तो फिर चैन नहीं पड़ती, और थकावट आजाती है। रात भर जगने के बाद प्रातःकाल में एक प्याला चाय मिल जाने से थकावट दूर हो जाती है। बुखार वालों को काफ़ी से चाय अच्छी लगती है, दूध देखे भी नहीं सुहाता। चाय में जितना दूध डाल दिया हो सिर्फ उतना ही काम में आ सकता है। चाय से काफी में उत्तेजना करने की शक्ति ज्यादा है परन्तु पाचनशक्ति को भी यही ज्यादा खराब करती है। रोगी को ख़ूब प्यास लगती है। वह बार बार चाय मांगता है। परन्तु नर्स का काम नहीं है कि, चाय से प्यास मिटती है यह कह कर रोगी को चाय ही चाय पिलाती रहे। प्यास लगे तो क्या देना चाहिये? इसके बारे में नर्स को चाहिये कि वह प्रतिदिन डाक्टर से पूँछ लिया करे और उसके कहने के मुआफ़िक बार्ली वाटर, सोडा वाटर, दूध, या लेमोनेट में से कुछ दिया करे। बहुत से मनुष्य कहा करते हैं कि अशक्त मनुष्यों को और विशेष कर उन्हें कि जिन्हें सख्त मिहनत का काम करना पड़ता है काम पर जाने से पहले कुछ खालेना चाहिये। परन्तु चाय के प्याले से जो फुर्ती आजाती है वह सिर्फ रोटी या बिसकुट के खाने से नहीं आती, इस बात को वे स्वयं मंजूर कर लेंगे। खाली पेट काम पर जाकर मिहनत करने से थकावट हो जाती है और कुछ गरम गरम

पेय पदार्थ की ओर जी जाता है। इससे तो यही अच्छा है कि सुबह बाहर जाने के पहिले थोड़ी सी चाय, रोटी, बाटी, डबल रोटी, या बिसकुट, खा लिये जायँ। विशेष कर नर्स को इसका ध्यान रखना चाहिये। सिर्फ चार पांच बिसकुट चबा कर जाने से शान्ति नहीं होती और न यह तरकीब ही अच्छी है। चाय से, बिसकुट और बाटी में विशेष सत्त्व है इस विचार से बहुत जगह पर ऐसा रिवाज़ हो गया है कि बाटी खाकर बाहर जाते हैं। परन्तु दिन भर मिहनत करने के बाद, या दिन रात रेल में बैठ कर दूर का सफ़र कर आने पर, गरम गरम चाय का एक प्याला पीने से ही थकान दूर हो जाती है और होशियारी आ जाती है।

बीमार मनुष्य के लिये जो काफ़ी तैयार करना हो तो उसके बीज लाकर घर पर दलना चाहिये और फिर काफ़ी बनाना चाहिये। बाज़ार की काफ़ी ठीक नहीं होती क्योंकि उसमें चिकरी नामक पदार्थ मिला हुआ होता है। उससे कुछ काफ़ी का स्वाद अच्छा नहीं होता बल्कि जो काफ़ी में गुण हैं वे उसमें नहीं हैं। इसलिये दोनों के मिलाने की अपेक्षा शुद्ध काफ़ी का दिया जाना ही ठीक है और इस बात का विश्वास होने के लिये कि काफ़ी सर्वथा शुद्ध है घर पर उसके बीजों का दलना उत्तम है। जिन मनुष्यों को ख़ूब शारीरिक

श्रम करना पड़ता है तथा जिन लोगों को अत्यन्त मानसिक श्रम करना पड़ता है, उनके मत में काफ़ी की अपेक्षा चाय विशेष फ़ायदा करनेवाली है, और वह जितनी चढ़ती हो उतनी ही अच्छी। चढ़ती चाय पीना तन्दुरुस्ती का एक चिन्ह समझा जाता है। परन्तु वह थोड़ी होती है तब भी काम चल जाता है। हलकी चाय बहुत सी डाली जाय तब भी स्वाद नहीं आता फिर उस के लेने से क्या फ़ायदा ? जो स्त्रियां सब दिन घर में रहती हैं कहीं आती जातीं नहीं उनको यह बात कैसे मालूम हो सकती है कि नर्स को या काम धंदा करनेवाली स्त्रियों को कितनी मिहनत करनी पड़ती है। परन्तु सर्वसाधारण के ध्यान में यह बात आने योग्य है कि एकाध हास्पिटल के एक वार्ड को संभालना, कितनी होशियारी, कितनी चतुरता, कितनी मिहनत और कितने विचार का काम है।

कितने ही मनुष्य चाय काफ़ी की एवज़ में "कोको" लेने की सिफारिश करते हैं तो बहुतों को वह अच्छा नहीं लगता। हम लोगों को 'कोको' ज्यादा पसन्द नहीं है क्योंकि अव्वल तो उसका स्वाद ही चाय और काफ़ी से कुछ और ही तरह का है और दूसरे उसका असर भी शरीर पर कुछ और ही तरह का होता है। उसमें शरीर में फुर्ती लाने आदि का गुण नहीं है,। कहा

जाता है कि 'कोको' पीने से सब तरह की बादी मिट जाती है, परन्तु ऐसा हो तो भी वह चाय की जगह को नहीं पूरा कर सकता। चाय की एवज़ 'कोको' लेने को कहना और मूँगफली के दाने देना एक सा है।

रोगी को जो अन्न पानी देना होता है वह उसके सामने एक दम बहुत सा लाकर रक्खा जाता है। यह बड़ी भूल है। एकाध बीमार को पिलाना हो तो चार पांच चम्मच दूध रखना चाहिये उसके सामने चार पांच सेर दूध रखने से क्या फायदा? खाने पीने की चीजें एकदम बहुत सी ला रखने से कुछ उनमें पोषण धर्म तो विशेष आ ही नहीं जाता। एक समय में कितना अन्न पानी बीमार को देना चाहिये यह बात अच्छी तरह विचारपूर्वक ठहरा लेना चाहिये। एक दम बहुत सी चीज़ पेट में चली जायगी तो वह पचेगी नहीं। यही नहीं, बल्कि व्यर्थ पाचनशक्ति पर बोझा पड़ेगा। भात, का लौंदे का लौंदा, या खीर का, बाट के बाट का ले जाने से सम्भव है कि उस बीमार को नफ़रत आ जाय, जिसे अन्न से द्वेषसा हो रहा हो। और भी एक बात है, और वह यह है कि यदि बीमार ने सारा बर्तन मुंह से न लगाया, या सारे भात खिचड़ी वगैरः जूंठे न किये तो बीमार का छोड़ा हुआ अन्न खावेगा कौन? यह भी

तो हानि ही है। इसलिये नर्स को चाहिये कि वह अपने अन्दाज़ से ठहराले कि बीमार को जो कुछ देना है वह कितना होना चाहिये, कैसा साफ होना चाहिये कितना गाढ़ा होना चाहिये, कितना पतला होना चाहिये, इत्यादि, और फिर उसको इतना ही दिया जाना चाहिये जितना वह अपने आप खा सके।







पलंग और बिछौना।

बीमार मनुष्य के पलंग और बिछौने के बारे में भी दो चार शब्द लिखना ज़रूरी है। विशेष कर यह देखना बहुत ज़रूरी है कि बहुत दिनों तक एक ही बिछौने पर पड़े रहनेवाले बीमार का, पलंग और बिछौना कैसा होना चाहिये। बदन टूटने लगना यह बुखार आने का पूर्व रूप है परन्तु ख़राब बिछौना होने का भी चिन्ह है।

बीमारी शुरू होने के बाद, यदि बीमार को एक ही बिछौने पर, बहुत दिनों तक रात दिन पड़ा रहना पड़ेगा तो उसका परिणाम बड़ाही भयंकर होगा। वह

बिछौना कैसा हो जायगा और कैसा दिखाई देने लगेगा इसका विचार आपही स्वयं कीजिये।

रोगी को पसीना आया कि उसके नीचे का विस्तरा बदल देना चाहिये। पसीने से भीजी हुई चादर पर लेटे रहने से उस पसीने का क्षार उसके अंग में लग जाता है। इस तरह शरीर का पसीना बिछौने में और बिछौने की बू शरीर में आती जाती रहती है। ऐसी हालत में अगर बुखार न आवे तो होवे क्या? हरेक जगह–याने घर घर–जा कर देखिये $\frac{९०}{१००}$ सौ में से नब्बे भाग आप को ऐसी ही स्थिति में मिलेंगे। बीमार का बिछौना कैसा होना चाहिये, यह बात बतलाने के पहले यदि जानना हो कि उसमें क्या क्या दोष न होना चाहिये, तो एकाध ख़ास घर में चले जाइये और वहां के पलंग और बिछौनों को देख आइये, काम बन जायगा। पलंग की जगह एक लकड़ी की चारपाई है। जिस पर लकड़ी के तख़्ते जड़े हुए हैं। उस पर पुराने, जाड़े के, पत्थर से कड़े, गूदड़े बिछे हुए हैं। पसीना लग लग कर वे मैले से हो गये हैं। उनकी सीवन में, बगलों में, इधर उधर, खटकीड़ों के कुनबे जमा होरहे हैं। कचरा, धूल जुदा जम रहा है। उस पर अगर कोई चद्दर भी है तो, बुरी, बदबूवाली, मैली कुचैली है। वैसीही पसीने की बूवाली, दुलाई या खोल है और यही कैफियत

सिराने की तकिया का है। न उन्हें हवा दीजाती है और न गरमी। बीमार को बहुत दिन तक एक ही जगह पड़ा रहना होता है, इस लिये उसे रात दिन ऐसी स्थिति में रहना मंजूर करना पड़ता है, या अपने ही पसीने से भीजे हुए बिछौने पर पड़े रह कर दिन काटने होते हैं। एक दफे ऐसे बिछौने पर रोगी सोगया तो फिर उस बिछौने को कौन उठाता है-बिछौने को उठाने की छोड़ उसके सड़े, गले, टुकड़ों तक को कोई दूर नहीं करता। ओढ़ने बिछौने के कपड़े, हमेशा-बार बार-साफ़ हवा में और धूप में रखने चाहियें। रोगी को स्नान किये बाद जो कपड़े पहिनाने हों उन्हें कुछ गरम कर पहिनाने चाहियें। रात के खोले हुए कपड़ों को साफ़ और गरम किये बिना न पहराना चाहिये क्योंकि वे रातभर खूंटी पर टँगे रहते हैं इससे ठंढे हो जाते हैं। ये सब अहतियात ठंढ के दिनों में रखना चाहिये और ठंढे देशों में भी। अंगीठी पर कपड़ों को सेंक लेने से वे गरम हो जाते हैं और उनमें होकर हवा आने जाने लगती है। ये दोनों बातें बड़े महत्व की हैं। कपड़ों के स्वच्छ होने से भी उनका गरम होना और स्वच्छ हवा में रक्खा जाना विशेष महत्व का है।

अच्छे जवान के शरीर में से चौबीस घंटे में, श्वासोच्छ्वास या पसीने के द्वारा ३ पाइंट-कोई दो सेर-पानी

की भाफ़ निकलती है। यदि ऐसा मान कर हम आगे बढ़ें तो यह बात भी सही ही है कि वह जल शुद्ध नहीं है उसमें अनेक प्रकार के क्षारों का योग है। इसी से वह मैला होता है और बू देने लगता है। बीमार मनुष्य के, या बीमारी से तुरत उठे हुए मनुष्य के, शरीर से तीन पाइंट से भी ज्यादा स्वेद निकलता है और उसमें दोष भी ज्यादा होते हैं। यह सारा पसीना अंग से निकलने बाद जाता कहां है। इस प्रश्न का उत्तर एकही है और वह यह कि सब का सब बिछौने में जरता है उसे जाने को जगह और है ही कहां? एक बार पसीना उसमें जर गया तो जानना चाहिये कि वह वहीं रह चुका। क्योंकि पलङ्ग की गादियां पलटी नहीं जाती हैं। हां, चादर पलटी जाती है परन्तु वह भी रोज नहीं पलटी जाती। कभी कभी तो आठ आठ दिन में एक बार पल्टी जाती है। फिर उसमें हवा लगे तो कैसे लगे और धूप लगे तो कैसे लगे। स्वच्छ चादर एकाएक भींज जाय तो उन्हें, दोहरा कर सुखाते हुए हम नर्सों को देखते हैं, परन्तु पसीने में भींगी हुई चादर को धूप में रखने की उसे नहीं सूझती रोगी के मल मूत्रादि पदार्थों से अत्यन्त दुर्गन्ध पैदा करनेवाली और हानिकारक वायु निकलती हैं। मलमूत्र के पात्र रोगी के पलङ्ग के नीचे रख देने की बहुत सी जगह चाल है। वह दिखाई न दे इसलिये उसके आड़ के लिये

चादर वगैरः लटकादी जाती है। यह बात बुरी है। उस पात्र के न दिखाई देने से, उससे होनेवाली हानियां कुछ बन्द नहीं हो जातीं, क्योंकि उसमें से दुर्गन्ध और हानिकारक वायु बराबर निकलती ही रहती है। पलङ्ग के नीचे पहिले तो शुद्ध हवा कम जाती ही है, फिर उसके आड़ के लिये चादर वगैरः कर दी जाती है। जिससे वायु का संचार बहुत ही कम होता है। तिस पर भी ये पात्र रख दिये जाते हैं। इससे और कोई दूसरी बात बुरी नहीं हो सकती। इन असुविधाओं से पलङ्ग के नीचे की ही हवा बहुत ख़राब नहीं होती, धीरे धीरे सारे कमरे की हवा बिगड़ जाती है। इस हवा के श्वासोच्छ्वास में जाने से बहुत कुछ सम्भव है कि रोगी की बीमारी बढ़ जाय, और, और भी कोई नई बीमारी खड़ी हो जाय। इस लिये चाहिये कि पलङ्ग के नीचे इस तरह की कोई वस्तु न रक्खी जाय, बल्कि उसके नीचे भी शुद्ध हवा आ जा सके ऐसा बन्दोबस्त किया जाय।

"यह बिछौना बहुत अच्छा है। यह रोज काम में आता है" ऐसा कह कर यदि घर में कोई बीमार हुआ हो तो उसे उस पर सुला देते हैं। परन्तु यह चाल अच्छी नहीं है। रोज काम में आनेवाला बिछौना उस पर सोनेवाले के पसीने से बदबूदार हो ही जाता है। यदि वही रोगी को भी दिया गया तो उसको ब

रोगी के बदन में क्यों न आयगी? हां, यदि उसे धूप और हवा दी जाती हो तो बात ही दूसरी है। परन्तु ऐसा तो जन्मान्त में भी नहीं होता। "रोज काम में आनेवाला बिछौना" यह वाक्य सुनते ही मुझे तो वास्तव में न मालूम क्या होने लगता है।

क्या अच्छे आदमियों के लिये और क्या बीमार मनुष्यों के लिये पलङ्ग लोहे का होना चाहिये। उस पर रूओंवाली गद्दी होना चाहिये। चादर इस तरह लगाई जानी चाहिये कि वह पलङ्ग से नीचे न लटकती रहे। दिन में कुछ देर तक बिछौने को धूप में रखकर हवा लगने देना चाहिये।

बीमार का पलङ्ग बहुत ऊंचा न होना चाहिये। साधारणतया कोच के बराबर ऊंचा होना चाहिये। पलङ्ग यदि ऊंचा होगा तो ज़मीन पर की चीज़ बीमार के हाथ न आसकेगी और प्रत्येक छोटी मोटी चीज़ के लिये, या तो उसे बार बार पलङ्ग से उतरना होगा या किसी को बुलाना पड़ेगा। ये दोनों बातें त्रास देनेवाली हैं। पलङ्ग भीत से भिड़ा कर न रखना चाहिये क्योंकि पलङ्ग के चारों ओर नर्स फिर सके। इतनी जगह खाली रहना ही चाहिये ताकि पलङ्ग के किसी भी कोने में बगल में, हाथ पहुंचाने के लिये नर्स को पलङ्ग पर झुकने की नौबत न आये। पलङ्ग यदि बड़ा भारी और ऊंच

होगा तो नर्स का हाथ एक ओर खड़े रहने से दूसरी ओर न पहुंच सकेगा।

बीमार का कमरा यदि आठ नौ फुट ऊंचा हो तो यह योग्य नहीं है कि बीमार का पलङ्ग चार पांच फुट ऊंचा रहे, क्योंकि यदि बीमार बिछौने पर जरा उठ बैठा तो उसका सर बिल्कुल छत के पास पहुंच जायगा और उसे भय होगा कि कहीं माथे में लग न जाय और इसी तरह की शङ्का भी होने लगेगी कि क्या यह किसी ने हमारे आस पास कबर तो नहीं बँधाई है! ऐसी ही कोठरी की यदि खिड़की छत से ख़ासी नीची हुई तो बीमार के सर को ताज़ी हवा भी नहीं मिल सकती। मिले भी कैसे? हवा आने के मार्ग से सर तो सवा हाथ ऊंचा हो गया। ऐसी हालत में कोठरी की खिड़की खुली हुई तो क्या और बन्द हुई तो क्या? कोठरी में सोने वाले किसी भी मनुष्य का सर छत वाली खिड़की से ऊंचा न जाना चाहिये, चाहे फिर वह मनुष्य बीमार हो या तन्दुरुस्त। बीमार का पलंग यदि कोच से ऊंचा होगा तो बीमार उस पर उतरने चढ़ने के श्रम से थक जायगा, या, चक्कर खाकर बेहोश हो जायगा। यदि कुछ चल सकने योग्य होगा तो इस उतरा चढ़ी से उसका दम भर आयगा, साफ़ हवा में जाकर बैठना बन्द हो जायगा और उसके दूसरे २ व्यायाम आये गये हो जायंगे।

बीमार का पलंग कमरे में ऐसी जगह रक्खा जाना चाहिये कि जहां पर गरमी या प्रकाश अच्छी तरह आते हों और जहां से बीमार खिड़की में होकर देख सके कि बाहर क्या हो रहा है। पलंग के चारों पायों पर चार लकड़ियां ठोंक कर उस पर बारीक चादर डाल देने की पुरानी चाल अब भी कहीं कहीं पाई जाती है परन्तु मुझे यह सर्वथा पसन्द नहीं है। वह जितनी जल्दी मिटे उतना ही अच्छा। इसी प्रकार दूसरों के गादी तकियों को भी कभी किसी के काम में नहीं लाना चाहिये। अच्छे मनुष्य के लिये भी जब ऐसा करना ठीक नहीं है तब बीमार के लिये तो कदापि ठीक नहीं है। बिछौनों को रोज नहीं तो आंतरे पांतरे जरूर धूप में रखना चाहिये। अठवाड़े में तो, उन्हें साफ़ हवा और धूप में रखने से कभी चूकना ही अच्छा नहीं है। बीच बीच में भी उन्हें और भी गरम करते रहना चाहिये। बच्चों के बिछौनों को भी जरूर धूप में रखते रहना चाहिये। जिन घरों में बच्चे और बड़े सब एक ही कमरे में सोते हों, वहां पर क्या बच्चे और क्या बड़े सब के बिछौनों को भर दोपहरी में धूप में रखना अत्यन्त जरूरी है। बहुत से बच्चों को ऐसी आदत होती है कि वे मुंह ढांक कर सोते हैं। ऐसे बच्चों को प्रायः कंठमाल (Scrafula) वगैरः बीमारी हो जाती है। एक थैली में मुंह बन्द कर सोना

या ओढ़ने से मुंह ढांक कर सोना बराबर है। क्योंकि श्वासोच्छ्वास में वही हवा बार बार आती जाती है। ओढ़ने के भीतर की हवा, शरीर के पसीने और सांस से खराब होती रहती है और वही पीछे शरीर में जाती है। क्या यह कुछ धोके की बात नहीं है? ये छोटी छोटी बातें बड़े महत्व की हैं। इनकी ओर दुर्लक्ष करना नर्स का काम नहीं है।

क्षय कास के (Pulmonary or consumpt ion) रोगिय को जिस वक्त 'खांखां' हो रहा हो उस वक्त मुंह ढांक कर सो जाने से कुछ फायदा मालूम होता है। इसका कारण यह है कि ओढ़ने के भीतर की हवा कुछ गरम होती है और उसमें कुछ नमी होती है। कुछ भी हो, शरीर को कुछ गरम और आर्द्र हवा की आवश्यकता ही हो तो उसके लिये, अपने ही ओढ़ने में की हवा को लेने के समान बुरी बात कोई नहीं है, क्योंकि इस हवा से बुरी हवा दूसरी नहीं है। यदि नर्स ने मुंह ढांक कर सोने की घृणित आदत को रोगी से न छुड़ाई तो उसके रोगी एक एक कर के मर जांयगे, इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है। यदि बीमार को खांसी बड़ी जोर से चल रही हो और नमीदार हवा की जरूरत ही जान पड़े तो रोगी के मुह पर एक पतील रेशम का रूमाल डाल कर, अंगीठी में पानी को खूब उबाल देना चाहिये। परन्तु याद रहे

कि यह बात बहुत देर तक समान रीति से न होती रहे नहीं तो बहुत सम्भव है कि बीमार को सर्दी हो जाय।

एक ही जगह समान रीति से पड़े रहने के कारण रोगी की पीठ पर या नितंब पर छाले पड़ गये हों तो उसके नीचे कम्बल कभी न बिछाना चाहिये। उसके बदन पर नमी जमती रहती है और वह बदन की गरमी से गरम होहो कर सारे बदन में पुलटिस लगाये मुआफिक हो जाती है। बीमार को ओढ़ने के लिये ऊन की पतली सी लोई या धारवाड़ी कंबलियां अच्छी होंगी। सूत की रजाई या दुलाई ठीक नहीं है। क्योंकि ओढ़ने से रोगी के बदन का सारा पसीना इनमें आता है, वह, वहां का वहां, वैसा का वैसा, रहता है। एक बात और भी है। इनमें बोझ ज्यादा होता है। अशक्त रोगी को जितना हलका ओढ़ना दिया जाय उतना ही ठीक है। भारी होने से रोगी को नींद नहीं आती। लोई, हलकी भी होती है और पसीना वगैरः भी उसका तुरन्त साफ हो जाता है। रोगी का कमरा ऐसा रक्खा जाना चाहिये कि जिसे देखने से रोगी का उद्‌त्रास सदा बना रहे, उसके चेहरे पर उम्मेद झलकती रहे। नर्स को यह याद रखना चाहिये कि ऐसा होने से रोगी को नींद आने में बड़ी मदद होती है। माना कि हवा में फेर फार होकर रोगी पर जो कुछ

परिणाम हो वह नर्स के हाथ में नहीं है, परन्तु कमरे की हवा को साफ रखना तो बीसों बिस्वे उसके हाथ की बात है।

जो नर्सें अच्छी होती हैं वे बीमार के बिछौनों को, स्वयं अपने हाथों से अच्छी तरह बिछाती हैं। नींद के महत्व को समझनेवाली नर्स इस बात को सहज में समझ जांयगी कि अच्छे बिछौने का होना कितनी जरूरी बात है। बिछौने में थोड़े भी सल हों तो वे बदन में चुभते हैं, और तब तक, अच्छी नींद नहीं आती जबतक वे निकाल न दिये जांय।

हम पहिले ही बतला चुके हैं कि बीमार की छाती पर ओढ़ने का बोझा न पड़ना चाहिये, परन्तु बहुत सी नर्सें ऐसी बेपरवाह होती हैं कि वे इस बात की कुछ परवाह नहीं करतीं; वे बीमार की छाती पर कम्बल को दोहरा करके डाल देती हैं, उसके नीचे आड़े और ऊँचे और नीचे, (चाहे जैसे) कम्बल बिछा देती हैं। जैसा चाहिये गादी वगैरः को साफ कर बिछौना ठीक नहीं करतीं। इन कामों के करने में नर्स को कुछ भी मिहनत नहीं होती हो सो नहीं है। परन्तु इतनी मिहनत होने पर भी जैसा उत्तम हवा का बन्दोबस्त होगया वैसा उत्तम बिछौना नहीं होता इससे रोगी को त्रास आजाता है। वह समझने लगता है कि दूसरे

को इतनी तकलीफ होने पर भी काम ठीक नहीं हुआ इससे तो यही अच्छा है कि अपना बिछौना आप ही कर लूं।

प्रत्येक बीमार को श्वासोछ्वास करने में थोड़ा प्रयास पड़ता है। ऐसी सूरत में अशक्त हुए रोगी की छाती ओढ़ने से न दब जाय और उसे श्वासोछ्वास में त्रास न हो इसके लिये, उसके सिर के नीचे अच्छी सी तकिया रखकर ज़रा उसकी गर्दन को ऊँचा कर देना चाहिये। नर्स को भूलना न चाहिये कि सिरहाना लगाने का मुख्य उद्देश्य ही यही है। परन्तु नर्सें इस ओर ध्यान नहीं देतीं। उनकी आदत पड़ी हुई है कि वे एक तकिये पर दूसरा तकिया रख देती हैं। इससे रोगी का माथा छाती पर नम जाता है, उसके खवे आगे झुक जाते हैं, फुसफुस (Lungs) दब जाते हैं, और अच्छी तरह सांस नहीं आता। बीमार का माथा तकिये के आसरे नहीं रहता, बल्कि वह तकिये का टेका सा हो जाता है। तकिया किस तरह रखना चाहिये इसके बारे में कुछ एक ही नियम नहीं किया जा सकता, क्योंकि हर एक मनुष्य की तकिया लगाने की परिपाटी जुदी होती है। परन्तु यह कहा जा सकता है कि तकिये की गरज़ इतनी ही है कि सांस लेने में आसानी हो, कंधे फैले हुए रहें और सिर सँभला रहे। इन बातों की ओर ध्यान न देने से

नाज़ुक बीमारियों में पड़े हुए बीमारों का बुरा हाल होता है। गर्दन के नीचे का तकिया यदि सरक कर नीचे गिर गया और बीमार में इतनी ताक़त न हुई कि वह उसे उठा ले तो वह जो उसके हाथ लगता है (किताब वगैरः) उसे ही अपने सिरहाने रख लेता है। लम्बे मनुष्यों को जितनी सिरहाने की आवश्यकता होती है उतनी ठेंगने मनुष्यों को नहीं होती। मस्तक के लिये जैसे सिरहाने की ज़रूरत है वैसे ही थोड़ा सा आधार पैरों को भी मिले तो अच्छा है। बीमार मनुष्य के लिये बिछौना करते वक्त जिन बातों पर ध्यान देना चाहिये उसका वर्णन हम कर चुके। बीमार अच्छा होने लगे उसके बाद भी ये नियम बराबर पालते रहना चाहिये। एक जगह पड़े पड़े जब बीमार को त्रास आता है तो वह घड़ी भर कुर्सी पर बैठना चाहता है। इस लिये उसके कमरे में एक आराम कुर्सी रहना चाहिये। वह ऊँची न होना चाहिये। उस पर गादी और तकिया होना चाहिये। पांव रखने के लिये उसके पास ही एक स्टूल रहना चाहिये। वह थोड़ा ऊँचा होना चाहिये। क्योंकि कुछ ऊँचा आधार मिलने से घुटने और कमर को आराम मिलता है। कुर्सी ऐसी होनी चाहिये कि जिससे रोगी के बदन के प्रत्येक अवयव के जुदे २ हिस्सों को आराम पहुंचे। परन्तु वैसा आराम उसे नहीं पहुं-

पाया जाता, आराम पहुंचाना दूर रहा, वह कुर्सी पर जाकर बैठता है तो बैठने के साथ ही, उससे शास्त्रार्थ करना शुरू कर दिया जाता है और कहा जाता है कि वह अपने आप कुर्सी पर से फौरन उठ कर चला जाय ?

प्रकरण ९वां

प्रकाश।

"कैसी काली अँधेरी रात है" रोगी के मुँह से प्रायः ऐसे उद्गार सुनने में आते हैं। इसका कारण क्या है? दिन तो किसी तरह निकल भी जाता है परन्तु रात काटे नहीं कटती ऐसा क्यों होता है। इसका कारण यही है कि दिन में उजेला होता है। मनुष्य इधर उधर फिरते रहते हैं। रात होते ही इधर उधर सुनसान हो जाता है। बीमार को अँधेरा अच्छा नहीं लगता। शुद्ध हवा के मुआफिक ही बीमार को यदि कोई दूसरी चीज़ पसन्द है तो वह उजेला ही है और वह उजेला भी दिये का नहीं, सूर्य का होना चाहिये। बीमार के कमरे में जिधर जिधर सूरज का प्रकाश फिरता हो उधर ही उधर उसका बिछौना

फिरा देने से, या बिछौने को ऐसी जगह करने से कि जहां सूरज का प्रकाश बहुत देर तक रह सकता हो, बीमार की तबियत सुधर जाती है। इसमें किसी तरह का शक नहीं है। बहुत ही चतुर रँगरेज़ अगर कोई है तो सूरज, जो पौधे अँधेरे में रखने की वजह से फीके व पीले पड़ गये होते हैं उन्हें उजेले में रखने से एक दो दिन में ही वे तेजवाले और हरे भरे हो जाते हैं। इसी तरह का असर मनुष्य पर भी उसका होता है। कई लोग ऐसा मानते हैं कि सूर्य के प्रकाश का जो असर होता है वह सिर्फ़ मन पर होता है। परन्तु मेरे ख्याल में सूर्य के प्रकाश का प्रभाव, क्या मन और क्या तन, दोनों पर होता है; इतना ही क्यों? सूरज की रोशनी से दोषवाली हवा तक शुद्ध हो जाती है। बहुत दिनों से बन्द कर रक्खी हुई कोठरी में जो खराब बू आती है वह प्रकाश के पहुंचने पर दूर हो जाती है, यह बात प्रत्येक मनुष्य के अनुभव में आई हुई होना चाहिये। एक कोठरी बहुत दिनों से बन्द है। उसमें कोई नहीं गया। हवा ख़राब करने की कोई बात नहीं हुई। परन्तु एकाएक उसमें जाते ही जी मचलाने लगा, माथा चढ़ आया। यह क्यों हुआ? इसीलिये कि प्रकाश के न पहुंचने से वहां की हवा साफ न हुई। अँधेरी कोठरी में भय सा लगता है और उजेले कमरे में मन

प्रफुल्लित सा रहता है। बीमार मनुष्य के लिए जगह ठहराते वक्त यह भेद रोगी के घरवालों के और स्नेहियों के ध्यान में नहीं आता, बहुत ही कम मनुष्य इस बात पर लक्ष देते हैं कि बीमार के सोने के कमरे में और अच्छे आदमी के सोने के कमरे में क्या क्या व्यवस्था होनी चाहिये? अच्छे आदमी को इस बात की परवाह नहीं होती कि उसे सोने के कमरे में से बाहर का दिखाव नजर आना ही चाहिये और वह नींद आने के सिवाय उस कमरे में जाने ही क्यों लगा? इससे उसे इस बात की भी गरज़ नहीं रहती कि वह देखे कि दिन में यहां प्रकाश आता है या नहीं। परन्तु बीमार की बात ही जुदी है। वह अच्छे जन से बिलकुल उलटा होता है। चाहे वह पलंग पर पड़ पड़ा अच्छे आदमी के बराबर ही सो लेता हो, परन्तु रात दिन एक ही जगह पड़े रहने से उसे जगने के बाद ऐसी इच्छा बनी रहती है कि माथा उठाये बिना ही, बाहरी दृश्य देख पड़े तो ठीक। और कुछ न भी देख पड़े तो सूर्य का उजेला और स्वच्छ आकाश का देख पड़ना ही काफी हो जाता है। इससे उसके जल्द अच्छा होने में बड़ी सहायता मिलती है। इसलिए बीमार के लिये कमरा तजवीज़ करते समय इस बात को सोचना चाहिये कि उसमें खूब रोशनी आती है या नहीं और आती है तो कहां और किस

ओर से। ये सब देखकर ही उसका पलंग लाना चाहिये कमरे के अगर एक ही जगह दो खिड़कियां हों और दोनों में होकर बाहरी दृश्य हलचल वगैरः देख पड़ते हों तो बहुत ही अच्छा। कमरे में जो प्रकाश आवे वह प्रातः काल के या मध्याह्न के सूर्य का आना चाहिये। सायंकाल का नहीं; क्योंकि उसमें हवा को शुद्ध करने की शक्ति नहीं है। दोपहर को खिड़की के पास पलंग रख कर, खिड़की से देखने से बीमार को एक बड़ा बिनोद सा मालूम होता है। मतलब यह है कि दिन में जितने घंटे सूर्य की रोशनी बीमार के कमरे में आने दी जासके आने देना चाहिये।

अच्छे आदमी के सोने के कमरे में और बीमार के सोने के कमरे में एक भेद और भी है। वह यह है कि अच्छे आदमी के कमरे को दिन भर खुला रक्खा जाय तो उसमें सोते समय, रात में शुद्ध और स्वच्छ हवा मिलेगी, बीमार के में नहीं; क्योंकि पहला खाली रहता है और दूसरे में बीमार सांस लेता रहता है और उसके पसीने की भी बू फैलती है। इससे ऐसी तजवीज़ करना चाहिये कि बीमार के कमरे की हवा हमेशा पलटती रहे, ख़राब हवा दूर हो जाया करे और अच्छी आया करे।

कितनी ही बीमारियां ऐसी हैं कि जिनमें उजेला अच्छा नहीं जान पड़ता। जैसे आंव का आ जाना। इन

बीमारियों में जितना मन्द प्रकाश हो उतना ही अच्छा। प्रकाश को मन्द करने को परदे डाल दिये कि ठीक हुआ।

खिड़की पर, पलंग आसपास या दरवाजे के बाहर जाड़े जाड़े या खादी या रुई के परदे कभी न डालना चाहिये। बीमार मनुष्य के कमरे में तो उन्हें भूल कर भी नहीं लटकाना चाहिये। खिड़की के लिये हरे अलवान के परदे अच्छे। पलंग के आस पास पतली मलमल की या जाली मच्छरदानी ठीक है। खिड़की के परदों के ऊपर नीचे से हवा आती रहे। यह एक बड़े चमत्कार की बात है कि पौधों की टहनियां खिड़की की ओर ही बढ़ती हैं और बहुत से मनुष्य भी खिड़की की ओर मुँह करके ही सोते हैं। बहुत से बीमारों के मुँह से हम प्रायः सुनते रहते हैं कि आज मेरी बाईं बाजू दुखती है, आज दहिनी बाजू दुखती है, मुझसे इस करवट नहीं सोया जाता, उस करवट नहीं सोया जाता इत्यादि" इसका कारण एक करवट से सोते रहना—यानी खिड़की की ओर मुँहकर सोते रहना है।

प्रकरण १०वां

कमरे की सफ़ाई और उसकी भीतें।

यहां पर इस बात के अलाहिदा कहने की कोई ज़रूरत नहीं देख पड़ती कि "नर्स को स्वयं स्वच्छ रहना चाहिये और रोगी को भी स्वच्छ रखना चाहिये, क्योंकि हर तरह की स्वच्छता रखना नर्स का पहिला कर्तव्य है। सिर्फ़ स्वच्छ हवा के बहुत परिमाण में आने से ही कमरा स्वच्छ नहीं हो जाता। कमरे की शतरंज, अलमारी, कुर्सी, परदे वगैरः पर जो रज हमेशा जमती रहती है, उसके अपने आप उड़ जाने के लिये खिड़की में से खूब हवा आनी चाहिये। कम से कम उस हवा का वेग एक घंटे में बीस माइल का होना चाहिये। मैले कपड़ों से जैसी बू आती है वैसे ही मैले सामान से भी आती है। इस लिये बारबार सामान को भी पोछना चाहिये।

शतरंज, गलीचा, तकिया वगैरः सामान को धूप देना चाहिये। उनके ऊपर की धूल को झाड़ना चाहिये। कपड़े और लकड़ी के सामान को धूप और हवा में रखने से वह स्वच्छ हो जाता है। बड़े बड़े शहरों में, जहां पर खूब व्यापार चलता हो, रुई के पेच हों, भांति भांति के कारखाने हों, रात दिन बड़े बड़े रास्ते चलते हों और सड़कों को छिड़कने का सुभीता न हो, वहां पर घरों के कोने कोने में धूल या कचड़े का जमना बड़ी आसान बात है। इससे यह मतलब नहीं है कि घर का सामान स्वच्छ नहीं रक्खा जा सकता, रक्खा जा सकता है, परन्तु ध्यान देने पर, सो ध्यान देना चाहिये।

हाथ में रूमाल लेकर सामान को फटाफट झाड़ देने से सामान कुछ स्वच्छ नहीं हो जाता, धूल निकल नहीं जाती। ऐसा करने से एक जगह की धूल दूसरी जगह जा पड़ती है। खिड़की और दर्वाज़ों को बन्द करके यदि इस तरह सफ़ाई की जाय तो फिर कुछ देखिये ही नहीं! एक ओर का सामान स्वच्छ हो रहा है और दूसरी ओर का मैला। धूल को बाहर निकलने के मार्गों को ही जब बन्द कर दिया तो वह निकलेगी कहां से? इतना ही क्यों, बहारी निकालने वाले के सांस में जाकर वह क्या क्या अनर्थ न करेगी? ऐसे गँवारपन से झाड़ने बुहारने की अपेक्षा हाथ लगाकर उसको वैसे का वैसा

रहने देना अच्छा। गँवार लोगों की समझ है कि एक चीज़ को इधर से उधर कर दिया कि बस कमरा सज गया, साफ होगया, परन्तु इस तरह सफाई नहीं हुआ करती। पहिली जगह की अपेक्षा दूसरी जगह ज्यादा मलिन हो जाती है। रूमाल से साफ करने की वस्तुएँ तो तसवीर आदि होती हैं, और दो चीजों को गीले कपड़े से अच्छी तरह पोंछ कर साफ करना चाहिये। लकड़ी का सारा सामान ऐसा होना चाहिये कि गीले कपड़े से पोंछने से खराब न हो, अथवा उनके ऊपर का पालिस ऐसा होना चाहिये कि भीजने से उसके दाग़ और चीजों पर न लगें। आजकल जो झाड़ने बुहारने की रीति है उसे धूल साफ करने की जगह धूल उड़ाना कहा जाय तो ज्यादा युक्तियुक्त हो।

सामान साफ़ करने का एक उपाय और भी है वह यह है कि स्वच्छ कपड़े से कुर्सी या टेबिल को पोंछा जावे। इससे वहां की धूल कपड़े में आ जायगी। जिसको जो अच्छी लगे वह उसी तरकीब को काम में लावे। बहुत से मनुष्यों में इस प्रकार की चाल चली आती है कि वह कुर्सी या टेबिल पर इस गरज़ से चादर बिछाते हैं कि वे बिगड़ न जांय। क्योंकि जो धुला होगा वह चादर पर पड़ेगा। इस तरह जब चादर एक ओर से मैली हो जाती है तब उसे उलटकर बिछा देते हैं। यह

ठीक नहीं। ऐसा करने से मैलापन सामान पर जा लगने से सामान ख़राब होता है, उन पर धूल जम जाती है, और वह भी इतनी कि उन पर उंगलियों से तसवीरें बनाई जा सकें। इन चादरों को यदि फटकारा भी जाता है तो कमरे में ही। ऐसा करने से उनकी धूल पिछले सामान पर आ जमती है। इसी को कमरा साफ करना और सुधारना कहा जाता है!! "किमाश्चर्यमतः परम्"

कमरे की जमीन का भी यही हाल है। हमारे घरों की ज़मीन प्रायः मिट्टी की होती है। ग़रीबों के घरों की ज़मीन लकड़ी के तख़्तों से जड़ी हुई क्योंकर हो सकती है? पक्की फ़र्श या ईंटों की फ़र्श भी बहुत कम जगह मिलती है, मिट्टी की ज़मीन चलने से प्रतिदिन खुदती है। उसमें से पैर रखने के साथ ही कुछ न कुछ धूल उड़ती है। वह कपड़े पर, सामान पर, किताबों पर और तसवीरों पर जमती है। ज़मीन प्रायः गोबर मिट्टी से या सिर्फ़ गोबर से लीपी जाती है। लीपने का गोबर प्रायः सड़ा हुआ होता है और उसकी बू फैलती है। बीमार के कमरे में जब लीपा जाता है उस वक्त बीमार भी वहीं होता है। वह पलंग पर ज्यों का त्यों पड़ा रहता है। जब तक वह लीपन सूख न जाय उस वक्त तक बेचारे को सड़े हुए गोबर की बू में पड़ा रहना होता है। इस तरह की बू की अपेक्षा कोरी धूल का होना अच्छा

लीपने की अपेक्षा ज़मीन पर फ़र्श बना दिया हो तो अच्छा क्योंकि बार बार पानी से या फिनाइल से धोया जा सकता है ।

बीमार के कमरे में शतरंज या गलीचे बिछा देने की बड़ी खराब रीति है। अगर बिछाना ही हो तो उन्हें साल भर में एकाध बार बाहर निकाल कर झाड़ने पोंछने से पूरा न पड़ेगा । उन्हें हर आठवें दिन बाहर निकाल कर धूप में रखना चाहिये और झाड़ फटकार कर फिर कमरे में बिछाना चाहिये । ऐसा न करने से शतरंज आदि के नीचे डेढ़ डेढ़ दो दो इंच धूल जम जाती है । बुहारी से दो बार रोज़ कचरा न साफ करने से इतना कचरा हो जाता है कि चलने मात्र से उसके कण उड़कर नाक में जाने लगते हैं । प्रायः हरएक मनुष्य को कभी न कभी इस प्रकार का अनुभव हुआ ही होगा ।

बहुत सी नर्सों की आदत होती है कि वे हास्पिटल की वार्डों को प्रातःकाल में धो डालती हैं । डाक्टर ने यदि मनाई की हो तो वे सुबह, बहुत जल्दी, उठ कर ऐसे वक्त धो डालती हैं कि जिस वक्त कोई देख न सके । ऐसा न कर उन्हें डाक्टर से पूछना चाहिये कि वार्ड किस वक्त धोवें । क्योंकि कुछ रोगी वार्ड से हटाये जाने योग्य होते हैं और कुछ नहीं । जो हटाये जा सकते हैं उनके लिये कोई दूसरी जगह तजवीज की जा सकेगी

या नहीं इन सब बातों की डाक्टर से सलाह कर लेनी चाहिये । फिर वार्ड की जमीन को धोना चाहिये। जमीन को धोने के बाद उसे अंगोछे से पोंछ डालना चाहिये और अंगीठी जला कर रख देना चाहिये । जमीन सुखाये बिना रोगी को पीछा न लाना चाहिये । जमीन धोये बाद, वार्ड की या बीमार के कमरे की खिड़की वगैरः खुली रखनी चाहिये। बाहर खूब गरम हो तब भी धोवाधोई का काम रहना चाहिये। अगर बद्दल हो रहे हों, पानी बरस रहा हो, या खूब ठंढ पड़ रही हो तो ऐसे मौसम में वार्ड धोने की झंझट में न पड़ना ही अच्छा है। सार्वजनिक शफाखानों के वार्डों में, जैसी मनुष्यों की आवजा ही होती है, वैसी घर मकानों में नहीं होती, इस लिये घर मकानों की जमीन को सिर्फ गीले कपड़े से पोंछ डालना ही काफी है।

कमरे के सामानों को भी गीले कपड़े से ही पोंछना अच्छा है; क्योंकि इससे धूल नहीं उड़ सकती । दरवाजे, खिड़की वगैरः को अलसी के तेल और पानी या मोम और टारपेंटाइल लगाना चाहिये। ज़मीन भी लकड़ी की ही बनाई जाय तो बहुत ही अच्छा।

हमारे देश में, भीतों पर रङ्गीन कागज़ चिपकाने की चाल नहीं है; परन्तु इङ्गलैंड में इसका बड़ा रिवाज़ है। हमारी तरफ़ प्रायः भीतों पर मिट्टी का प्लास्टर

किया जाता है। यह कुछ बुरा भी नहीं है परन्तु उस पर बार बार चूना पोतते रहना चाहिये। कभी कभी खोद कर प्लास्टर करते रहना चाहिये।

ख़राब हवा के मिल जाने से जैसे पानी ख़राब हो जाता है वैसे ही अच्छी हवा भी बिगड़ जाती है। जैसे एक कांच की नली द्वारा पानी में फूंक मारने से, श्वासोछ्वास से या शरीर की और और हानिकारक वायु के योग से पानी ख़राब होता है; वैसे ही अच्छी हवा में बहुत देर तक श्वासोछ्वास होने से वह खराब होती रहती है।

बीमार के कमरे में या वार्ड में अच्छी सफाई न होने से हवा तीन तरह से बिगड़ती है:—

(१) हवा में मोरियों के पानी की बदबू मिलती है, मिलों का धुआं मिलता है, और रास्ते का कचरा वगैरः मिलता है। इससे वह खराब हो जाती है। बाहर की यह ख़राब हवा घरों में गई कि घरों की हवा खराब होगी ही। इसलिये विद्वान लोग ऐसी सूचना देते हैं कि घर की भीतों में, बाहर की ओर से पालिश किये हुए, चौखुंटे, चपड़े, झाड़े २, कवेलू, बिठाये जांय तो पानी के बबों से (Pump) जब चाहे भीत धोई जा सकेगी और सार्वजनिक आरोग्यता बढ़ेगी। क्योंकि उनकी वजह से प्रकाश बढ़ता है। घर साफ और गरम रहता है।

स्वच्छता के काम में खर्च कम होता है। भीत पर इस तरह फ़र्शबंदी करने की रीति आज कल के सुधरे हुए देशों में खूब प्रचलित है।

(२) घरों की हवा ख़राब होने के कारणों में से एक मुख्य कारण झाड़ू से कचरा निकालने की रीति भी है। प्रत्येक मनुष्य को कदाचित इसका अनुभव होगा कि इस तरह झाड़ू देने निकालने से कितनी धूल उड़ती है। एक जगह की उड़ी हुई धूल सारे कमरे में फैल जाती है। कमरे में, आलमारी, पेटी वगैरः जितनी 'अटसट' कम हो उतना ही अच्छा। यदि कुछ सामान का रक्खा जाना बहुत ही जरूरी हो तो उन्हें नित्य नियम से, साफ करना चाहिये। क्योंकि ऐसी अटसट चीजों पर कचरा बहुत जमता है। वह योंही साफ भी नहीं होता, इसके समान घर की हवा को बिगाड़नेवाला दूसरा कोई साधन नहीं है। एक तो इस अटसट से हवा बिगड़ती है, और दूसरे कमरे में सोने बैठनेवालों की भीड़ से। एक एक कमरे में जितनी जितनी ज्यादा भीड़ होगी उतनी ही ज्यादा उनके श्वासोछ्वास से हवा खराब होगी। बैठने उठने के कमरे के, शफाखाने के, और वार्डों के सामान को यदि बारबार साफ न किया गया तो वहां की हवा साफ़ रहेगी ही कैसे? कमरे में हवा अच्छी तरह आने के मार्ग हैं परन्तु जो कमरे के सामानों को

साफ़ न किया तो वे मार्ग हुए न हुए से ही हैं। भीतें ख़ूबसूरत देख पड़ें इसलिये अन्दर की ओर कहीं कहीं रङ्गीन बेलबूटेदार कागज लगाने की या रङ्ग लगाने की चाल है; इन दोनों के बारे में कुछ सूचना करना है। वह यह है कि कुछ रङ्गों में सोमलखार का ऐसा विषैला पदार्थ मिला रहता है। इस पर जो धूल जमती है उनमें विषैले सूक्ष्म कण मिल जाते हैं। यदि वे कण श्वासोच्छ्वास में धूल के साथ शरीर में चले गये तो उनका ज़हर हानि किये बिना न रहेगा। सिर्फ धूल उतनी हानि नहीं करती परन्तु सोमल मिली हुई धूलि भारी हानि न करेगी यह कौन कहेगा ?

(३) हम लोगों के घरों में रसोईघर और सोने बैठने के घर पास ही पास होते हैं। इस पर भी जो कमरे में रात भर जलता हुआ दिया या अङ्गीठी रख दी तो फिर कुछ पूछिये ही नहीं ! जिधर देखो उधर धुआं ही धुआं ! जहा देखो वहां कोयलों का चूरा ! कपड़े सुखाने के बांस, कमरे की टांडें, थंभे, खपरेल घरों की जालियां सब काले स्याह हो जाते हैं। इस कालेपन से अनुमान किया जा सकता है कि धुएँ के साथ ही घर में कोयलों के कितने कण फैलते हैं और जालियां कितनी पीढ़ियों से जाले वगैरः से भर रही हैं।

इनके सिवाय घर की हवा बिगड़ने का एक कारण और भी है। जब हम किसी से मिलने को जावें तब हमें उसके घर में पैर धोकर और पोंछकर जाना चाहिये। यह एक उत्तम प्राचीन रीति है, परन्तु अब ऐसा नहीं किया जाता। यदि हम देशी जूते पहिने होते हैं तब तो उन्हें बाहर उतार कर भीतर जाते हैं और अंग्रेज़ी जूता होता है तो धड़ाधड़ जूते पहिने ही चले जाते हैं। यह ठीक नहीं है। कचरा कुछ देशी जूतों के साथ ही कमरे में नहीं जाता, बिलायती बूटों के साथ भी जाता है। सुशिक्षित और सुधरे हुए राष्ट्रों में (देशों में) प्रत्येक घर के दालान में पैर पोंछने के लिये पायन्दाज़ रक्खे रहते हैं। उनसे पैरों को पोंछकर मनुष्य अन्दर जाते हैं। इसी तरह मिलने को आया हुआ मनुष्य जब चला जाता है तब कमरे की शतरञ्जु या गलीचे पर से कचरा साफ़ किया जाता है। यानी दूसरे दूसरे मनुष्य के पैरों के साथ आई हुई बू को फौरन साफ़ किया जाता है। प्रत्येक मनुष्य के साथ इस तरह आई हुई बू को बहुत दिनों तक जमने दिया जायगा तो उससे हवा खराब होकर कमरे में 'सीमी सीमी' बू आने लगेगी और सब घर के बीमार होजायंगे।

मतलब यह है कि सार्वजनिक आरोग्य रक्षक उपायों से घर के बाहर की हवा को शुद्ध और स्वच्छ

रखना चाहिये। मिल, कारखाने, चूल्हे आदि के कोयलों को अच्छी तरह जला कर धुएं का नामोनिशान मिटा देना चाहिये। इतने से ही बहुत काम हो जायगा। बदन में साबुन लगाने का खर्च बहुत कुछ घट जायगा। घर की हवा स्वच्छ रखने के लिये क्या क्या करना चाहिये, सो ऊपर लिखा ही गया है।

स्वच्छता के सिवाय शुद्ध हवा नहीं रह सकती और शुद्ध हवा के सिवाय स्वच्छता नहीं रह सकती। इन दोनों में अन्योन्य सम्बन्ध है।

बहुत ही कम मनुष्य इस बात को जानते होंगे कि बीमार का कमरा कितना स्वच्छ रहना चाहिये। स्वच्छता के बारे में अभी तक जो कुछ मैंने कहा वह मेरे ख़याल में प्रायः शफाखाने वगैरः के ही उपयोग में आवेगा; क्योंकि घरू मकान चाहे जितने बड़े दौलतमन्द का क्यों न हो उनमें इतनी 'अटसट' भरी हुई होती है कि वहां पर बीमार का कमरा स्वच्छ रहना बहुत ही मुश्किल है।

हट्टे कट्टे आदमी को, थोड़ी सी अड़चन, त्रास, या तकलीफ भी हो तो वह उसकी परवाह नहीं करता। बहुत से अच्छे स्वस्थ मनुष्यों को छोटी बड़ी असुविधा को सहन कर लेने का मुहावरा सा पड़ गया होता है। परन्तु बीमार मनुष्यों को उससे बड़ी तकलीफ होती है।

उसकी बीमारी मिटने में बहुत ही देर लग जाती है। कभी कभी तो वह प्राण छोड़ देता है।

सुदृढ़ आदमी एक ही कमरे में, एक सा आठ घंटे कदाचित कहीं ही बैठा रहता हो; वह बीच बीच में इधर उधर फिर आता है। अगर आठ घंटे, एक ही कमरे में बैठे रहने का प्रसङ्ग आवे भी तो एक ही जगह, एक ही कुर्सी पर, एक भाव से, थोड़े ही बैठा रहता है; वह कमरे में इधर उधर घूमने लगता है। परन्तु बीमार मनुष्य क्या करे? उसे, उसके बिछौने पर पड़ा रहना पड़ता है, न उठा जाता है न बैठा जाता है, धुआं हो तो क्या और बू आवे तो क्या? उससे चला फिरा नहीं जाता। ऐसी हालत में जो बात तुम्हारी दृष्टि में कुछ नहीं है बीमार को जहर सी होकर मारतक डालती है।

"जिससे छूटने का कोई उपाय न हो उसे सहन करना चाहिये" इस कहावत का उपयोग करना नर्स का काम नहीं है। शान्तता, सहनशीलपन, ये औरों में एक प्रकार से गुण समझे जाते हैं परन्तु नर्स के लिये ये बड़े ही दुर्गुण हैं। यदि नर्स ने अपने ही लिये इनका उपयोग किया तब तो उसे "बेपरवाह नर्स" की ही पदवी मिलेगी लेकिन जो उसने रोगी के हित का ध्यान न कर सहनशीलतादि का प्रयोग किया तो वह बड़ी भारी गुनहगार होगी।

प्रकरण ११वां

शारीरिक स्वच्छता ।

बीमार के शरीर को स्वच्छ रखना यह बीमारी मिटने के लिए एक आवश्यक बात है, फिर वह बीमारी कैसी ही क्यों न हो। छोटे छोटे बच्चों के लिये इस बात की सबसे ज्यादा जरूरत है। शरीर से हमेशा पसीना निकलता रहता है, यदि उसे पोंछा नहीं तो वह शरीर पर ही जम जाता है या कपड़ों में जर जाता है; अङ्ग पर रहने से उस पर मैल जम कर बू आने लगती है और कपड़ों में जरे तो (उन कपड़ों को धोये बिना) पहिनने से उसकी बू बदन में फैलती है। इसलिए बदन में पहिनाने से पहिले नर्स को देखना चाहिये कि कपड़े साफ धोये गये हैं या नहीं। उसे मालूम होना

चाहिये कि जो मैंने अपने रोगी के शरीर को पोंछ कर स्वच्छ न किया या मैले कपड़े उसके बदन में वैसे के वैसे रहने दिये तो उसकी प्रकृति के सुधरने में बाधा पड़ेगी। उसके इस आलस्य का परिणाम रोगी को जहर देने का सा ही होगा। पेट में गए हुए जहर का और त्वचा में जाते हुए जहर का नतीजा एकही है। अगर इन दोनों में कुछ भेद है तो इतना ही कि पेट में गया हुआ जहर जल्दी असर करता है तो त्वचा में बिंधा हुआ जहर देरी में।

गांवड़े के लोग पानी के बारे में अद्भुत मत रखते हैं। वे समझते हैं कि "बुखार में, या बीमारी में, गीले कपड़े से बीमार को पोंछ डालना, या ठंढा पानी पिलाना, मौत को जल्दी बुलाने के समान है"। शहर के मनुष्य सुधरे हुये होते हैं, इससे वे इस विचार को हँस डालते हैं। गरीब और धनवानों के विचार भी इसी तरह परस्पर विरुद्ध होते हैं। गरीबों के बच्चों की ओर देखिये। उनके पैर साफ, धोये हुये नहीं होते। वे ठंडे पानी में उँगली भी नहीं डालते। मजदूरी करनेवाले मनुष्यों से पूछिये कि वे कितने दिनों में न्हाते हैं। उनमें कई एक तो ऐसा कहनेवाले मिल जायँगे कि 'कई दिनों से मुंह और हाथ पैर भी नहीं धोये हैं। यूरोप के कई गांवड़ों में 'जल चिकित्सा'

के मकान बन गये हैं। वहां के मनुष्यों को और शहरों के सुशिक्षित जनों को छोड़ कर बाकी के मनुष्य समझते हैं कि बीमारी और पानी में तो आदि बैर है। ऐसे भी कुछ उदाहरण सुनने में आये हैं कि बालकों के पैरों को पन्द्रह २ साल तक पानी में न रखने दिया गया, इस विचार से कि वे बीमार हो जायँगे। मेरी सम्मति में पाठशाला के हर एक बच्चे को जबरदस्ती से रोज स्नान कराया जाना चाहिये या पाठशाला में स्नान करने का सुभीता कर दिया जाना चाहिये।

अब तो गांवड़े के लोग भी कुछ कुछ समझदार होते जाते हैं। उनकी पुरानी बेवकूफी दूर होती जाती है। महीनों तक अपने बच्चों को न्हाये बिना रहने देनेवाली स्त्रियों की अपेक्षा, ऐसी स्त्रियां ज्यादा मिलती जाती हैं, जो न्हाने में बाधा नहीं करतीं। वे स्वयं इस बात को मंजूर करती हैं कि बच्चों को रोज स्नान कराने लगे इससे उनकी तन्दुरुस्ती सुधर गई। जो स्त्रियां महीने महीने भर नहीं न्हाती थीं वे अब रोज न्हाये बिना नहीं रहतीं, बहुत से स्त्री पुरुषों को इस बात का ज्ञान हो गया है कि रोज स्नान करने से प्रकृति अच्छी रहती है, इतना ही नहीं; आयुष्य भी बढ़ती है।

एक दो दिन स्नान न करे तो अच्छे आदमी की प्रकृति भी न मालूम कैसी कैसी होने लगती है। उसके

बदन में खुजली चलने लगती है। बीमार आदमी को एक जगह पड़ा रहना पड़ता है इससे, और बीमारी से बिल्कुल चैन नहीं पड़ती। उसके बदन में बू आने लगती है, खुजा खुजा कर उसका सारा बदन खरदरा हो जाता है। यदि बीमार के शरीर को गरम गरम पानी से धोकर पोंछ डाला जाता है तो इस स्वच्छता से एकदम उसमें होशियारी आ जाती है, यह बात प्रत्येक के अनुभव में आ चुकी है। होशियारी ही आती हो सो नहीं है; उसके बदन पर जमा हुआ और खुजली पैदा करनेवाला मैल दूर हो जाने से बीमार के जल्दी आराम होने में मदद मिलती है। बीमार के शरीर को पोंछने में यानी 'स्पन्जिङ्ग' करने से नर्स को कभी त्रास न खाना चाहिये। नर्स का काम यह नहीं है कि वह (यह कह कर बीमार की स्वच्छता की ओर ध्यान न दे कि "बदन पोंछने से क्या होगा" बहुत से तो एक घड़ी भर अच्छा देख पड़ा सो आज नहीं कल दिखाई देगा) टालाटूली कर जाय। बड़े २ शफाखानों में बीमार पर रोज 'स्पन्जिङ्ग' किया जाता है परन्तु छोटे छोटे औषधालयों में, या घरों में, इस बात पर बिल्कुल लक्ष नहीं दिया जाता।

रोगी के आस पास की हवा का शुद्ध रखना जिस तरह बड़े महत्त्व का और आवश्यक है, उसी तरह रोगी

की त्वचा के बारीक बारीक छेद्रों को निर्मल रखना भी बड़े महत्व की बात है—बड़ी आवश्यक बात है। खुली हवा और निर्मल त्वचा रखने का यही हेतु है कि जितना जल्दी होसके बीमार के शरीर से हानि करने वाले पदार्थ निकल जावें। बदन को साफ करते वक्त, धोते वक्त, पोंछते वक्त, बड़ी सावधानी रखना चाहिये। एकदम सारे बदन को न उघाड़ देना चाहिये ऐसा करने से शरीर से पसीना निकलना बंद होकर दूसरी ही कोई बीमारी खड़ी हो जाने का भय है। बीमार मनुष्य के बदन को साफ करने की बहुत सी तरकीबें हैं। स्नान करना, गीले कपड़े से पोंछ डालना, वगैरः वगैरः। इनमें से कौन से बीमार के लिये, कौन सी रीति ठीक होगी, सो डाक्टर कहेगा और उसके कहने के अनुसार नर्स को काम करना चाहिये। बदन की चमड़ी कड़ी और खरदरी हो जाने से बीमार को कितना कष्ट होता रहता है इसकी कल्पना हमें उस वक्त अच्छी तरह हो जाती है कि जब हम, न्हिला धुला बदन को साफ कर देने के बाद, बीमार को चैतन्य देख पाते हैं। बीमार के बदन को साबुन मिले हुये गरम पानी से मल, फिर गरम पानी से धोकर पोंछ डालना चाहिये।

नर्स को बार बार अपने हाथों को धोते रहना चाहिये। यदि वह बार बार मुंह को भी पोंछ कर स्वच्छ कर लिया करे तो अच्छा।

अब हम यह देखें कि अपने बदन पर कितना मैल होता है और उसे साफ करने के लिये पानी कैसा होना चाहिये। एक कटोरी में ठण्ढा पानी भर दीजिये, एक में साबुन मिलाया हुआ ठंढा पानी और एक में साबुन मिलाया हुआ गरम पानी। अब हर एक से हाथ धोइये। पहिले सिर्फ ठंढे पानी में हाथ धोने से बहुत ही कम मैल उतरा हुआ जान पड़ेगा, दूसरे प्याले में उससे कुछ ज्यादः और तीसरे में तो मैल ही मैल हो जायगा। इसी तरह आधन के लिये रक्खे हुये पानी के बर्तन पर थोड़ी देर हाथ रख कर हटालो और उसे दूसरे हाथ से मलो मैल की बत्तियों की बत्तियां उतरती हुई मालूम होंगी। फुरसत के समय बहुत सी स्त्रियां इस तरह अपनी पीठ का मैल उतारती हैं। गरम गरम भाप से सारे बदन का मैल अपने आप उतारा जा सकता है। यह सब यहां पर लिखने से मेरा मतलब यही है कि सिर्फ ठंढे या गरम पानी को बदन पर डाल लेने से बदन स्वच्छ नहीं होता। एक खरदरा टुवाल लेकर उसको गरम पानी में (इस पानी में थोड़ी सी स्पिरिट, कोलन वाटर या लवंडर पहिले ही मिला

देना अच्छा है) भिगो लेना चाहिये। इस भीगे हुये टुवाल से बदन को खूब रगड़ना चाहिये। इससे मैल की बत्तियों को बत्तियां निकलेंगी। उन्हें देखने से जाना जा सकेगा कि बदन पर कितना मैला था। सिर्फ साबुन लगा लेने से और गरम गरम पानी बदन पर डाल लेने से मैल नहीं निकल जाता, मैल को दूर करने के लिये बदन को खूब घिसना चाहिये। खुरदरे टुवाल से बदन को रगड़ा जावे तो एक घड़ा पानी भी बहुत है, और जो बदन को नहीं मला गया या रगड़ा गया, तो बहुत सी गागरों के पानी से भी कुछ नहीं होना है, वह व्यर्थ होगा और बिगड़ेगा सो जुदा ही।

पानी कम था इससे शरीर स्वच्छ नहीं हुआ, यह कहना पागलपन है। समुद्र में होकर सफर करनेवाले बीमारों को, वास्तव में, एक लोटे जल से ही बदन को साफ करना पड़ता है। ऐसा होने पर भी, पन्द्रह दिन तक, बिलकुल स्वच्छ शरीर के साथ, प्रवास करते हुये हम उन्हें देखते हैं।

गीले कपड़े से बदन पोंछ डालने और पानी से न्हाने में बहुत अन्तर है। स्नान करने से केवल सफाई ही नहीं होती, थोड़ा सा पानी भी शरीर में जरता है। इसलिये साबुन लगा कर हलके पानी से न्हाना सिर्फ अङ्ग पोंछने से अच्छा है, और स्वच्छता की दृष्टि से

ऐसा होना ही इष्ट है। स्नान करने का जल हमेशा हलका होना चाहिये। हलका पानी त्वचा में जल्दी जाता है। उससे त्वचा नरम और साफ होती है। ऐसा होने से खूब पसीना निकल जाता है।

श्वासोच्छ्वास के लिये जैसे ताज़ी और शुद्ध हवा की आवश्यकता है वैसेही स्नान के लिये ताज़ा, स्वच्छ और हलके पानी की ज़रूरत है। बहुत से मनुष्य ख़याल करते हैं कि न्हाने का पानी हलका हुआ तो क्या और भारी हुआ तो क्या? परन्तु यह भूल है। न्हाने का पानी हलकाही होना चाहिये। भारी पानी में चूने का खार ज़्यादा होता है, हलके में नहीं। हलके पानी से अन्न पचता है, भारी से नहीं। भारी से बदन खुजाने लगता है, बदन का मैल दूर नही होता। ज़ख़्म धोने के काम में भारी पानी लेलिया तो उसका भरना दूर रहा, वह ज़्यदा बिगड़ जाता है। जहां पर हलका पानी मिलताही न हो वहां पर ज़ख़्म धोने के लिये बाफ़ का पानी बनाना चाहिये। बाफ़ का पानी तैयार करना ख़र्च का काम है। इसलिये जहां हलका पानी न मिलता हो वहां, ज़ख़्म धोने के लिये, बरसात का पानी इकट्ठा कर रखना चाहिये। पानी को खूब उबाल कर ठंडा कर लेने से भी, उसका ३/४ भारीपन दूर होजाता है। भारी

पानी से स्नान करने में बदन स्वच्छ न होकर उलटा मैला और बूदार होजाता है। क्योंकि साबुन का तेल, बदन का पसीना और पानी का चूना मिलकर एक प्रकार का वार्निश होजाता है, और बदन को मलने से मैल की बत्तियां नहीं उतरतीं, बल्कि इस वार्निश का ऊपरी हिस्सा निकलता है।

चाय के लिये, या रसोई के लिये, जो पानी काम में लाया जावे वह हमेशा मीठा और हलका होना चाहिये। औषध में जो पानी डाला जाय उसका हलका होना बड़ा, जरूरी है। भारी पानी में औषध बनाने की अपेक्षा रोगी को बिल्कुल औषध न देनाही अच्छा।

प्रकरण १२वां

समाचार पूछने आने वाले मनुष्यों की गड़बड़ ।

इसमें कुछ शक नहीं कि बीमार के समाचार पूछने को आने की रीति जगत भर में है। परन्तु समाचार जानने की रीति सब जगह समान नहीं है। यूरोपियन लोगों में बीमार की हालत जानने के लिये, बिना डाक्टर या नर्स की इजाजत पाये, कोई भी रोगी के पास नहीं जाते। उसके पास जाने के बाद भी बहुत देर तक गप्पें मारते हुए नहीं बैठे रहते। बहुत करके तो अपने नाम का कार्ड रख कर लौट आते हैं। ऐसा करने का हेतु यह नहीं है कि दुनिया में अच्छा लगेगा परन्तु यह कि बीमार को त्रास न हो। बीमार

से आराम होने के लिए अच्छी दवा की जितनी ज़रूरत है उतनी ही जरूरत बीमार को शान्ति और विश्राम मिलने की है, बल्कि उससे भी ज्यादा है। हमारे देश में समाचार पूछने की बिलकुल विचित्र चाल है। समाचार पूछने को आने वाला आदमी, (१) बीमार के कमरे में बिना पूछे पाछे एकाएक चला जाता है, (२) वहां पहुंचते ही बीमार के पलंग की ईसों पर या गद्दी पर आ बैठता है, (३) बीमार से सैकड़ों सवाल पूछता है और वे भी ऐसे २ कि डाक्टर तक उन्हें नहीं पूछता, (४) सारे गांव की खबरें सुनाता है; कचहरी में यह हुआ है, बाजार भाव ऐसा रहा है, फलां नया आदमी आया है, अमुक आदमी बाहर गया हुआ है, फलां के घर लड़का हुआ है, अमुक मनुष्य मर गया है इत्यादि; और रोगी के माथे को घुमा देता है, (५) किसका इलाज हो रहा है? यह प्रश्न अवश्य किया जाता है। इसके बाद यदि इलाज करनेवाले डाक्टर की निन्दा न भी की तो और और डाक्टर, हकीम, वैद्य, बूढ़ी बाई, ज्योतिषी या जादू टोनेवालों की तारीफ की जाती है और बन पड़े तो डाक्टर पर से रोगी का भरोसा उठा कर चाहे जैसा उपाय बतला दिया जाता है। (६) चाहे बीमारी का स्वरूप समझ में आवे या न आवे परन्तु हमारे समाचार पूछने आनेवाले हजरत प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से

कहने से न चूकेंगे कि बीमारी सुसाध्य है, कष्टसाध्य है, या असाध्य है। (७) कभी न किसी प्रकार की आशा ये लोग रोगी को उत्पन्न कर देते हैं, या निराशा में उसे डुबा देते हैं, इन बातों का इन्हें ज्ञान हो या न हो! बड़े ध्यान से देखनेवाले डाक्टर, बार बार देखने पर भी, जिस बात को नहीं बतला सकते, उसी बात को थोड़ी देर के लिये समय काटने को आया हुआ मनुष्य, नाड़ी पर हाथ रखकर (चाहे नाड़ी हाथ लगे या न लगे) कह डालता है कि रोगी अच्छा होगा या नहीं और साथही साथ यह भी कह जाता है कि रोगी को अमुक वस्तु खिलानी चाहिये, और अमुक नहीं। इतने से ही उसे संतोष नहीं होता, दूसरे रोज़ यह देखने को भी आ पहुंचता है कि मेरे कहने के मुआफिक काम हुआ या नहीं। यदि उसका कहना न हुआ तो गुस्से होकर दो चार उलटी सीधी सुनाते हुये भी नहीं चूकता। ऐसे समाचार पूछनेवालों से बीमार को त्रास होता है, उसे बुखार आ जाता है, उसकी नींद उड़ जाती है, और उसकी बीमारी बढ़ जाती है। समाचार पूछने की यह रीति बड़ी ही बुरी है। पुरुष, स्त्रियां, बच्चे, जो कोई समाचार पूछने को आते हैं वे समझते हैं कि हमें बीमार को उपदेश करने का अधिकार है। हम बीमार से चतुर हैं। कोई कहता है गाड़ी में बैठ कर हवाखोरी करना चाहिये, कोई

कहता है थोड़ा थोड़ा पैदल फिरना चाहिये और जो डाक्टर बड़े ग़ौर के साथ इलाज कर रहा है और रोगी की प्रकृति से अच्छी तरह वाक़िफ है वह कहता है कि बिछौने पर से उठो भी मत। ये उपदेश करनेवाले लोग यदि स्वयं डाक्टर होते, बीमार इनकी सूचना को न मानता और मिलने आनेवालों के कहने के मुआफिक़ काम करता तो न मालूम ये क्या करते?

समाचार पूछने आनेवाले मनुष्यों की एक ख़राब चाल यह भी है कि बीमारी अच्छी होने से पहिले ही मनमानी कल्पना बीमार के दिमाग़ में भर देते हैं, बड़ी भयंकर बीमारी में "आठ दिन में मिट जायगी, चार दिन में मिट जायगी" वगैरः कहना बीमार को झूठी आशा दिलाना नहीं है तो और क्या है? बीमार स्वयं इस बात को ख़ूब समझता है कि मेरी तबियत सुधरती जाती है या ख़राब होती जाती है। खोटी आशा दिलाने से उसको विश्वास नहीं होता और कहनेवाले पर भरोसा नहीं बैठता। मामूली बीमार को भयंकर बतलाने और भयंकर बीमारी को मामूली बतलाने का, रोगी के मनपर क्या असर होगा सो कहा नहीं जा सकता; इससे यही ठीक है कि बीमारी से उठने न उठने के मामले में रोगी के पास कभी बात न करना चाहिये। बहुत से रोगियों को भी इस तरह की आदत होती है

कि वे डाक्टर और इष्ट मित्रों से बार बार पूछा करते हैं कि मुझे आराम होगा या नहीं। जब रोगी की इच्छा वास्तव में अपनी हालत जानने की ही हो तब उसे कह सुनाने में कुछ बाधा न पड़नी चाहिये। पहले डाक्टर इस विषय में कुछ भी बात नहीं किया करते थे, अब रोगी को उसकी असली स्थिति बतलाने लग गये हैं।

क्या रोगी और क्या वैद्य, दोनों का विश्वास भाग्य पर होता है। जहां पर बीमारी ऐसी होती है कि जिसमें एकाध महत्व की इन्द्रिय को काटना कूटना पड़े वहां पर (कभी कभी) स्वयं डाक्टर निराश होकर दैव का हवाला देने लग जाते हैं। रोगी को यदि डाक्टर ने कहा कि "बीमारी असाध्य है, घरबार की व्यवस्था कर देना चाहिये तो बीमार को मालूम होने लगता है कि अपनी मौत बिलकुल पास आगई, इससे वह गलता जाता है और कल मरता हो तो आज ही मरता है। रोगी को इस प्रकार घबरा डालने को कोई भी सत्य प्रीति या स्पष्ट वक्तृत्व नहीं कहेगा। यदि डाक्टर को यह मालूम होजाय कि अमुक का बालक असाध्य बीमार होगया, या अमुक नर्स का बीमार अच्छा नहीं हो सकता, तो उसे चाहिये कि वह उस मां, या उस नर्स को साफ साफ न कहदे। ऐसा कहने से बीमारी तो कम हो नहीं सकती, उलटे नर्स के हाथ पैर टूट जायँगे। वह निराश

हो जायगी, काम करने में उसका जी न लगेगा, रोगी की जैसी कुछ संभाल होरही थी उसमें भी कमी हो जायगी। अच्छी नर्सों के मुंह से भी, ऐसे उद्गार निकले बिना नहीं रहते, कि यदि डाक्टर नहीं कहते कि बीमारी असाध्य है, तो मैं अपनी पूरी मिहनत से जो काम कर रही थी उसमें बाधा नहीं पड़ती, अब मुझसे कुछ भी नहीं बन पड़ता इत्यादि। जो नर्स अच्छी होती है वह ममता रखती है। जब तक श्वास है तब तक अवश्य खटपट करना चाहिये" कह कर मिहनत करती है। यदि उसने अपने काम में कुछ कमी न की हो तो उसे निराश करने से हानि ही हानि है। अखीर तक शक्ति भर उपाय करने से कभी कभी असाध्य बीमारियां भी अच्छी हो जाती हैं। परन्तु यदि नर्स के काम में जरा भी कमी हुई तो रोगी की मौत भी हो जाती है। "जबतक श्वासा तबतक आसा" यह कहनावत गलत नहीं है। इलाज बराबर करते जाना चाहिये। अब तक रोगी के अच्छा होने की सच्ची आशा का विचार किया है। झूँठी आशा दिलाना बड़ा भयङ्कर और मूर्खता का काम है। मिलने आनेवाले सभी तो डाक्टर नही हैं और कोई डाक्टर भी हुआ तो जो थोड़ी सी देर से आया है उसके और रोज़ रोज़ परीक्षा कर औषध देनेवाले डाक्टर के विचार एक कैसे हो जायगे। जिसके हाथ में रोगी है

वह, जितने विचार के साथ, अपने सब साधनों से, इलाज कर सकता है; उसी तरह घड़ी भर के लिये मिलने आया हुआ स्नेही डाक्टर किस तरह कर सकेगा? इसलिये मिलने आनेवाले मनुष्य या डाक्टरों का, इलाज करनेवाले डाक्टर से विरुद्ध मत देना, सिवाय पागलपन के और क्या होगा? और, यदि बीमार, सीखा सुधरा हुआ होगा तो उसे इनके कहने पर भरोसा ही कैसे आवेगा? इन लोगों के कहने से रोगी को कुछ विश्वास नहीं होता, न होशियारी होती है; उलटा उसका दम सूखा जाता है। उसे सहज में मालूम होने लगता है कि इतने ध्यान से इलाज करनेवाले डाक्टर साहिब जब आशा नहीं देते तो इन मनुष्यों की दी हुई आशा का अर्थ ही क्या है? वह उन्हें रोज़ कहता है कि मैं दिनों दिन कमज़ोर होता जाता हूं, रोज़ रोज़ चिन्ह बिगड़ते जाते हैं, उसे रात दिन अपनी बीमारी के सिवाय और कुछ नहीं सूझता। मतलब यह है कि जिसको बीमारी ज़्यादा हो उसे न किसी का बोलना अच्छा लगता है, न यह अच्छा मालूम होता है कि कोई मिलने को आवे। जो रोगी अच्छा होता जाता हो, अलबत्ता, उसके मन पर स्नेही मनुष्यों के आशा दिलाने का परिणाम अच्छा ही होता है; परन्तु हम यहां पर ऐसे रोगी का विचार ही नहीं कर रहे हैं।

कितनी ही बार बीमार को यह अच्छा नहीं जान पड़ता कि कोई उसके पास बैठा रहे। उनको टाल देने के लिये वह पहले से ही "हाय हाय" करने लगता है। इतने ही में उसके स्नेही या घर के लोग दयाकर प्रभु से प्रार्थना सी करने लगते हैं, बोलारियां बोलने लगते हैं, उसकी "हायहूय" की ओर कोई ध्यान नहीं देता। चारों ओर बैठ कर दुःख भरी बातें करने लगते हैं, जिन्हें सुन कर रोगी को जान पड़ता है कि मेरी प्रकृति की चिकित्सा करते हैं और मुझे झूठा विश्वास बँधाने का यत्न करते हैं। इससे तो कोई एक मित्र मेरे पास बैठे तो मैं दिल खोल कर बातचीत कर सकूँ। मुझे इन लोगों के "भगवान करे तू जल्दी अच्छा हो" "तू बीमारी से उठ कर बढ़ा डोकरा हो" इत्यादि आशीर्वादों से त्रास आगया है, किसी समय ये बातें रोगी कह भी देता है। कभी कभी लोगों के मुंह से हमें सुनाई पड़ता है कि "अरेरे वह तो बिलकुल यकायक बोलते ही बोलते मर गया। ऐसा तो नहीं जान पड़ता था कि वह एकदम मर ही जायगा, इस बात की तो उसे स्वयं भी खबर न थी कि वह आज ही मर जायगा, इत्यादि।" परन्तु मेरे ख़याल में जो लोग बारीकी के साथ रोगी को देखते रहेंगे उन्हें यह कहने का मौका न आयगा कि "वह आज मरने का सा नहीं था" जो लोग बारीक़ी से देखने पर भी ऐसा

कहते रहते हैं "उन्हें आंखें होने पर भी नहीं दिखाई देता" ऐसा कहा जावेगा। इसी तरह यह कहना कि रोगी को स्वयं नहीं जान पड़ता था कि मेरी क्या स्थिति है, यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि हरेक रोगी को इस बात का अच्छी तरह ज्ञान होता है कि मेरी प्रकृति सुधरती जाती है या बिगड़ती। अतएव इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मनुष्य अपनी बीमारी में अच्छी तरह कह सकता है कि मेरे बीमारियां असाध्य होगई या क्या। कभी कभी बीमार को मालूम होता है कि मैं मरनेवाला हूं, परन्तु वह, सिर्फ इस विचार से कि किसी को तकलीफ न हो, नहीं कहता।

बीमार मनुष्य का विश्वास जितना जल्दी हरेक बात पर बैठ जाता है उतना जल्दी किसी और का नहीं बैठता। उसे जिसने जो कुछ कह दिया वही सही मालूम होता है। उसी को सही जान पड़ता हो सो नहीं, उसके इष्ट मित्रों को भी वही सच मालूम होता है। इधर डाक्टर ने रोगी को अच्छी तरह देख-भाल कर औषध की व्यवस्था की और नर्स ने औषध पानी देने का समय मुकर्रर किया, और वे अभी जाने भी नहीं पाये कि उधर समाचार पूँछने आनेवालों ने रोगी और उसके घरवालों के दिमाग़ में उलटी सीधी कल्पना भरी। यकायक कोई आदमी आकर नर्स को कहता है

कि ऐसा नहीं, वैसा करना चाहिये। नर्स झमेले में पड़ जाती है। उसे मालूम होने लगता है कि यह नया मनुष्य अक्ल देने कौन आया। यह कुछ डाक्टर नहीं है, फिर डाक्टर के काम में टांग अड़ाने का इसको क्या अधिकार है। इसी का वह आश्चर्य करती हुई बैठी रहती है।

"डाक्टर के कहे मुआफिक (नर्स के) अमल में लाये हुये उपाय अयोग्य हैं" यदि किसी ने ऐसा ख्याल किसी बीमार के घर की बड़ी बूढ़ियों के ध्यान में जँचा दिया तो रोगी का और उसके घरवालों का विश्वास डाक्टर पर से हट जायगा। उस डाक्टर के कहने के मुताबिक व्यवस्था न रहेगी। नुकसान होगा तो बिचारे रोगी का। इन उपदेश देनेवालों का कौन काला मुंह किये देता है? इस तरह काम में आड़ लगानेवाली, प्रायः पीठ पीछे से नाचनेवाली, औरतें ही होतीं हैं। उन्हें क्या मालूम कि उनके आड़ लगाने से रोगी का कितना नुकसान हो जाता है?

समाचार पूछने आनेवालों से, एक प्रकार से और भी हानि होती है। वह यह कि जो कोई समाचार पूछने को आता है वही, हर बार, अपने डाक्टर, वैद्य, हकीम, साधु, सन्त आदि की बहुत ही तारीफ करता है। "उसके हाथ में बड़ा ही यश है, उसकी औषधि से सेकड़ों को

फायदा होता है, वह तो बड़ा अच्छा योगी है, इत्यादि बातें कह कर सुशिक्षित डाक्टर की औषधि बन्द कराई जाती है और उसकी जगह अनाड़ी, बेसमझ, विद्याहीन, अनुभवशून्य मनुष्य का इलाज शुरू किया जाता है। ऐसे मनुष्य हर बार फीस नहीं लेते और डाक्टर को फीस देनी पड़ती है; इससे, रोगी खर्च के भय से अनाड़ी आदमियों से इलाज कराता है। जो चटकीले विज्ञापन दे वही अच्छा हकीम, या वैद्य और हर एक की दवा लाजवाब रामबाण? उनका लेप अद्भुत तासीरवाला, उनकी गोलियां हजार बीमारी को मिटानेवाली इत्यादि। इस तरह के ऊंट वैद्य हर एक गांव में सैकड़ों हैं। ये सब प्रायः गरीब मनुष्यों के काल हैं। इनके हाथ में इलाज देना प्राणों से बाजी खेलना है। योग्य कारणों के न हुये बिना डाक्टर या नर्स पर से विश्वास हटा लेना ठीक नहीं। नाक और आंख के इलाज करनेवाले बहुत से मनुष्य इधर उधर फिरते हैं, उनका विश्वास करना भूल है, फिर वह कोई स्त्री हो या बाबा। इस डाक्टर को छोड़ो, उसे बुलाओ, यह औषधि मत लो वह गोली लो, यह काम न करो, वह करो इस घर को छोड़ो उसमें रहो, इस प्रकार हजारों तरह के विरुद्ध उपदेश देनेवाले मनुष्य मिलते हैं। ये प्रायः ऊपर बताये हुये फाजिल आदमियों में ही होते हैं। उन्हें यह ज्ञान नहीं होता

कि उनके बोलने से क्या नफ़ा और क्या नुकसान है। पूछने को आनेवालों को भी इतनी ही अक्ल होती है। कि वे समझते हैं कि हमारा ही डाक्टर उत्तम है बाकी सब बे अक्ल।

उपदेश करने का अधिकार हो या न हो, विद्या, वय और अनुभव से उपदेश देने की योग्यता आई हो या न आई हो; परन्तु बिना विचारे, ये लोग, जो कुछ मुंह में आया, रोगी के पास बोलेंगे और उसके माथे को घुमा देंगे। मुझे अचम्भा होता है कि इन लोगों को ऐसा करते हुए शरम भी क्यों नहीं आती? बीमार का पैर काटा गया है, ऐसी हालत में बीमार को चलने के लिये कहना सरासर पागलपन है; परन्तु ऐसे अक्ल के पुतले फिर भी मिलते हैं कि "ऐसे नीरोगी को इस प्रकार की बातें कहें। पचास पचास बार कहने से भी रोगी इनकी बात नहीं मानता, तो भी ये लोग नहीं समझते कि यह बात रोगी को मंजूर नहीं है। यदि मंजूर होती तो कभी भी कर चुकता। फिर भी इन्हें नहीं सूझता कि अब तो न कहें।

रोगी को नित नया उपदेश करना (सूचनाएं देना) उसकी बीमारी की हंसी उड़ाना है, इसके सिवाय नफ़रत करने लायक दूसरा मज़ाक ही नहीं है। ऐसे आदमियों का लक्ष इस बात पर नहीं जाता कि रोगी क्या

कहता है। क्योंकि इनके ख्याल में रोगी को बोलने का कुछ इख़्तियार नहीं है यदि उसने कुछ कहा भी तो उसके माने कुछ के कुछ लगाये जाते हैं, इष्ट मित्रों का उद्देश भी उस शिफारिश के मुआफ़िक अर्थ कर डालने का होता है। रोगी की प्रकृति कैसी है और स्थिति कैसी, यदि यह जानने की इच्छा हो तो यह देखना चाहिये कि हमारी सूचनाएं योग्य हैं या अयोग्य? परन्तु ऐसा करता कौन है? कोई भी नहीं?

बहुत बार नर्स को ऐसी शिकायत होती है कि अमुक बीमार से जो मनुष्य मिलने को आते हैं, इससे उसे फ़ायदा न होकर ज़्यादा त्रास होता है यदि वे आकर उससे कहने लगें कि (१) "तुझे बीमारी" कुछ नहीं है सिर्फ थोड़ी सी हिम्मत बँधानेवाले आदमी तेरे पास चाहियें। (२) तू अपने हाथों अपने शरीर को बिगाड़ता है, तुझ पर किसी की धाक नहीं है। (३) तू बहुत बिगड़ गया, दुनिया के चाले चढ़ जाने का यह परिणाम है। (४) तू किसी की नहीं सुनता, जो चाहता है सो करता है। (५) तू अपने कर्तव्य को नहीं जानता" तो उसे अच्छा कैसे लगेगा। हर एक आदमी समाचारों के लिये आकर इस तरह राग अलापने लगेगा तो बीमार को त्रास ही होगा, इसमें शक ही क्या है। इस बात का कौन विचार करता है कि यदि हम

बीमार होते और हमारे पास आकर कोई ऐसी ऐसी माया कूट करने लगता तो हमें कितनी तकलीफ होती ।

बीमार के समाचार पूछने आनेवाले को और उसकी शुश्रूषा करनेवाले को ऐसा नियम ठहरा लेना चाहिये कि हम उसके पास ऐसीही बातें करेंगे जो उसे रुचेगी। यदि बीमार तुमसे बोल रहा हो तो तुम्हारा ध्यान अच्छी तरह से उसकी बात सुनने की ओर ही होना चाहिये, यदि तुम्हारा ध्यान दूसरी ओर हुआ तो बीमार को तकलीफ होगी। तुम्हारे साथ या तुम्हारे पहले कोई बीमार के समाचार जानने को आया हो तो ऐसा करना चाहिये कि जिससे, किसी एक से ही बातचीत करने में बीमार को न लगा दिया जाय। बीमार के सामने "देखो जी मैं तुम्हें क्या कहने को था !" इस तरह विचार में न पड़ना चाहिये क्योंकि इससे बीमार का शिर घूमने लगता है। ऐसी कोई बात न कहना चाहिये कि जिससे बीमार को सन्देह में पड़ना पड़े या बहुत देर तक एकही विचार उसके दिमाग़ में घूमता रहे। ऐसी बात न कहनी चाहिये जिससे उसे दुःख हो। उसके सामने राज़ी खुशी ही की बात करना चाहिये। आनन्दमङ्गल की बात करने से उसका मन प्रसन्न होता है। अमुक के लड़का हुआ, अमुक के रोज़गार में तरक्की हुई इत्यादि

बातें सुन कर रोगी प्रफुल्लित और सन्तुष्ट होता है। और यदि उसके सामने इस प्रकार की बातें की जायँ कि अमुक अमुक लड़ मरे, अमुक ने गाली दी, अमुक का बच्चा मर गया तो उसे बुरा मालूम होता है और कभी कभी तो बीमारी लौट आती है।

बीमार को एकाध बात कहनी हो तो वह अच्छी और नई होना चाहिये। ख़राब बात उसे नहीं सुहाती। और एक दफे सुनी हुई बात फिर वह कितनी ही अच्छी क्यों न हो, बार बार कहने से उसका मज़ा जाता रहता है। नई और अच्छी बात सुनने से बीमार को बड़ा आनन्द आता है। उसका वह दिन आनन्द में व्यतीत होता है। यदि ऐसा भी कह दिया जाय कि एक दिन के लिये अपनी बीमारी को भूल जाता है तो अनुचित नहीं है। उसके मन्सूबे बहुत तरह के होते हैं। बीमारी की वजह से, जिस काम को वह नहीं कर सकता उसे दूसरे ने कर दिया, ऐसा यदि उसके सुनने में आता है तो उसे सन्तोष होता है; क्योंकि मानसिक शक्ति उसकी बनी हुई होती है। बीमारी से उठते हुये मनुष्य को बार बार ऐसा जान पड़ता है कि "मेरे इतने दिन व्यर्थ गये, मेरा इतना नुक़सान हुआ, अमुक काम होजाना चाहिये था सो मुझसे न हुआ, अब कब होगा? जब

होगा तब होगा" और वह खेद प्रदर्शित करता है। ऐसे मौके पर ऐसी बातें सुनने से कि जिनसे हिम्मत, होशियारी वगैरः हो उसे सन्तोष होता है, अतएव उसे अच्छी लगनेवाली बातें करना चाहिये।

बीमार के पास तुम अपना रोज़नामचा ले बैठोगे तो उसे अच्छा न लगेगा, उसे तुम्हारा चेहरा सदा प्रफुल्लित और हँसता हुआ देख पड़ना चाहिये। समाचार पूछने आनेवाले यदि रोती शकल से आयँगे तो बीमार को आनन्द कैसे मालूम होगा? जो मिलने जाते हैं वे उसे उपदेश करने के सिवाय कोई बात ही नहीं कहते! ऐसा होने से बीमार को अच्छा कैसे मालूम होगा? फिर वह मनुष्य घर का हो या बाहर का। बीमार आदमी को, छोटे छोटे बच्चों की सङ्गति अच्छी मालूम होती है, क्योंकि वे जितने चाहिये उतने और जब चाहिये तब मिल सकते हैं, सिर्फ इतनी खबर रखना चाहिये कि वे आपस में न लड़ें भिड़ें। यदि तुम्हें ऐसा जान पड़े कि बीमार के कमरे की हवा बच्चों को नुकसान करेगी तो तुम्हें चाहिये कि हवा को शुद्ध रखने की तजवीज करो। बच्चों को देख कर जैसे रोगी को आनन्द होता है उसी तरह बच्चे भी इस बात को समझते हैं कि (यदि वे बहुत लाड़ लड़ा कर माथे न चढ़ा दिये हों तो) बीमार का

मन कैसे प्रफुल्लित रहेगा, उसे क्या पसन्द है और क्या नापसन्द? तथापि उन्हें बीमार के पास बहुत देर तक न रखना चाहिये।

कितनी ही छोटी छोटी बातें देखने में तो व्यर्थ सी देख पड़ती हैं परन्तु उससे बीमार को बड़ी तकलीफ होती है। इस तरह की तकलीफ़ बीमार को न होने देने की, हर एक को, खबरदारी रखना चाहिये। बीमार की इच्छा होती है कि छोटे बच्चे को उसके बिछौने पर रक्खा जावे परन्तु वह यदि उसके पलङ्ग के नीचे चला गया तो बीमार को बड़ा गुस्सा आता है। उसी बच्चे को पलङ्ग पर रख देने से बीमार खुश हो जाता है। बुरी भली बात का भी रोगी पर ऐसा ही असर होता है।

बीमार और बीमारी से तुरन्त उठे हुये मनुष्य में कुछ विशेष भेद नहीं है। वह समझ नहीं सकते हैं कि उनके चारों ओर होती हुई बातों में महत्व क्या है? समाचार के लिये जानेवाले प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि उन उन बातों में से किसमें कितना महत्त्व है, सो कहे। एकही जगह पड़े रहनेवाले मनुष्य को किसी के कहे बिना मालूम कैसे हो सकता है कि दुनिया में क्या हो रहा है? इन बीमारों में और बच्चों में कुछ फरक नहीं है. अगर है तो सिर्फ इतना कि बच्चों को समझाना

कठिन होता है और इन्हें हाल समझाये जा सकते हैं। बीमार के दुःख में यदि किसी ने सहानुभूति न दिख-लाई तो उसे पछतावा होने लगता है और संसार की अच्छी २ बातों के करने से यह पश्चात्ताप बिलकुल दूर हो जाता है; परन्तु बातें सच्ची ही करना चाहिये।

इधर रोगी के प्राण जा रहे हैं, उसे अत्यन्त कष्ट होरहा है और उधर उसके इष्ट मित्र "तुझे कुछ कहना हो तो कह" आदि वाणी कह कह कर उसे हैरान करते हैं! यह काम बिलकुल पसन्द करने लायक नहीं है। रोगी को होश है, वह देख सकता है और सुन भी सकता है, यह हाल मालूम होने पर भी उसी के सामने सैकड़ों तरह के दान-पुण्य प्रायश्चित्त आदि की क्रियाएं शुरू की जाती हैं! इस तरह की क्रियाओं से यदि ऐसा कुछ न किया जावे तो रोगी शान्ति से मरे। बीमार के चित्त पर कितना धक्का पहुंचता है इसका विचार किया जाना चाहिये। मरणशय्या पर पड़े हुए रोगी के पास बैठ कर "बाबा तुम तो चले हमारा क्या होगा?" वगैरः पुकारने से उसे बड़ा कष्ट होता है। इसी तरह जिस बच्चे के प्राण जारहे हैं और मा ने रोना शुरू किया तो बच्चे को मरते मरते भी दुःख होता है। हमारे सुनने में, ऐसे कई बच्चों के हाल आये हैं कि जिन्होंने अपने मुंह से कहा है कि "मां तू न रो, तेरे रोने से मेरे प्राण शान्ति से नहीं निकलते"।

जल्दी में जल्दी मृत्यु पत्र की होती है। इधर बीमार मर रहा है, उसकी घड़ी दो घड़ी बाकी है और उधर वैसी ही हालत में मृत्यु पत्र, वारिसनामा, दत्तकविधान, सन्यास, कर्ज की फर्द इत्यादि हजारों बातें एक के बाद एक करके उसके सामने लाई जाती हैं। उसे होश हो या न हो, उसके इष्ट मित्रों को ऐसा किये बिना चैन नहीं पड़ता। इन सब बातों को जिस समय रोगी की हालत बहुत न खराब हुई हो उसी समय तय कर लेना चाहिये, जिससे मानसिक तकलीफ़ का कारण दूर होजाय। इतना ही नहीं उसके आराम होने में भी कभी कभी मदद पहुंचे। परन्तु हम लोगों में बुरी चाल है कि जो बातें पहले ही करना चाहिये वह अखीर समय तक नहीं की जातीं। इससे मरते समय जो शान्ति मिलना चाहिये सो भी रोगी को नहीं मिलती। जिन्हें बारबार मौत देखने का प्रसङ्ग आता है उनका अनुभव ऐसा ही है। "आज नहीं कल करेंगे" क्या पढ़े लिखे और क्या बे पढ़े। दोनों का यह सिद्धान्त सा होगया है। परन्तु बे पढ़ों में तो बहुत करके ऐसा ही मिलता है।

अलग अलग रोगों में अलग अलग तरह से मौत आती है। क्षयी रोगवाले मनुष्य बोलते बोलते हँसते हँसते आनन्द से मरते हैं। कभी कभी उनके चेहरे पर हास्य और उदासी बारी बारी से देख पड़ते हैं। महामारी,

प्लेग आदि की बीमारी में रोगी का चेहरा निराश सा दीख पड़ता है। उसे देखकर डर मालूम होने लगता है। आम, अतिसार, ज्वर आदि में मरते समय बेफिकरी जान पड़ती है। नर्स को इन सब बातों से वाकिफ होना बहुत जरूरी है।

प्रकरण १३वां

रोगी का देखना।

[ABSERVANCE]

प्रत्येक नर्स को एक उपयोगी सूचना मुझे यहां पर करना है। वह यह कि रोगी की हरेक हलचल को खूब ध्यान लगा कर देखने की आदत रखना चाहिये। कौन से चिन्ह प्रकृति सुधरने के हैं, कौन से चिन्ह महत्व के हैं, कौन से चिन्ह महत्व के नहीं हैं, कौन से चिन्ह लापरवाही से उत्पन्न हुये हैं और वह लापरवाही भी हुई तो किस मामले में हुई, इत्यादि बातें नर्स को ध्यान लगा कर देखना चाहिये। नर्स को जो शिक्षा दी जावे उसमें इन सब बातों का समावेश होना चाहिये। वर्तमान स्थिति में बहुत ही कम ऐसी बाइयां है जो इस बात को समझती हों कि रोगी की स्थिति का सुधरना

और बिगड़ना कब और कैसे जाना जाता है ? इसीसे वे डाक्टर के पूछे हुये प्रश्नों का यथार्थ उत्तर नहीं दे सकतीं। नर्स से पूछा जावे कि रोगी कितनी बार शौच गया ? तो वह कहती है एकबार और यदि उससे पूछा जाय कि यह कैसे जाना तो वह कहती है कि "पाखाने का बर्तन एकबार साफ कर ले गई थी तब देखा था"। रोगी चाहे उसमें दो तीन बार शौच गया हो परन्तु नर्स के हिसाब में तो ही एक बार शौच गया ! नर्स से पूछा जाय कि "यह बीमार क्या थोड़े दिन पहले से अशक्त हुआ जान पड़ता है ? तो वह कहती है छिः ! बिलकुल नहीं, थोड़े दिन वह बिलकुल नहीं उठा और कपड़े नहीं बदले इससे वह अशक्त सा देख पड़ता है नहीं तो कमरे के बाहर भी थोड़ा बहुत फिर सकता था" इस कहने से स्पष्ट मालूम होता है कि महीने डेढ़ महीने से रोगी की प्रकृति पर क्या असर पड़ा है, इस बात को वह नर्स कुछ भी नहीं जानती। पहिले वह अपने आप उठ बैठ सकता था। अब दूसरों को उठाना बैठाना पड़ता है; पहले वह अपने पैरों से थोड़ा चल सकता था, खड़ा रह सकता था। अब खड़े नहीं रहा जाता; परन्तु नर्स को इसका कुछ ख़याल नहीं है। कभी कभी रोगी धीरे धीरे सुधरता जाता है परन्तु पूछने पर नर्स कहती है कि है जैसा है ! कुछ फ़रक नहीं जान पड़ता।"

सच बोलना उतना आसान नहीं है जितना संसार उसे समझता है। सामने बनी हुई बात के बारे में भी यदि किसी मनुष्य से पूछा जायगा तो वह मनमाना उत्तर देगा, या अधूरा उत्तर देगा अथवा कह देगा कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। इसका कारण यह है कि उसने उस बात को ध्यान से नहीं देखा या वह स्वयं पागल है। दूसरी प्रकार के मनुष्य ऐसे होते हैं कि जो उतनी ही बात नहीं कहते, जितनी उसके सामने हुई हो, वे उसमें अपना लून मिरच मिला ही देते हैं। तीसरे ऐसे मनुष्य होते है कि जो अपनी ही उड़ाई गप्प को इस तरह बयान करते हैं कि मानो उन्होंने किसी किसी से कहीं पर सुनी हो, ऐसे ही मनुष्य बहुत हैं। स्वयं गप्प उड़ानेवाले आदमी आंखें होने पर भी अंधे हैं। देखी हुई बात पर भी ध्यान नहीं देते। अदालत में खड़े होकर यदि कोई कहदे कि "गङ्गा की रू से मैं जो कुछ कहूंगा सत्य कहूंगा" तो न्यायाधीश को उसके कहने पर भरोसा करना पड़ता है परन्तु ऐसा कहनेवाले गवाह झूँठी गवाही देकर हलवा पूड़ी उड़ाते हैं और अपनी मुट्ठी गरम करते हैं।

हमारे पढ़नेवालों को यह सब विषयान्तर मालूम होगा परन्तु इसके लिखने से हमारा इतना ही मतलब है कि बीमार के हाल सच्चे सच्चे ही मिलेंगे। ऐसा डाक्टर को न समझना चाहिये! कभी उसमें अतिशयोक्ति होगी।

कभी कुछ छिपाया जायगा। कभी कुपथ्य को छिपाने के लिये रोगी झूँठ बोलेगा, कभी अपनी बेपरवाही को ढँकने के लिये नर्स या घर के गलत कहेंगे। ऐसी बातें रोज़ देखने में आती हैं। इससे यहां पर लिखी गई हैं कि लोग सावधानी रक्खें। कभी कभी डाक्टर को जो चाहिये उत्तर नहीं मिलता, कुछ का कुछ मिलता है। इसका कारण कमसमझी के सिवाय और कुछ नहीं है। डाक्टर पूछता है कि रात को नींद आई है या नहीं? तो रोगी या नर्स जिससे पूछा जाय कहते हैं कि नहीं रात के दस बजे से प्रातःकाल के पांच बजे तक कुछ आंख सी लग गई थी। सात घंटे तक यदि बीमार की आंख लग जावे तो काफ़ी है। स्वयं दस घंटे सोनेवाली नर्स को यदि रात में एकाध दफे उठना पड़े तो वह कहेगी ही कि रोगी को अच्छी नींद नहीं आई। यही बात यदि शान्त प्रकृति 'दम के' बीमार को पूछा जावे तो वह कहेगा कि बीच बीच में चौंकने से नींद खुल जाती थी, बाकी रात अच्छी कटी, बारबार आंखें लग जाती थीं। और भी साफ रीति से उससे पूछा जावे कि रात में कितने घन्टे सोये तो वह उड़ा उड़ी का या संशय भरा उत्तर देगा। कब नींद आई? कितनी देर तक रही? इत्यादि बातों का मालूम होना डाक्टर के लिये बड़ा ज़रूरी है, क्योंकि औषध में फेरफार करने का आधार इस पर है। किसी बीमार को

पूर्व रात्रि में २–३ घंटे नींद आकर फिर न आई हो, तो समझना चाहिये कि रोगी का बिछौना पूरा न था, या रोगी भूखा था। सारी रात का जागरण होजाने से आंखें चढ़ जाती हैं। उस वक्त सुस्ती की दवा देना चाहिये। रोगी के सम्बन्ध में इस तरह की सारी बातें नर्स के द्वारा डाक्टर को मिलनी चाहिये। नहीं तो वह औषध किस बात की देगा? पांच चार प्रश्नों में रोगी की सारी हकीकत कह सुनानेवाली नर्सें मिलती कितनी हैं? बहुत ही कम! डाक्टर के प्रश्न का रुख देख कर जवाब देनेवाली नर्सें बहुत हैं! एक बड़े डाक्टर की ऐसी आदत थी कि वह नर्स से कुछ नहीं पूछता था और न रोगी के सगे सम्बन्धियों से। वह सीधा रोगियों से पूछता था कि तुम्हें क्या होता है? कहां दुखता है? अपनी उँगली रख कर कहो। इससे उसे समय को व्यर्थ न खोने पर भी सहज में सही सही हाल मालूम होजाता था। सूचक प्रश्नोंसे विश्वास योग्य जानकारी नहीं होती और उलटी सीधी ख़बर मिलने से कई रोगियों के प्राण चले जाते हैं। जैसे नींद के विषय में ऐसे प्रश्न ठीक नहीं वैसे ही खाने के बारे में अनुपयोगी हैं। "भूख कैसी कुछ लगती है?" ऐसा पूछने की अपेक्षा यह पूछना ठीक है कि क्या क्या खाया था? और कब कब? क्योंकि इससे पूरी ख़बर मिलेगी। अन्न का पचना और भूख लगना ये दोनों क्रियाएं

एक नहीं हैं तो भी इनमें परस्पर में बड़ा सम्बन्ध है। कुछ मनुष्य ऐसे हैं जो खाते तो ख़ूब हैं परन्तु उनकी पाचनशक्ति उतनी अच्छी नहीं है। बहुत खाने का या कम खाने का आधार भूख पर नहीं है। पसन्दगी पर है। भाती हुई वस्तु और वस्तुओं की अपेक्षा अधिक खाई जाती है। किसी रोगी को अन्न की इतनी नफ़रत हो जाती है कि सामने आया हुआ अन्न अच्छा नहीं लगता। कितनी ही बार अन्न पर अरुचि होने का कारण यह होता है कि वह अच्छी रीति पकाया हुआ नहीं होता। चार कारणों से अन्न पर अरुचि आकर उपवास करने की नौबत आती है।

(१) रसोई बनाने की बुरी रीति।

(२) अन्न की पसन्दगी ख़राब होना।

(३) चाहे जिस वक्त खा लेना।

(४) भूख कम लगना।

बोलचाल में इन चारों कारणों को रोगी "मुझे भूख नहीं है" इस एक वाक्य में प्रकट करता है। ये कारण परस्पर में भिन्न हैं, इससे एकही उपाय से दूर नहीं हो सकते, इन चारों को दूर करने के लिये चार ही उपाय करने पड़ेंगे।

(१) रसोई अच्छी बनाना।

(२) खाने की जिन्स को अच्छी देख कर लाना।

(३) ठीक वक्त पर खाना।

(४) जो रुचे वही खाने को रखना।

रसोई अच्छी पकाई गई हो, परन्तु वह चाहे जिस समय खाने के लिये परोसी जायगी तो रोगी उसे खावेगा कैसे? कोई कहेगा कि अपनी इच्छा रोगी को प्रकट कर देना चाहिये, परन्तु सब रोगी एक समान होते कहां हैं? कोई हठी होता है, कोई मिज़ाज़वाला होता है, कोई अबोला होता है, कोई लज्जावाला होता है, कोई अल्पसन्तोषी होता है और कोई तृष्णावाला होता है। हर एक स्वभाव को बात की बात में समझ ले इस प्रकार की नर्स होना चाहिये। यदि नर्स या घर के मनुष्य इस बात को न समझेंगे तो और कौन समझेगा?

लोगों की समझ है कि नर्स की आवश्यकता बीमार को शारीरिक श्रम न होने देने के लिये है। परन्तु नर्स रखने का हेतु इतना ही नहीं है। रोगी को मानसिक श्रम या दुख भी, न होने दे। नर्स को चाहिये कि मेरे ख्याल में कभी कुछ शारीरिक श्रम होजाय तो कुछ हरज नहीं है परन्तु रोगी को मानसिक श्रम तो ज़रा भी नहीं होने देना चाहिये। बड़े बड़े शफाखानों में (जो व्यवस्था से चलते हैं) रोगी को किसी प्रकार का श्रम नहीं होता, इससे उनकी प्रकृति बहुत जल्दी सुधरती है, परन्तु खानगी मकानों में इससे सर्वथा विपरीत काम होते हैं।

नर्स को अपने आप इस बात को जान लेना चाहिये कि रोगी को, कब किस तरह की, मदद चाहिये। रोगी से पूछने की आवश्यकता नहीं है कि "तुम्हें क्या चाहिये" क्योंकि ऐसा पूछने पर वह सभ्यता के वश होकर कहेगा ही कि "कुछ नहीं" परन्तु जब कभी उसे किसी बात की ज़रूरत होगी तभी वह नर्स को त्रास न देकर अपना काम आप कर लेना ठीक समझेगा; क्योंकि इससे एक तो दूसरे को श्रम देने के पातक से बचेगा और दूसरे मन के मुआफिक काम कर लेगा। परन्तु जो रोगी अपना काम आप करने लग गया या वैसा करने की तयारी करने लगा तो फिर नर्स की ज़रूरत ही क्या है? उसे दुनिया कहेगी कि नर्स है भी तो बड़ी बेसमझ है।

इस प्रकार के सैकड़ों उदाहरण दिये जा सकते हैं। जब तक दुनिया में उत्तम शिक्षा नहीं फैला है तब तक डाक्टर को चाहिये कि रोगी के सब हाल स्वयं जाने और उसकी सब तरह की फिक्र भी स्वयं करे। यदि ऐसा न किया जायगा तो रोगी के घर के या उसके इष्ट मित्र जो कुछ उलटा सीधा कहेंगे उस पर विश्वास करना पड़ेगा और इससे इलाज व्यर्थ हो जायगा या कुछ बुरा परिणाम निकलेगा।

छोटे बच्चे बीमार पड़ें तो उनके सारे हाल, नर्स को या बच्चों की मां को कहना चाहिये। परन्तु ये दोनों बातें हिन्दुस्तान में बहुत कम मिलती हैं। छोटे बच्चों को सँभालने में ही नर्स की बुद्धि की परीक्षा होती है। क्योंकि बच्चों से यह नहीं पूछा जा सकता है कि तुझे क्या चाहिये ?

याद पड़ता है कि एक दफे मुझे एक विद्वान् पुरुष ने कहा था कि बच्चों को शिक्षा देने का मुख्य हेतु यह है कि उन्हें इस बात को फौरन समझने की आदत हो जाय कि उनके सामने क्या हो रहा है। वे अपने बच्चे को लेकर रोज एक चित्रकार की दूकान पर जाते थे और अनेक चित्र बच्चे को दिखा कर घर आ जाते थे। वहां पर दोनों बाप बेटे स्मरणशक्ति से (जो कुछ दूकान पर देखा होता) चित्र बनाते थे। फिर दूकान पर जाकर देखते थे। इस तरह एक महीना होगया। इतने समय में ही जान पड़ा कि बाप की अपेक्षा बेटे ने दस पांच बातें ज्यादा याद रक्खीं और जो याद रक्खीं उसमें कुछ भी गलती न थी।

अधिक उम्र शिक्षा देने को इस प्रकार का मार्ग स्वीकार किया जाय तो कितना फायदा हो। विशेष कर नर्स का धन्दा करनेवाली स्त्रियों को अपनी निरीक्षण शक्ति और स्मरणशक्ति का बढ़ाना बहुत ही जरूरी है।

केवल इन्हीं शक्तियों के बढ़ाने से नरसिंग का काम अच्छी तरह आ जायगा ऐसा कुछ नहीं है परन्तु इनके न होने से बन्द हो जायगा।

कोई कोई नर्स ऐसी होशियार होती हैं कि उनके सामने एक दफे जो कोई बात हो जाय या कह दी जाय तो फिर वह उसे नहीं भूलतीं। उसकी सुपुर्दगी में बीस पचीस रोगियों का वार्ड होने पर भी, वह हर एक रोगी की अलग अलग खाने पीने की चीज़ें, औषधि, समय आदि को ध्यान में रख कर बेचूक काम करती है और जो कोई कमअक्ल नर्स हुई तो एक रोगी को सँभालने में भी उसे कठिनता पड़ती है, रोगी का भोजन उसके हाथ से भेजा जाता हो तो भी उसे यह नहीं मालूम होता कि इस ढक्कन के नीचे क्या चीजें हैं, क्योंकि उसे उस बर्तन को खोल कर देखने की कभी इच्छा ही नहीं होती।

यदि तुम्हारी स्मरणशक्ति ठीक न हो और देखी हुई बात बिना लिखे याद न रहती हो तो ज़रूर तुम्हें लिख रखना चाहिये। ऐसा करने से स्मरणशक्ति बढ़ती नहीं है परन्तु जब काम ही न चलता हो तो लिखने में क्या बेइज्जती है? जिनकी निरीक्षणशक्ति और स्मरण-शक्ति दोनों ही ठीक न हों उन्हें नर्सिंग के धन्धे में न पड़ना चाहिये, क्योंकि वे इस काम के योग्य नहीं हैं। फिर उनका स्वभाव कितना ही कोमल और ममत्व-वाला क्यों न हो।

आदत पड़ जाने पर एक औंस औषधि की पुड़िया, एक औंस जल, अन्न, दूध या दवाई सिर्फ आखों से देख कर ही बताये जा सकते हैं, हाथों में पुड़िया लेकर या प्यालों में दवा भर कर, वे कितनी हैं इस बात को ठीक ठीक वज़न कर बतलानेवाले, कम्पाउण्डर और नर्सेस मैंने अपनी आंखों से देखे हैं। उन्हें इस प्रकार के बेवकूफ़ी के उत्तर देने का मौका नहीं आया कि "आज रोगी ने कुछ ज्यादः नहीं खाया"। इससे यह नहीं समझना चाहिये कि रोगी को बिना मापे योंही अन्दाज़ से औषधि देना अच्छा है। मेरे कहने का मतलब इतना ही है कि आंखों का ठीक उपयोग करने से औषधि का ठीक ठीक वज़न किया जा सकता है। यह कुछ कठिन बात नहीं है। जिस नर्स में इस प्रकार की आदत न हो वह नर्स के काम के योग्य नहीं है। अच्छी नर्स को सिर्फ आंखों से देख कर इतना कहने की शक्ति होना चाहिये कि रोगी ने कितना दूध पिया; कितना अन्न खाया, इत्यादि। शफ़ाखानों में बहुत दिनों तक काम करनेवाले कारकून, हमाल, और रसोइयां जो दाल, चावल वगैरः सामान अपने हाथों से लेते देते हैं, उसे भी जो तौला जावे तो ठीक ठीक ज़वन में उतरता है। इन लोगों के हाथ और आंखें ऐसी सधी हुई होती हैं। परन्तु कई नर्सें ऐसी मिलती हैं कि जो रोगी के

सामने अन्न लाती हैं, अन्न पर नफ़रत होने से रोगी कुछ नहीं खाता, "अन्न भरी हुई थाली वापस जाती है, तो भी पूछने पर कह डालती हैं कि रोगी ने रोज़ के मुआफ़िक़ ही खाना खा लिया।

ऐसी नर्स के लिये क्या कहें? या तो उसकी बेपरवाही से ये भूलें होतीं हैं या उसका ध्यान ही ऐसे काम में नहीं आता। वह इतनी ही समझदार होनी चाहिये कि यदि रोगी कहे "पानी" तो पानी का ग्लास उसके सामने रखदे। वह नहीं ध्यान देती कि कितना पानी पिलाया या पिलाना चाहिये।

इस जगह मुझे नर्सों को एक उपदेश और भी देना है और वह यह कि प्रत्येक वस्तु को काम हो जाने बाद जहां की तहां रखने की आदत रखना चाहिये। क्योंकि न मालूम किस वस्तु की किस वक्त अकस्मात ज़रूरत पड़ जावे? यदि वे अपनी अपनी जगह रक्खी होंगी तो फ़ौरन् मिल जायँगी, नहीं तो बड़ी भारी अड़चन पड़ जाना सम्भव है।

होशियार नर्स इस बात को जानती रहती हैं कि रोगी को क्या होता है और क्या नहीं। इस बात का जानना बड़ा भारी गुण है। जङ्गली जानवर और पक्षी भी उनकी आदतें जान लेने पर सिर्फ इशारे से इकट्ठे किये जा सकते हैं। एक नर्स की रोगी पर दाब होती

है और एक की भूल में ही नहीं। इसका कारण यह है कि पहिली रोगी की प्रत्येक हलचल को देखती रहती है और दूसरी नहीं।

रोगी के मन को वश कर लेने का गुण नर्स में है या नहीं, इस बात की परीक्षा उस समय ठीक हो सकती है जिस वक्त रोगी को अन्न न सुहाता हो, जिस नर्स में यह गुण न होगा उसका रोगी, उसी के सामने, प्रतिदिन कमज़ोर होता जायगा, और जिसमें यह गुण हैं वह अपने रोगी को अनेक युक्तियों से कुछ न कुछ खिला कर उसकी शक्ति को कम नहीं होने देगी। रोगी भी उसे देख कर सन्तोष के साथ खा लेता है। इसका कारण क्या है? कोई कह उठेगा कि नर्स की डर से ऐसा होता है परन्तु मैं इस बात को नहीं मानता। रोगी को खाने पीने में किस प्रकार की अड़चन पड़ती है यह देख कर उसे किस प्रकार की सहायता देनी चाहिये, इस बात को जो समझती हैं वे उसके पेट में थोड़ा बहुत अन्न पहुंचा सकती हैं। किसी रोग से लेटे लेटे कुछ खाया पिया नहीं जाता और बैठाने की डाक्टर की मनाई है, ऐसी हालत में सिराना लगा रोगी का माथा कुछ ऊँचा कर थोड़ा बहुत खिला पिला देने की युक्ति नर्स को सूझना चाहिये। कोई खिड़की वगैरः खोल कर खाना नहीं खा सकता, कोई बन्द मकान में

खाना नहीं खा सकता, कोई हाथ पैर धोये बिना भोजन नहीं कर सकता, किसी को गप्पें मारे बिना रोटी नहीं भाती। इन सबको भोजन कराने की युक्तियां नर्स को सूझनी चाहिये। मतलब यह है कि किस रोगी को किस तरह भोजन कराना चाहिये यह बात नर्स को जानना चाहिये। धाक से होता ही क्या है? काम में ध्यान रहे तो हज़ारों तरकीबों से, हज़ारों के प्राण बचाये जा सकते हैं और काम में ध्यान न होने से सैकड़ों प्राणों का खंखाल मच जा सकता है।

रोगी को बात होजाने से वह ज़ोर ज़ोर से चिल्लाता है और घर के मनुष्यों को आवाजें देता है, परन्तु वह जिन्हें पुकारता है वे पास होते हैं तो भी उन्हें नहीं पहचानता। यदि ऐसी स्थिति होगई तो उसकी स्थिति थोड़ी सी गड़बड़ाहट से या आवाज़ से और भी बिगड़ती है। बहुत बार नर्स के ध्यान में यह बात नहीं आती और उसकी गड़बड़ाहट पूरी नहीं होती! क्या यह आश्चर्य नहीं है?

बहुत दिवसों से बीमार पड़े हुए रोगी को और बिल्कुल पराधीन पड़े हुए रोगी को जितनी झुंझलाहट, "मेरा यह नहीं हुआ, वह नहीं हुआ" इत्यादि बातें नर्स को बारबार कहने से होती है उतनी और किसीसे नहीं। यह बात भी यदि नर्स के ध्यान में न आई तो वह नर्स

बनी ही क्यों ? नर्स की इस प्रकार की मूर्खता से भगवान जाने कितने रोगियों को व्यर्थ त्रास भोगना पड़ता है और कितने रोगी प्राण त्याग करते हैं। बीमार की बीमारी यदि कम न होती गई या असाध्य होगई तो यह सहज है कि वह कमज़ोर होता जायगा। जो बात वह एक मास पहले स्वयं कर लेता था यदि आज उससे वह नहीं बन पड़ती तो इसमें उसका क्या दोष है? एक महीने पहले वह अपने आप अपने पैरों से मोरी तक लघुशङ्का करने को जा सकता था, अब भी उसमें जा सकने की शक्ति होना ही चाहिये। ऐसा कहनेवाली नर्सें, नर्सें ही क्यों हुईं। उसकी शक्ति कभी की कम होगई, उसे पराधीन हुए कितने ही दिन होगये, इस बात को जिसने न जाना, वह नर्स योग्य मदद किस तरह दे सकती है। ऐसी सूरत में जब तक नर्स को (यह विश्वास होकर कि मेरा बीमार अशक्त होगया है) मदद देना न सूझे या अकस्मात कोई दूसरा मनुष्य आकर उसे मदद न दे, तब तक रोगी को दुःख भोगते हुए रहना पड़ता है। यह कमज़ोरी और पराधीनता यदि लकवे से या अपस्मार से (A fit of repilepsy) एकदम आगया हो तो बात जुदी है। परन्तु रोगी के पास रात दिन रहनेवाली नर्स को यह बात अवश्य जानना चाहिये कि रोगी की बीमारी प्रतिदिन बढ़ती तो नहीं जा रही है रोगी कमज़ोर तो

नहीं होता जा रहा है, इत्यादि क्योंकि वह जितना समझ सकती है उतना दूसरा कोई नहीं समझ सकता। अत्यन्त कमज़ोरी पैदा करनेवाली बीमारियां बहुत दिनों की ही होना चाहिये ऐसा कुछ नियम नहीं है। एकाएक बहुत से उलटी दस्त होजाने से ऐसी कमज़ोरी आ जाती है कि रोगी खड़ा नहीं रह सकता। इससे वह अपने पलङ्ग पर आ पड़ता है और वहां से हटता भी नहीं। बहुत दिनों का बीमार थोड़े दिन बाद कोई दिन वह उठ कर चले तो उसे बारबार संभालना चाहिये नर्स को समझना चाहिये कि उसे चक्कर आना सम्भव है, सम्भव है कि वह बेसुध होजाय, सम्भव है कि उसके प्राण तक जाते रहें। परन्तु नर्सें इस बात की ओर ध्यान ही क्यों देने लगीं? यदि उनसे इसका कारण पूछा जाय तो कहती हैं कि रोगी इस बात को नहीं पसन्द करता कि कोई उसके सामने खड़ा रहे या उसके साथ जावे। एक महीने पहिले ही उसने यह कह तक दिया है इत्यादि। एक महीने पहिले उसके शरीर में शक्ति थी और इसीसे उसने कह दिया होगा कि मेरे साथ कोई न आओ। परन्तु आज ऐसी अशक्त दशा में भी वह ऐसा ही कहेगा यह कैसे जाना? अच्छा उसने ऐसा कहा भी तो भी नर्स का कर्तव्य यह है कि उसके कहने को न माने और कुछ न कुछ कारण निकालकर उसके आसपास बनी रहे।

एकदम उठ बैठने से या खड़े होजाने से चक्कर आकर गिर जाने और मर जाने के अनेक उदाहरण अनेक शफ़ाख़ानों में सिर्फ इसलिये होगये हैं कि रोगी के पास मदद देने को कोई भी हाज़िर न था। अशक्त मनुष्य को ठीक समय पर खाना पीना न मिलने से बहुत ही कमज़ोरी आजाती है और बहुत दिन तक एक ही जगह पड़े रहने से जी ऊब जाता है। वह उठ कर खड़ा होने का यत्न करता है कि बेसुध हो पड़ता है। ऐसे हजारों उदाहरण मिलते हैं।

बहुत दिनों तक बीमार पड़े रहनेवाले के शरीर में बहुत ही कमज़ोरी होती है। इससे वह नर्स की बेपरवाही का बलिदान न मालूम कब हो पड़े यह नहीं कहा जा सकता। नर्स अच्छी होगी तो रोगी को भी अच्छे रास्ते पर लगा देगी। वक्त पर बदन पोंछना, औषधादि होना, कपड़े बदलना, खाना पीना आदि रोगी अपने आप करने लगता है और जो मैली कुचैली, बेपरवाह नर्स बुलाई गई तो रोगी भी उसी का अनुकरण करता है "जैसा गुरु वैसा चेला"।

नर्स में ये दो दुर्गुण कभी न होना चाहिये (१) इस बात को न देखना कि रोगी के आस पास क्या हो रहा है और उसकी प्रकृति में क्या कमी व ज्यादती है (२) मनमाने अनुमानों का कर लेना। जैसेः—

(१) डाक्टरों को नये नये रोगी और नये नये रोग रोज देखने को मिलते हैं इससे वे सहज में कह सकते हैं कि शरीर में रोग ने कितना मज़बूत पैर जमाया है। परन्तु यह कहना कठिन है कि बीमारी का अखीर कब होगा ? औरों की तरह उनके अनुमान भी कई बार ग़लत हो जाते हैं। उदाहरण के लिये मानलो कि किसी का पांव टूट गया। डाक्टर उसे हाथ में लेकर फ़ौरन बता देगा कि पांव कहां पर टूटा है। ऐसा कुछ नियम नहीं है कि पांव अमुक समय ही देखना चाहिये। चाहे सुबह देखे चाहे सन्ध्या समय। टूटा हुआ हाड़ जब तक फिर जुड़ न जाय तब तक टूटा ही रहेगा। यही हाल और बीमारियों का भी है। अनुभवी डाक्टर रोगी के मुख को देख कर उसकी नाड़ी देखकर, फ़ौरन रोग का निदान कर सकते हैं और यह निश्चय कर सकते हैं कि बीमारी साध्य है या असाध्य।

परन्तु सब रोगों की परीक्षा नाड़ी से नहीं हो सकती। बहुत से रोगों की परीक्षा होने में या उनका परिणाम क्या होगा ? इस बात का अनुमान करने में रोगी की प्रकृति का बारीकी से अभ्यास करना पड़ता है। यही नहीं उसका घर, मुहल्ला, रास्ते शहर की सफाई आदि बातों का भी विचार करना पड़ता है। फिर चिकित्सा शुरू की जाती है। क्योंकि इन सब बातों

का मनुष्य शरीर पर थोड़ा बहुत असर हुये बिना नहीं रहता। रोग से मौत हुई, तो भी यह कभी नहीं माना जा सकता कि सिर्फ रोग से ही मौत हुई क्योंकि वाह्य कारणों के भार से भी, साध्य रोग असाध्य होजाते हैं।

बहुत से डाक्टर मनुष्य के शरीर को देख कर एका-एक कह देते हैं कि "तुम्हारे शरीर में कुछ रोग नहीं है तुम सहज में सौ वर्ष तक जीते रहोगे" परन्तु मेरे ख्याल में इस तरह की सलाह देना पागलपन है। कभी कभी ऐसे कहनेवाले भी मिलते हैं कि "यह व्यवस्था से रहा तो बूढ़ा होने तक जीता रहेगा"। मालूम होता है कि ये लोग इस बात को नहीं सोचते कि वाह्य कारणों का शरीर पर क्या असर होता है। मुझे यहां पर दो रोगियों की बात याद आती हैं। एक के घुटने की पाली उतर गई थी, डाक्टर ने उसे ठिकाने बिठादी। वह थोड़ी देर बाद फिर निकल गई। दूसरे रोगी को डाक्टर ने कहा कि तुम्हें कोई बीमारी नहीं है। नर्स ने दोनों रोगियों पर अच्छी तरह ध्यान देकर डाक्टर से हाल कहे। एक का पाली बिठलाना न बिठलाने जैसा हो गया और दूसरा औषधि पानी बिना मरते मरते अख़ीर समय तक शफ़ाख़ाने में रक्खा गया।

बहुत बार ऐसा होता है कि रोगी की बीमारी बहुत ही छिपी हुई होती है। इससे उसे विशेष त्रास

नहीं होता और डाक्टर का ध्यान भी उधर नहीं आता। अतएव रोग की सच्ची परीक्षा भी नहीं होती। डाक्टर जिस वक्त उसे देखता है उस वक्त खाने पीने की व्यवस्था ठीक से कहो, औषधि पानी से कहो, या शरीर को पोंछ डालने से कहो, वह होशियार और अच्छा जान पड़ता है चाहे फिर उसकी स्थिति रात भर में बिगड़ कर मर जाने की ही क्यों न हो? घड़ी भर में मर जाने की ही क्यों न हो? डाक्टर का ऐसा आग्रह कभी न होना चाहिये कि नर्स उसके सामने, इस प्रकार रिपोर्ट करे कि वह डाक्टर से भी अच्छी जानकार है। नर्स को चाहिये कि डाक्टर के आते ही, सबसे पहिले जो कुछ बीती हो उसकी सारी कच्ची हक़ीकत डाक्टर को सुनादे। न उसमें कुछ नमक मिर्च मिलावे और न अपनी राय; क्योंकि नर्स की रिपोर्ट पर डाक्टर का सर्वस्व रहता है।

प्रत्येक रोगी की नाड़ी नर्स को चार पाच बार देखना चाहिये। वह कब कम होती है, उसका स्वरूप किस वक्त पलटता है, यह बातें उसे डाक्टर को बतलाना चाहिये। नर्स का काम है कि जब नाड़ी कमज़ोर चलती हो तब उसका वेग कितना होता है, रोगी की प्रकृति कैसी हो जाती है, बुख़ार कितना घट बढ़ जाता है, वगैरः २ सब देख कर लिख रक्खे। क्योंकि वही रोगी के पास सदा रहती है, डाक्टर नहीं रहता।

"ओह ! वह तो बोलते बोलते एकाएक मर गया" अरे ! वह तो अभी चार दिन भी बीमार न रहा, देखने में भी बुरा नहीं जान पड़ता था, आज सुना है कि मर गया" । ऐसे ऐसे आश्चर्य और शोक के उद्गार डाक्टर और नर्स के मुख से भी सुन पड़ते हैं । परन्तु यदि नर्स हर एक बात को बारीकी से देख कर प्रकृति का हाल जान लेती तो फिर कुछ आश्चर्य न होता ।

अच्छी नर्स यदि अपने रोगी के हाल अच्छी तरह न कह सकी तो उसे बहुत बुरा मालूम होता है और चैन नहीं पड़ता । तिसपर भी डाक्टर के सामने उसके कहने की अपेक्षा अच्छी या बुरी, रोगी की प्रकृति हुई तो फिर कुछ पूछिये ही मत ! नर्स का माथा चढ़ जाता है, ऐसी हालत में उसे क्रोध भी आ जाता है । इसका अभिप्राय इतना ही है कि नर्स सब कच्ची हक़ीक़त कहना नहीं जानती और डाक्टर अनुभवशून्य है । उसे यह ज्ञान नहीं है कि नर्स से क्या क्या जानना चाहिये । होशियार और अपने रोगी की ख़बर रखनेवाला डाक्टर नर्स की कही हुई सच्ची और उपयोगी ख़बर की बाबत उसका कृतज्ञ होता है ।

(२) अमुक रोग से, सौ में इतने मनुष्य मरते हैं, इस प्रकार की गिनती करने से विशेष ज्ञान प्राप्त नहीं होता । एकाध बड़े शहर में; किस जाति में; किस प्रकार

के धन्दे करनेवालों में, किस हिस्से में, कौन कौन से रोग किस प्रमाण में मिलते हैं; और किसी प्रकार के रोग वाले में, अमुक घर में ही अधिक मृत्यु क्यों होती है? इस तरह का ज्ञान प्राप्त हो जाय तो उसके रोकने के उपाय किये जा सकेंगे। सर्कार अब इस ओर ध्यान देने लगी है। प्रत्येक घर में भी, किस मंजिल पर या कहां ज्यादा बीमारी होती है, इस बात की खोज कर, उसके इलाज करने की तजवीज म्युनिसिपैलिटी या सर्कार करने लगी है अर्थात् यह बात साफ और निर्विवाद है कि एक घर दूषित है और कोई नीरोगी मनुष्य उसमें नहीं रहता, यह जान कर कौन ऐसा मनुष्य होगा जो उसमें जाकर रहेगा?

मिल्कियत, जिस तरह वंश परम्परा में चलती है वैसे ही कई रोग भी प्रत्येक कुल में चलते हैं। कारखानों की तरह, क्या रोग और क्या मौत, जहां उन्हें अनुकूल स्थान और मुहल्ला मिलता है, वहीं अपनी जगह क़ायम कर लेते हैं। जब हमें यह बात मालूम है तब इसका उपाय करना क्या हमारा कर्तव्य नहीं है?

अमुक घर में अमुक रोग वंशज है और वह बड़ा भयङ्कर है। इस बात को जानने के बाद हर कोई कह सकेगा कि वह कुटुम्ब जल्दी ही नाम शेष हो जायगा, पर इधर कोई ध्यान नहीं देता। कोई अज्ञानता से, तो

कोई दरिद्रता से. आखें और कान होते हुये भी, रोगी घर में ही रहते हैं, परमेश्वर का हवाला देकर रहते हैं। यदि साफ़ कहें तो परमेश्वर पहिले ही इस बात की सूचना दे देता है कि कहाँ पर खराबी है परन्तु हम लोग उसे मानें तब न। हम लोगों की तो आदत ही ऐसी हो रही है कि यदि स्वयं परमेश्वर स्वर्ग से आकर भी कहे कि "यहां न रहो, रहोगे तो मरोगे"। तो भी उसका कहा न मानेंगे।

प्रकरण १४वाँ

बीमारी के बाद की कमज़ोरी।

रोगी जब तक बीमारी में मुब्तिला रहे तबतक उसकी किस तरह ख़बरदारी रखना चाहिये और कैसे उसकी शुश्रूषा करना चाहिये। अभी तक हम इस बात का विचार करते रहे। बीमारी मिटजाने के बाद कमज़ोरी रहती है, उस हालत में भी येही बातें काम आवेंगी सो नहीं है। बीमारी की ख़ास हालत में जिस चीज़ को रोगी का मन खाने को चाहे वहचीज़ उसे देने से वैसा कुछ नुक़सान नही होता, परन्तु बीमारी के बाद की कमज़ोरी में दे देने से भारी हानि होती है।

बीमारी से उठे बाद रोगी को 'खाने ही खाने की लग जाती' है। जो चीज़ उसे पसन्द होती है उसके लिये उसका जी लल-चाने लगता है कि "कब खाऊँगा" इत्यादि और वह उसे मिल भी गई तो थोड़ी सी सो उसकी तृप्ति नहीं होती। ऐसी वस्तु खाना कुपथ्य करना है। इससे बीमारी लौट आती है और भयंकर परिणाम निकलता है। बीमारी मिटे बाद कमज़ोरी की हालत में रोगी को क्या खिलाना चाहिये और क्या नहीं, सो डाक्टर की सलाह से ठहराना चाहिये, क्योंकि डाक्टर के सिवाय इस बात के ठहराने का अधिकारी कोई नहीं है। बीमारी की हालत में डाक्टर रोज़ देखकर इस विषय की सूचना देता था, अब डाक्टर रोज़ नहीं आता चार पांच रोज़ में देखता है, उसका सब काम नर्स पर आ ठहरता है। वह अच्छी होती है तो अपना और डाक्टर का काम अकेली कर लेती है। बीमारी अच्छी होने बाद खाने पीने की लापरवाही होने से, या घर के आदमियों के लाड़ से रोगी के मर जाने के सैकड़ों उदाहरण हमारे सुनने में आते हैं। मैं कह चुका हूं कि बीमारी से उठे बाद रोगी को "खानेही" की सूझती है। जो चीज़ देख पड़े उसे वह खाना चाहता है। इसके लिये वह नर्स की खुशामद करता है, घर के मनुष्यों से या स्नेही सम्बन्धियों से हठ करता है, रोया करता है। घर के मनुष्य वगैरः स्नेह से कहो या

झुंझलाने से कहो नर्स के हाथ पैर जोड़ कर वह चीज़ उसे खाने को दे देते हैं। परन्तु उनके इस कृत्य का भयंकर परिणाम निकलना बहुत संभव है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि बीमारी अच्छी हो जाने पर भी बीमार को बिल्कुल भूख नहीं लगती। वह अन्न नहीं खा सकता। इससे उसमें शक्ति आने में बड़ी देर लगती है। उसे जल वायु के परिवर्तन से लाभ होता है। परन्तु जब तक आबोहवा तबदील करने की शक्ति उसमें न आ जावे तबतक नर्स को चाहिये कि उसे भारी भोजन न करावे और जो कुछ खिलाया जावे वह वक्त पर खिलाया जावे।

बीमारी के बाद की कमजोरी में कुपथ्य से ही हानि नहीं होती, बहुत दिनों से एकही जगह पड़े रहने की वजह से बीमार को असूझन आई हुई होती हैं। इससे वह कुछ अच्छा होते ही (अपनी शक्ति का विचार न कर) जरूरत से ज्यादा घूमने फिरने लगता है, खुली हवा में बदन खोल कर बैठ जाता है, घंटों गप्पें मारने लग जाता है, दिल बहलाने के लिये कोई अख़बार या नाविल पढ़ने लगता है तो ४-४ घंटे पढ़ता ही जाता है। इससे उसका माथा दुखने लगता है। अशक्त मनुष्य को गरम कपड़े ज़रूर पहनने चाहियें, परन्तु वह पतली मलमल का कुर्ता पहन कर फिरने लगता है। इस

तरह की नादानी का परिणाम यह होता है कि बीमार के शरीर में जल्दी शक्ति नहीं आती। अशक्त रोगी को बच्चों की भांति सँभालना पड़ता है। उसका शरीर और मन दोनों कमज़ोर हो गये होते हैं। जब तक ये दोनों ठीक रास्ते पर न आजावें तब तक, अपनी बुद्धि से नर्स को इन्हें सँभालना चाहिये। बीमारी के हटते ही रोगी को स्वच्छ, ताज़ी और विपुल हवा की और भी ज्याद: ज़रूरत होती है। इसलिये आबोहवा बदलने के लिये रोगी को सुबह शाम कुछ टहलना चाहिये। जो रोगी ऐसा नहीं कर पाते उनमें बहुत दिनों तक शक्ति नहीं आती। उन्हें बुख़ार नहीं होता, कुछ दुख नहीं होता; खांसी नहीं आती, शूल उठता है, परन्तु उनमें शक्ति नहीं बढ़ती और उनके चेहरे पर रौनक़ नहीं आती। ऐसी हालत में अगर उन्हें नीचे की मंज़िल में न रख ऊपर की मंज़िल पर ही रक्खा जावे तो उनमें कुछ शक्ति और होशियारी आने लगे। जो शख्स, गरीबी के कारण घर छोड़ कर कहीं बाहर नहीं जा सकते, यदि वे एक कोठरी में से दूसरी कोठरी में ही जाकर रहें तो उन्हें फायदा मालूम होने लगे। जगह पलटने का, या आबोहवा तबदील करने का, परिणाम बहुत ही शीघ्र होने लगता है और इससे रोगी को अच्छा लाभ पहुंचता है। यह बात प्रतिदिन के अनुभव

की है। जो धनवान हैं, जिन्हें हर बात की अनुकूलता है, उन्हें आबोहवा पलटने के लिये देश परदेश में जाना कुछ कठिन नहीं है; परन्तु विचारे ग़रीब, जिन्हें अच्छी तरह पेट भर कर, एक वक्त भी खाने को नहीं मिलता, वे क्या करें ? उनके लिये धर्मार्थ सार्वजनिक आरोग्यगृह (जहां खाने पीने, औषधि पानी देने और सेवा शुश्रूषा करने का उत्तम प्रबन्ध किया जाय) बनाये जायँगे तो कितने ही प्राणियों का बचाव होगा और कितने ही कुटुम्बों की गृहस्थी चलेगी।

बहुत से मनुष्यों का मत है कि बीमारी मिटी कि रोगी चङ्गा हुआ। परन्तु यह मत भूल भरा हुआ है। बीमारी की जैसे बहुत ही अवस्थाएँ हैं वैसे ही बीमारी के बाद की कमज़ोरी की भी बहुत सी अवस्थायें हैं। और उस कमजोरी के ठहरने का समय भी एक सा नहीं होता। यदि बीमारी मामूली हुई तो उसके बाद की रहनेवाली कमज़ोरी बहुत थोड़े समय तक रहती है और यदि बीमारी भयङ्कर हुई तो उसके बाद की कमज़ोरी भी बहुत दिनों तक रहती है। और कभी कभी तो वह निर्मूल होती ही नहीं।

बीमारी में जिस तरह अच्छी शुश्रूषा की आवश्यकता है, वैसी ही आवश्यकता उसके बाद की कमज़ोरी में भी है। परन्तु इस बात को सब मनुष्य नहीं जानते।

श्रेष्ठ शुश्रूषा का जिन्हें अनुभव है वे जान सकते हैं और बतला सकते हैं कि नर्स यदि अच्छी और दयामयी न हुई तो हज़ारों रोगी मर जांयगे ; कितने ही रोगी जन्म भर के लिये पराधीन होजांयगे और कितने ही जीवन से घबड़ा कर आत्महत्या करने में प्रवृत्त हो जांयगे। बीमारी से बच कर प्राणों की रक्षा हो जाना और बात है और पहले की भांति सशक्त और नीरोग होना दूसरी बात है। सशक्त और नीरोग होना उत्तम शुश्रूषा के परिणाम में होता है। कभी कभी तो नर्स के अच्छी शुश्रूषा करने पर उन बीमारों को भी फ़ायदा पहुंच जाता है जिनके बारे में डाक्टर लोग हाथ समेट लिये होते हैं।

बेचारे गरीबों को नर्स नहीं मिलती। उन्हें बीमारी से उठते ही कमज़ोरी की हालत में ही (जबकि शुश्रूषा की आवश्यकता मिट नहीं जाती) काम पर जाना पड़ता है। इससे उनकी बीमारी लौट आती है और उन्हें प्राण छोड़ने होते हैं। ऐसे आदमियों के घर में जाकर देखने से उनकी सच्ची स्थिति मालूम हो जाती है। घर में कमानेवाले आदमी के बीमार पड़े रहने से खाने पीने की भी दिक़्क़त रहती है। ऐसी हालत में नर्स कहां से आवे? सारे घरवाले जिसके आधार पर हैं, उसके बीमार होजाने से वह स्वयं बोझ सा मालूम होने

लगता है, क्योंकि बीमारी में काम आनेवाले कपड़े, लत्ते, औषध पथ्य आदि आवश्यक चीज़ें उसके सिवाय और कौन लावे? ऐसे आदमी दैवयोग से अच्छे भी होगये तो बिलकुल नीरोग और सशक्त नहीं हो पाते। उनकी बीमारी पलटती है और अन्त में उसी बीमारी में उनका देहान्त होजाता है। यदि धनवान मनुष्य गरीबों के लिये हवा तबदील के लिये तथा अन्यान्य बातों का सुभीता कर देंगे तो बहुत सी असाध्य बीमारियां अच्छी हो जांयगी।

प्रकरण १५वां

नर्स कैसी होना चाहिये।

नर्स के काम का यह मूलतत्त्व है कि वह रोगी के चेहरे को देखते ही या उसकी चर्या को जानते ही, इस बात को समझले कि रोगी कैसा है और उसे क्या चाहिये? तथा रोगी को कहने का परिश्रम न उठवा कर स्वयं उस काम को पहिले से ही करदे। यदि किसी के सुपुर्द एक नाजुक हार्मोनियम कर दिया जाता है तो उसे ठीक रखने के लिये खूब झार पोंछ और सँभाल रक्खी जाती है। रोगी हार्मोनियम से विशेष नाजुक और क़ीमती है। हार्मोनियम झाड़ पोंछ से ठीक रह सकता है परन्तु रोगी को सिर्फ़ झाड़ने पोंछने से काम नहीं चलता। छोटे बच्चों को सँभालने वाली पुरानी

दाइयां होती हैं। वे हमेशा कहा करती हैं कि उनके कहने को बच्चे समझते हैं और बच्चे जो कहते हैं उसे वे समझती हैं। जैसी ये समझती हैं वैसा और कोई नहीं समझता।

इसी तरह नर्स को रोगी की चर्या से, हलचल से, आवाज़ से यह समझ लेना चाहिये कि उसे क्या हो रहा है। रोगी की कृति में क्या क्या अच्छा बुरा हो रहा है नर्स को इस बात का सूक्ष्म ज्ञान होना चाहिये। उसे इस बात का पूरा पूरा विश्वास हो जाना चाहिये कि जो कुछ मैंने जाना है वह ठीक है और मेरे सिवाय रोगी की स्थिति की और चेहरे की ऐसी परीक्षा दूसरे को होना असम्भव है। ऐसी नर्स से एकाध दफ़े गलती होनी सम्भव है परन्तु वह देर से या जल्दी अच्छी नर्स होवेगीही।

जो रोगी के मुख की ओर देखने की परवाह नहीं करती, जिसको हंसता हुआ और रोता हुआ रोगी एक सा देख पड़ता है, वह नर्स अपना धंदा किस तरह कर सकेगी और नाम कैसे कमा सकेगी। उसे नर्स नामही नहीं शोभा देता। वह नर्स कभी नहीं हो सकती।

"रोगी को यह बिलकुल अच्छा नहीं लगता कि उसके पास कोई रहे" इस प्रकार के बहाने बेपरवाह नर्सें बनाया करती हैं। कदाचित उनका ऐसा बहाना सही भी हो, क्योंकि क्या रोगियों को और क्या बच्चों

को, यह अच्छा नहीं मालूम होता कि उन्हें कोई नज़र क़ैद रक्खे। परन्तु जो नर्स चतुर होती है वह रोगी को या बच्चों को, यह नहीं मालूम होने देती कि वह उसकी देख भाल रखती है। बच्चे को या बीमार को क्या होता है, इसके समझने के लिये, दिनरात उनकी ओर देखते रहने की कोई ज़रूरत नहीं है। दुनिया समझती है कि जिसे शुश्रूषा करते करते बहुत दिन होगये हों ऐसी नर्स अनुभव वाली होती है, परन्तु ज़्यादा दिन बिताने से ही कुछ अनुभव नहीं आता। छोटी छोटी बातों को बारीकी से देखने की जिसे आदत न हो, उसे अनुभव आ नहीं सकता चाहे फिर उसने रोगी के बिछौने के पास बैठे बैठे बरसोंही क्यों न बिता दिया हो ऐसी नर्स का उपयोग ही क्या ? औंधे गगरे पर पानी ! पचास साल तक एकही प्रकार की ग़लती करनेवाली नर्स को इस बात की अनुभववाली कैसे कही जायगी कि भूलें कैसी कैसी हुआ करती हैं। "हमारे बड़े बूढ़े योही करते आये हैं" कह कर हठ से, अपनी भूलों को ठीक न करनेवाले आदमियों या नर्सों के लिये क्यों कर कहा जा सकता है कि इन्हें अनुभव होगया है। तोभी दुनिया में ऐसे बहुत से आदमी मिलते हैं जो यों कह कर कि यह हमारे "बाप दादों का बनाया हुआ घर है" सड़े व आरोग्य नाशक मकान में रहते हैं। फिर उसमें बीमार

पड़ पड़ कर चाहे मनुष्यों का संहार ही क्यों न होजाय। मोहल्ले में प्लेग से मनुष्य मरने लग गये हों, घर में चूहे मरने लग गये हों, इतना ही क्यों? साल में दो चार घर के मनुष्य भी मर जाते हों, तोभी उसी घर में पड़े रहने-वाले मनुष्यों की कमी नहीं है, जगह जगह मिलते हैं। ऐसे मनुष्यों पर अनुभव का क्या असर हो सकता है? अपने पर आई हुई विपत्ति भोगने पर भी जिनकी आंखें नहीं खुलतीं, वे औरों पर आई हुई विपत्ति से क्या शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। एक मनुष्य ने ख़राब बात की और बुरा फल भोगा, उस फल की ओर ध्यान न देकर वैसीही बात करनेवाले कई आदमी होते हैं। यह जान बूझ कर आग में पैर रखने जैसा नहीं है तो और क्या है। अच्छी बात का अनुकरण करने में कुछ हित और बुद्धि-मानी है भी; परन्तु बुरी बात के अनुकरण करने में क्या धरा है?

अपने आपको नर्स कहलवानेवाली बहुत सी बाइयां ऐसी मामूली बातों का भी (नर्सिंग के मूलतत्वों को भी) नहीं जानतीं। मुझे इसका रह रह कर आश्चर्य होता है! नर्स को इन तीन बातों का ज्ञान सबसे पहले होना चाहिये कि (१) बीमार किसे कहना चाहिये (२) उसके साथ कैसे बर्तना चाहिये और (३) उसे पशु न समझ कर कैसे सँभालना चाहिये।

किसी भी धन्धे को लेलीजिये। उसको अच्छी तरह सम्पादन करने के लिये अपना कर्तव्य क्या है इस बात को प्रत्येक मनुष्य को (जो उस धन्धे को स्वीकार करे) समझना चाहिये। क्या इस बात का जानना हर एक मनुष्य का काम नहीं है कि उसे अपने काम में किस तरह सफलता होगी और कैसा काम करने से लोग भला कहेंगे। लोग हँसेंगे, या बुरा कहेंगे, इस भय के कारण बुरा काम करने से रुकने में कुछ विशेष बड़प्पन नहीं है। अपना मन ही ऐसा होना चाहिये कि अमुक काम नीति विरुद्ध है, अतएव करने योग्य नहीं है, इस तरह की दृढ़ता धारण करले। इस पर भी डाक्टर और नर्स का धन्धा तो ऐसा है कि उन्हें सदा जीते हुये आदमी से काम पड़ता है। इञ्जीनियर की तरह उन्हें ईंट पत्थर से काम नहीं पड़ता। यदि यह बात नर्स ने अपने आप न जानी तो वह पूछ पूछ कर कितना सीखेगी।

जिन्हें अपने काम को करने का हौंसला होता है, जो अपने काम को आनन्द और उत्साह से करते हैं, वे हर वक्त स्वयं अपने चित्त को सन्तुष्ट रखते हैं और रोगी के हित की ओर ध्यान रखते हुए काम करते हैं, रोगी की स्थिति कैसी है इस बात को जानने के लिये रोगी को तकलीफ न होने देकर बार बार उसकी नाड़ी धीरे से देखते हैं और शौच कैसा होता है इसे जानने के लिये

औरों को न कह कर स्वयं देखते हैं। उनकी निगाह ऐसी तेज़ होती है कि मल मूत्र की रङ्गत में थोड़ा भी फ़रक हो तो उनके ध्यान में आये बिना नहीं रहता। शौच भांड अच्छी तरह साफ़ किया गया है या नहीं इस बात को वे एकाध अत्यंत सूक्ष्म से सूक्ष्म धब्बे को देख कर बता सकते हैं।

उनके ध्यान में ये सब बातें लिख सी जाती हैं कि "रोगी को पसीना आया या नहीं? रोगी अच्छी तरह भोजन किया या नहीं? उसे नींद कब और कैसी आई? उसका अङ्ग चिकना है या खुरखुरा! औषधि पिलाते हुये उसे त्रास होता है या नही" इत्यादि।

रोगी ने क्या खाया? कितना खाया? कब खाया आदि की खबर यदि डाक्टर को वक्त पर नहीं मिली, या खबर देनेवाली नर्स रोगी के पास नहीं हुई, तो रोग का निदान या रोग की चिकित्सा करने में डाक्टर को इतनी ज्यादः अड़चन होती है कि जिसका कोई हिसाब नहीं। कभी कभी तो खबर न मिलने से डाक्टर के हाथ से भी चूक होना सम्भव है। रोगी की पीठ की या कमर की चमड़ी सुर्ख होते ही नर्स का ध्यान उधर जाना चाहिये और नर्स को चाहिये कि डाक्टर का ध्यान उधर आकर्षित करे, जिससे छाले न पड़ने की तजवीज़ की जा सके।

"कड़ापन है या सूजन है, रोगी दुबला होता जाता है या मोटा, उसकी शक्ति घटती जाती है या बढ़ती" इत्यादि बातों का ज्ञान नर्स को होना चाहिये और इतनी भी शक्ति होनी चाहिये कि वह ये सब बातें डाक्टर को समझा सके। उसमें छोटी माता, बड़ी माता, खाज, मोतीजराव वगैरः चमड़ी के फोड़े, फुन्सी की बीमारियों को पहचानने की भी शक्ति होना चाहिये। नर्स को यह बात मालूम होना चाहिये कि जख्म में राध होती है तो ठंढ लग कर बुखार आता है अर्थात् नर्स में इतनी शक्ति होना चाहिये कि वह ठंढ मालूम होते ही यह कह सके कि अमुक स्थान में राध है। नर्स को यह शक्ति होना चाहिये कि यदि रोगी बुखार में बेसुध हो गया हो और साथ ही साथ वह दर्द से चिल्ला उठता हो तो बता सके कि रोगी का मूत्र बन्द हो रहा है और उसे निकालना चाहिये। उसमें रोगी के बदन पर हाथ लगाते ही समझने की शक्ति होना चाहिये कि रोगी को बुखार आगया या नहीं, और आगया तो कितनी डिग्री के लगभग है। इसी तरह उसे यह भी जानना चाहिये कि बुखार रोज आता है या एकतरा होता है या पाली आती है; जाड़ा देकर बुखार आता है या वैसे ही आ जाता है, आता भी है तो किस समय आता है और कब तक रहता है।

नर्स को चाहिये कि उसके हाथ में बीमार के देने के लिये जो औषधि आवे उसके लेबिल और औषधि देने की सूचना को भलीभांति पढ़े, औषधि की गन्ध को पहचान रखे और उससे कुछ संशय हो तो उन औषधियों में से कुछ को चख भी ले। प्रत्येक दवा को चखने की कोई ज़रूरत नहीं है और ऐसा करना कुछ ठीक भी नहीं है, क्योंकि उसमें खतरा है, औषधि तैयार करनेवाला मनुष्य यदि होशियारी से काम करनेवाला हुआ तो उसके हाथ से ऐसी भूल होना असम्भव सा है, हज़ारों बार में भी एकाध दफ़े भूल होना कदाचित् ही सम्भव है, परन्तु इस भूल से भी अनर्थ होना सम्भव है। इससे नर्स को चाहिये कि दवा देने के पहिले लेबिल आदि देख कर अपने हृदय की खात्री करले। स्वयं नर्स में ये बातें होना चाहिये, लोगों के कहने से कुछ फ़ायदा नहीं। क्योंकि रोज़ उठ कर कौन कहेगा और कहा हुआ काम कब तक चलेगा? नर्स दवा को सूंघने की, या चखने की फिक्र क्यों रखने लगी? जिस नर्स को अपने रोगी की कुछ फ़िक्र नहीं है, जिसका ध्यान रोगी की ओर न होकर रास्ते के तमाशों की ओर है, वह रोगी की पुकार को भी क्योंकर सुनेंगी और यदि सुन भी ली तो वह कैसे जानेंगी कि यह किसकी पुकार है। यदि उसको अपने काम पर ध्यान न होकर किसी और ही तरफ़ होगा तो

वह रोगी के पानी मांगने पर अखबार आदि उसके सामने न करेगी क्यों ? ऐसी नर्स के हाथ से रोगी को अपना चाहा हुआ पदार्थ क्यों कर मिलेगा ? ऐसी नर्स औषधि की शीशी लाती है तो औषधि नापने का ग्लास भूलती है और वह भी लाती है तो औषधि पिलाने का प्याला नहीं साफ़ करती। उसे साफ़ करने लगी तो हाथ में से पानी का बर्तन गिरा कर खाने पीने के बर्तनों को तोड़ फोड़ डालती है। अखीर में इस गड़बड़ से चिड़-चिड़ाती हुई अस्वच्छ प्याले में अन्दाज से दवा भर कर रोगी को पिलाती है। उसमें से भी कुछ रोगी के मुंह में गया, कुछ नाक में, कुछ बिछौने पर, कुछ ज़मीन पर और कुछ स्वयं नर्स के बदन पर। यही दशा खाना खिलाते समय भी होती है; दूध आया तो शक्कर नहीं, भात आये तो नमक नहीं, नमक भी आया तो घी नहीं इत्यादि। ऐसी नर्स, यह लाई, वह भूली, इसे पकड़, उसे छोड़, करती हुई इधर की उधर और उधर की इधर बराबर "धांव पाव" करती फिरती है।

ऐसी नर्स को पूछा जावे कि रोगी सोता है या जागता तो वह नहीं बता सकती। यदि रोगी सोता हो तो वह रोगी को जगाते हुये नहीं चूकती कि रोगी को कुछ चाहता है या नहीं ? और रोगी जगता हो तो उसका

कहीं पता ही नहीं लगता। रोगी को रात में ज्वर आया है यह न जान कर वह उसके कमरे में भगभग करती हुई अँगीठी रख देती है और प्रातःकाल में (ठंढ के समय रोगी के कांपते हुए भी वह कमरे की खिड़की और दरवाज़ों को खोल देती है। ऐसी नर्स के लिये यदि यह कहा जाय कि उस के हाथ, पांव, कान, आंख, हृदय; सब फूटे हैं तो कुछ ग़लत नहीं है। हपटा हपटी और गड़बड़ किये विना उसके पैर नहीं टिकते। यदि उससे कहा जाय कि दरवाज़ा बन्द कर दो तो वह उसके पास लौटना छोड़ कर आपके नज़दीक आ जाती है, जिससे दरवाजा बन्द किया कि पीछे खुल जाता है। वह नहीं जानती कि हलका हाथ कहते किसे हैं। यदि उसे पैर दबाने को कहा जाय तो वह इतने ज़ोर से दबाती है कि बाल टूट कर बलतोड़ होजावें। यदि इस तरह नित नये फोड़े होने लगे तो बिचारा रोगी आराम होने तक जियेगा कैसे? चीज़ वस्तु रखने के लिये टेबिल होती है और सोने के लिये पलङ्ग, परन्तु वह इस बात को भूल कर रोगी के पलङ्ग पर भांति भांति की चीजों को रख देती है। वह इस तरह के कामों के परिश्रम से थक कर पलङ्ग कीईस पर या निवार पर एकदम जा बैठती है। इससे ईस या निवार टूट जाती है और वह स्वयं गिरती गिरती रोगी को भी ले गिरती है।

यदि ऐसी भूलें बूढ़ी और पुरानी डोकरियों से हों तो कुछ आश्चर्य नहीं, परन्तु सीखी समझी सुधरी हुई नर्सों के हाथ से होती है ऐसी हालत में पूछा जा सकता है कि नर्स कैसी होना चाहिये ? तो वह "आज्ञाकारिणी और विश्वासपात्र होना चाहिये। ये दोनों गुण घोड़े और नौकरों तक में होने चाहिये। विचार कीजिये कि कुछ नर्सें अपने रोगी के पास जाकर बैठ जाती हैं, हाथ पैर हिलाने का नाम भी नहीं लेतीं और घंटों तक स्वस्थ पड़ी रहती हैं। ऐसी नर्सें रोगी के किसी काम की नहीं होतीं और न उनसे डाक्टर को कुछ ख़बर ही मिलती है। कितनी ही बार ऐसा भी होगया है कि रोगी को बिलकुल ठण्डा होजाने पर भी नर्स को उसकी खबर भूल में भी नही हुई और रोगी मर गया। कोई कह बैठती है कि आंख लग गई है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। रोगी के कंठ में घर्राटा लग गया है परन्तु नर्स, रोगी नींद के खुर्राटे भर रहा है, कह कर खुद भी नींद में खुर्राटे भरने लगती है। यह सच है कि दोनों सो जाते हैं, परन्तु एक का सोना समय पर बन्द होजाता है और दूसरा हमेशा के लिये सो जाता है। यदि कोई उससे कहे कि रोगी मर गया तो वह बावली सी होकर उसे हलाहलाकर उठा कर देखती है।

डाक्टर का कहना मानना नर्स का पहला काम है। नर्स को यह कभी नहीं सोचना चाहिये कि डाक्टर के हुक्म मानने की कोई ज़रूरत नहीं है। केवल 'हुक्म' के अनुसार बताये हुए से काम नहीं चलता है, कुछ बुद्धि को भी काम में लाना चाहिये। परन्तु यह बात डाक्टर और नर्स दोनो के ध्यान में नहीं आती। नर्स की जो हुक्मों की एक बात यहां पर कहता हूं बात वास्तव में बनी हुई है। एक दिन एक नर्स को कहा गया कि रोगी को नींद से जगा कर दवाई न देना। नर्स ने यह सुना कि दर्वाजे बन्द कर घर को चलती बनी, और आई फिर दूसरे दिन तीसरे पहर। जब उससे पूछा गया कि "कल रात से तुम्हारा पता नहीं है, तुम कहां गई थी" तो कहने लगी कि "डाक्टर ने कहा था 'रोगी को जगाना मत' इसी से मैं घर चली गई थी"। ऐसी आज्ञाकारिणी बाई नर्स का काम करने लगेगी तो न मालूम कौन कौन अनर्थ हो जायंगे, यह नहीं कहा जा सकता, ठंड के समय में भी वे खिड़कियों को बन्द न करेंगी, क्योंकि डाक्टर ने उनसे कहा नहीं, या उनके बन्द होने पर (रोगी को चक्कर आने लगे तो भी) वे खोलेंगी नहीं, क्योंकि डाक्टर ने नहीं कहा। ऐसी बाइयें भूल से भी नहीं जानतीं कि कायदा किसका नाम है। उन्हें एक फ़ौजी क़ायदा मालूम है। खिड़की खोलो, या बन्द करो, कहते

ही वे खोलेंगी या बन्द करेंगी और जब तक दूसरा हुक्म न हो वह काम वैसा ही रहेगा क्योंकि दूसरी आज्ञा होने तक वैसा ही रहने की आज्ञा है ऐसा वे समझती हैं। अपनी बुद्धि से तनिक भी काम नहीं लेतीं। ऐसी नर्स के भरोसे पर कैसे विश्वास किया जावे?

रोगी की स्थिति कैसी है, इस बात को जानने के लिये बीच बीच में रोगी की नाड़ी देखना यह नर्स का मुख्य कर्तव्य है। रोगी ने कितना खाया, उसको कैसी नींद आई, जो नींद आई वह गाढ़ी या बीच बीच में उड़ जाती थी, वह रोगी चौंक उठता है या आवाज सुन कर जगता है इत्यादि बातें नर्स को ध्यान देकर देखना चाहिये। नींद में चौंक उठना यह खराब लक्षण है। नींद स्वस्थ आती है या यों ही थोड़ी सी आलस्य आ जाती है, नींद में कपड़े खींचता है, या खासी आती है, खांसी सूखी है या कफ गिरता है, कफ में खून गिरता है और उसमें बू भी है या नहीं, उसकी रङ्गत कैसी है वह पतला है या गाढ़ा, श्वास लेते हुए छाती बजती है या नहीं, शौच रोज होता है या नहीं, रोज होता है तो कब होता है, कितनी दफे होता है, मल बँधा हुआ होता है या पतला, उसका रङ्ग कैसा है, उसमें आंव या रक्त भी गिरता है या नहीं, शौच जाने के पहले या पीछे पेट में मरोड़ होता है या नहीं, और यदि रोगी बच्चा है

तो उसके मल में छोटे २ सूत के माफिक कीड़े गिरते हैं या नहीं, इत्यादि बातें नर्स को खूब ध्यान के साथ देखना चाहिये। परन्तु भद्दी नर्सें इन बातों पर ध्यान नहीं देतीं।

यदि रोगी फुस्फुस की बीमारी में पड़ा हो तो देखना चाहिये कि श्वासोच्छ्वास कैसा चलता है, दम फूलता है या नहीं, बीमार किस करवट से सदा सोता है, करवट बदल कर सोने में उसे क्या तकलीफ होती है, ये अत्यन्त महत्व की बातें हैं। इधर नर्स का ध्यान जाना ही चाहिये। नर्स के बीमार को यदि हृदय रोग (Heart disease) हुआ तो इस बात का कोई भरोसा नहीं है कि केवल करवट पलटते हुए भी रोगी के प्राण न चले जायँगे। ऐसे बीमार बोलते बेहोश होजाते हैं और श्वासोछ्वास बन्द होकर उनके प्राण चले जाते हैं। ऐसे मौके पर नर्स को रोगी के मुंह की ओर तकते न रह कर कृत्रिम रीति से श्वासोछ्वास शुरू करने का प्रयत्न करना चाहिये।

नर्स का यह बड़े महत्व का काम है कि वह इस बात को देखे कि डाक्टर की लिखी हुई औषधि के पिलाने पर रोगी पर उसका क्या असर हुआ। जैसे कुइनाइन देने से कान बहरे होजाते हैं, माथा भिनभिनाने लगता है, गला जलने लगता है इत्यादि बातें नर्स को मालूम होना चाहिये। इन लक्षणों में से एकाध लक्षण प्रकट हो तो

वह नर्स के ध्यान के बाहर न होना चाहिये। बहुत ही कम ऐसी नर्सें हैं जिन्हें इस बात का ज्ञान हो कि क्विनाइन से स्मरणशक्ति में कुछ फेर पड़ जाता है और उनके रोगी की स्मरणशक्ति में फरक पड़ जाने पर कदाचित ही उन्हें यह बात सूझती है कि क्विनाइन से यह हुआ है। यह बात उन्हें मालूम भी क्योंकर हो? जब उनकी स्मरणशक्ति स्वयं ठिकाने नहीं होती तब फिर इस बात की खोज करे ही कौन?

अच्छी नर्सें अपने रोगी को कभी नहीं पूछतीं कि "तुझे क्या होरहा है? तुझे कैसा मालूम होता है?", वे रोगी की चर्या से ही सब समझ लेती हैं। वह इस बात को बिना किसी तरह की पूछ ताछ किये ही और और तरह से भी जान लेती है। वह सिर्फ अपने आपको ही होशियारों की नानी नहीं समझ बैठती।

औषधि का या पथ्य का जो वक्त एक बार ठहरा लिया जाता है उसी समय रोगी के पास वह वस्तु लेजाने की परिपाटी है। सो न ले जाकर बार बार "यह लाऊँ वह लाऊँ" इत्यादि कह कर रोगी को हैरान करने में क्या फायदा। जिस समय जो चीज लाने की हो उस समय वह ले आये बस होगया। रोज रोज रोगी से प्रश्न करने में क्या फायदा? बीमार मनुष्य को बोलने न

देना चाहिये परन्तु जिसका पाला ऐसी नर्स से पड़े उसके सन्ताप का क्या ठिकाना !

बात यह है कि प्रत्येक नर्स को जानकार होना चाहिये। उसकी हरेक बोली सच्ची होनी चाहिये। उस पर डाक्टर व रोगी दोनों का भरोसा होना चाहिये। यह भरोसा कैसे हो सकता है और कैसे वह इस काम को कर सकती है यह कहना कठिन है। इसके लिये उसे चाहिये कि वह अपने रोगी के पास चाहे जैसी गप्पें न मारे। रोगी सम्बन्धी जो कुछ बात कहनी हो वह चाहे जिस मनुष्य से न कहे जिसका पूछने का हक हो उसी से कहे औरों से इतना ही कहना काफी होगा कि स्वस्थ नहीं है। नर्स का स्वभाव शान्त और प्रमाणिक होना चाहिये। उसकी धर्म पर श्रद्धा और काम पर भक्ति होनी चाहिये। उसे अपने धन्दे का गाढ़ अभिमान होना चाहिये क्योंकि परमेश्वर के दिये हुए प्राणों की रक्षा करना उसके हाथ में है। वह समझदार, सुशील, पुख्ता उमर की और कुलवती होना चाहिये और जो कुछ उसकी आंखों के सामने आवे उसे अच्छी तरह अपने ध्यान में जमा लेने की उसमें शक्ति होना चाहिये।

प्रकरण १६वां

छोटे छोटे बच्चों को कैसे सँभालना चाहिये ?

बाइयो ! अब तुम्हें एक बात कहना और बाक़ी रहा क्या मुझे अपने धन्धे में प्रायः छोटे छोटे बच्चों को सँभालने के लिये प्रसङ्ग आजाते हैं। वे बच्चे अपने नहीं होते और अपने को सँभालने पड़ते हैं और जो प्रेम हम अपने बच्चों पर नहीं करते वह दूसरों के बच्चों पर करना पड़ता है तथा करना चाहिये।

यहां तक बड़े मनुष्यों की शुश्रूषा कैसे करना चाहिये, इस विषय में कहा गया है। जो बातें बड़े आदमी की सेवा शुश्रूषा में करनी पड़ती है वे छोटे बच्चों की शुश्रूषा में भी करनी पड़ती हैं। जैसेः—जिस कमरे में छोटे बच्चे

सो रहे हों उस कमरे के खिड़की, दर्वाजे, बन्द कर दिये जायँ तो हमारी अपेक्षा बच्चों का जी जल्दी घुटता है। घुटी हुई और बन्द हवा में एकाध रात सुला देने से बच्चों को तकलीफ़ न होती हो सो नहीं है परन्तु इसका परिणाम एकदम देख नहीं पड़ता। यदि वही बच्चा, हमेशा ऐसी जगह सुनाया जायगा तो वह फीका, अशक्त, "रैं रैं" करनेवाला, तिनके से हाथ पैर वाला, पेटल, 'टीं टीं आवाजवाला' चिड़चिड़ा, इत्यादि लक्षणवाला होगा और यह परिणाम बन्द हवा का है। छोटी माता, बड़ी माता, आखें दुखना इत्यादि रोग उसे जल्दी ही पकड़ेंगे और विशेष कर इन्हीं का वह शिकार भी होगा।

ताजी व शुद्ध हवा की आवश्यकता बड़े आदमी की अपेक्षा छोटे बच्चों को ज्यादः है। बड़े आदमियों की अपेक्षा, छोटे बच्चों को सर्दी भी जल्दी होती है। इन दोनों बातों की अपेक्षा, एक तीसरी बड़े ही महत्व की बात यह है कि छोटे बच्चों को मलीनपने से जितना नुक़सान होता है उतना किसी से नहीं होता। छोटे बच्चों के कपड़े, बड़े आदमी की अपेक्षा जल्दी और बार बार पलटना चाहिये। अस्वच्छ घरों में छोटे बच्चों को रखने से उनकी प्रकृति बहुत शीघ्र खराब होती है। छोटे बच्चों को जमीन पर सुलाने से नुक़सान होता है।

उन्हें पलङ्ग पर या पलने में सुलाना चाहिये। नहीं तो कोई कहीं से आकर उसके शरीर पर चढ़ जायगा। छोटे बच्चों के लिये थोड़े ओढ़ने से काम नहीं चलता और बहुत की ज़रूरत नहीं है। वह जगता हो या सोता, उसे बिल्कुल उघाड़े रखना योग्य नहीं है और भारी गुदड़ी ओढ़ाना अयोग्य है। ये सब बातें नर्स को देखना चाहिये। बच्चा सोता हो तो उसके मुख पर उढ़ाना नहीं चाहिये। बच्चे की मां निरन्तर काम में गुथी रहती हैं, इससे उसे अपने बच्चे को सँभालने के लिये अवकाश नहीं मिलता, अतएव नर्स को ध्यान देना चाहिये।

बच्चे बहुत जल्दी डरते हैं। यदि उनके मन में एकाध वस्तु का, या मनुष्य का, भय बैठ जाता है तो वह शीघ्र ही दूर नहीं होता। इसलिये वह जिसमें चौंक उठे ऐसी भारी आवाज से उसके पास नहीं बोलना चाहिये। ख़ास कर उसकी नींद कभी नहीं उड़ाना चाहिये। जिस आवाज़ से तुम नहीं चौंकोगी उसी आवाज़ से बच्चे सहज में चौंक उठेंगे, यह बात भूल न जाना चाहिये! ऐसे बहुत से उदाहरण हैं कि बीमार बच्चे भय से चौंक कर मर तक गये हैं।

बच्चों को खाने के बारे में तुम्हें ख़ूब ध्यान रखना चाहिये। खाना ठीक मुकर्रर वक्त पर ही मिले, इस बात

की खूब ख़बरदारी रखना चाहिये। बच्चे को एक दम खूब न खिलाना चाहिये। बच्चे खिलाये पिलाये बाद यदि उलटी करदे तो समझना चाहिये कि दूध या भोजन ज़्यादा दे दिया गया। इसी तरह बच्चों को कम भी नहीं खिलाना चाहिये। क्योंकि इससे उन्हें चैन नहीं पड़ती। ज़बरदस्ती उसके गले में नहीं ठूंसना चाहिये। नींद आने के लिये अफ़ियून जैसा मादक पदार्थ कभी नहीं देना चाहिये (यदि डाक्टर ही अफ़ियून देने को कहे तो बातही जुदी है) बच्चा खूब रोता है, उसे शान्त कर सुलाने के लिये अफ़ियून दी गई और बच्चा मर गया इस तरह मां के हाथ से बच्चों के मरने के अनेक उदाहरण सुनने में आते हैं। ऐसी गलतियां बिचारे गरीबों के यहीं होती हों सो भी नहीं है, बड़े बड़े श्रीमानों के यहां भी ऐसी घटनाएँ हो जाती हैं। मालवे जैसे अफ़ीमची देश में अफ़ियून खानेवाले बहुत से मनुष्य पाये जाते हैं। उनकी ऐसी समझ है कि अफि-यून सब रोगों पर चलनेवाली महौषधि है। अफ़ियून से शक्ति बढ़ती है, यह समझ बड़ी भूल भरी हुई और घातकी है। उन्हें इस बात की कल्पना भी नहीं है कि अफ़ियून से क्या २ भयंकर परिणाम होते हैं। बच्चा रोने लगा कि दे अफ़ियून, बच्चा सोया नहीं कि दे अफ़ियून, बच्चे ने कुछ खाया नहीं कि दे अफ़ियून और

कुछ हुआ कि दे अफ़ियून !!! इस तरह वक्त बेवक्त अफियून देने के बाद दे, रे, खेलने के लिये भी बच्चे के हाथ में अफ़ियून की डिब्बी। यह डिब्बी प्रायः टीन की होती है। उसमें बाजरे से लेकर मटर जितनी बड़ी अफ़ियून की गोलियां हमेशा रक्खी रहती हैं (अर्थात् २ ग्रेन से लगा कर ३०-४० ग्रेन तक अफ़ियून उसमें रक्खी रहती है) बड़े आदमी के लिये भी अफ़ियून की ३ ग्रेन की मात्रा काफी समझी जाती है। इतनी अफ़ियून छोटे बच्चे के पेट में चली जायगी तो उसे मारही न डालेगी? डिब्बी का ढक्कन भी प्रायः ढीला होता है जो ज़रा सा धक्का लगते ही खुल जाता है। उसमें से अफ़ियून की काली काली गोली बाहर गिर जाती है। बच्चा उसे हाथ में उठा लेता है और बाल स्वभाव के अनुकूल मुख में रख कर निगल जाता है। थोड़ी देर में बच्चा बेहोश हो जाता है। मां सोता हुआ समझ पलने में सुला देती है परन्तु बहुत देर तक जब बच्चा नहीं जागता तब वह बच्चे को देखने को जाती है और बच्चे को मरा हुआ या मरने की हालत में पाती है। ये बातें रोज मेरे देखने में आती हैं। इसमें एक अक्षर भी ग़लत नहीं है। मां और दाई की गफलत से बच्चों के प्राण जाने के सैकड़ों उदाहरण मैं तुम्हें दे सकता हूं। परन्तु यहां पर एक दो उदाहरण देना ही काफी है।

जिस बच्चे को मां के पास से छुड़ा लिया है (याने दूध पीना छुड़ा दिया है) उन बच्चों को ठीक समय पर बार बार कायदे से ऊपर का दूध पिलाना चाहिये। एक दम से खूब दूध नहीं पिलाना चाहिये।

एक दिन मैंने एक बाई के बच्चे को देखा। उसे ऊपरा ऊपरी से उबके आते थे। वह ज़ोर से हाथ पैरों को तोड़ता था और आँखों को फेरता था। उसकी अवस्था कोई एक वर्ष की थी। उसकी मां को कहीं ओम्हने को जाना था या कथा सुनने को जाना था। उसने यह सोच कर कि घर आने में देर लगेगी बाहर जाने से पहले रोज़ की अपेक्षा तिगुना दूध पिला दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि बच्चे का पेट फूल गया और उसे उबके आने लगे। इसमें आश्चर्य कुछ नहीं है।

दूसरी बात—एक मां को काम करने के लिये बाहर जाना पड़ता था। उसके एक छोटा बालक था। उसे वह अपनी बच्ची (सात आठ वर्ष की) के सिपुर्द कर जाती थी। यह बच्ची अपने छोटे भाई को ठीक समय पर बिना किसी प्रकार की भूल किये दूध पिलाती थी। एक दिन कोई महमान उस घर में आया उसनें देखा कि बच्ची छोटे बालक को दूध पिला रही है। उसने कहा कि "बाई सँभलकर, तू उस बच्चे" के मुख को न जला देना" लड़की ने उत्तर दिया कि "भैया को

दूध पिलाने के पहले मैं अपने मुख में दूध रखकर रोज़ देख लेती हूं कि मुख जला देने के लायक़ तो नहीं है"

मैंने जो ऊपर कहा है कि छोटे बच्चों को खूब सँभालना चाहिये उसका यह मतलब नहीं है कि बच्चों को सदा गोद में लेकर फिरते रहना चाहिये। बच्चा यदि अच्छा, सशक्त, और खेलता हुआ हो और हवा में नमी न हो तो बच्चे को खेलने देना ही अच्छा है, गोद में ले दौड़ना ठीक नहीं। बच्चे को सदा गोद में लिये रहने की टेव बुरी है। खेलते हुए बच्चों को यह अच्छा नहीं लगता कि कोई उसे गोद में लेले। कोई ऐसा करता है तो वह रोने लगता है।

मैंने, एक बार, गोरागट, देखने योग्य, गुदगुदे शरीर का खेलनेवाला एक खूबसूरत बच्चा देखा। वह एक धोबन का बच्चा था। वह दिन भर अपना काम करती थी और काम के समय बच्चे को ज़मीन पर छोड़ देती थी। वह बच्चा बीच बीच में उठ बैठता था, घड़ी में रेंगता रेंगता दरवाजे तक जाता था, पीछे आजाता था, उठता था फिर सो जाता था। यही क्रम चल रहा था। उसे किसी खिलोने की ज़रूरत न थी। एक बिल्ली का बच्चा था, वह बालक कभी उसकी मूंछें पकड़ता था, कभी पूंछ खींचता था, कभी उसे छुपाता था। इस लिये अपने आप खेलता था। उसकी मां उसे न्हिला धुला कर साफ

करती थी अच्छे कपड़े पिन्हा देती थी और समय पर खिला कर अपने पास ही उसे छोड़ देती थी। बच्चा किसी से नहीं डरता था। कोई उसके पास आता तो वह रोता नहीं था बल्कि हँसने लगता था। मेरे पास वह बच्चा करीब करीब एक साल भर रहा परन्तु मुझे याद नहीं आता कि मैंने कभी उसे दिन या रात में रोते हुये देखा या सुना हो।

मेरे मन में यह चाल व्यर्थ ही बढ़ गई है कि बच्चे को अपने आप खेलने न देकर गोद में उठा खिलाया जाता है।

बच्चा यदि किसी वस्तु की ओर ध्यान देकर एक-टक देख रहा हो तो इस बात की कोई ज़रूरत नहीं है कि दूसरी वस्तु दिखा कर उसके ध्यान को बँटाया जावे। बच्चे को अंधेरे में न रखना चाहिये क्योंकि वहां पर कुछ दिखाई न देने के कारण वह सुस्त हो जाता है।

एक समय एक बच्चे को लेकर कुछ पर्देवाली स्त्रियां मेरे पास रात के वक्त अँधेरे में आईं। वे इस बात को प्रकट होने देना नहीं चाहतीं थीं कि वह बच्चा जीता है। खाना खिलानेवाली के सिवाय वह बच्चा किसी को नहीं जानता था। उस बच्चे की सँभाल ध्यानपूर्वक बड़े प्रेम से होती थी, तो भी वह बच्चा आखिरकार पागल निकला। इसका कारण तुम्हारे ध्यान में आगया होगा।

बच्चे के होशियार, पानीदार और चमत्कार होने में प्रकाश की और खास कर सूर्य के प्रकाश की बड़ी भारी ज़रूरत है। यह ठीक होने पर भी इस बात को भूल न जाना चाहिये कि सूर्य के प्रकाश के लिये बच्चे को नंगे बदन, धूप में न फिरने दिया जावे।

बच्चे के सोने और उठने बैठने की जगह अँधेरा न होना चाहिये। उसके कमरे में खूब उजेला रहना चाहिये। यानी ऐसी तजवीज होनी चाहिये कि दिन भर उसमें प्रकाश पहुंचे। हां, कुछ बीमारियों में बच्चों को अँधेरे में रहने की डाक्टर लोग ताकीद करते हैं और उस समय वैसा करना योग्य भी है।

तुममें से कितनी ही नर्सों को आठ आठ नौ नौ वर्ष काम करते हो गये। इस अर्से में तुम्हारी मदद से कितने ही बीमारों की व्याधियां दूर हुई होंगी। इससे सहज में तुम्हारे ध्यान में आ जायगा कि समाज के लिये तुम कितनी उपयोगी हो। कितनी लड़कियों को बचपन से ही—पांच छः वर्ष के वय से ही—अपने छोटे भाई बहिन को सँभालना पड़ता है। ऐसी लड़की जन्म से ही नर्स होती है, यह कहें तो भी कुछ अनुचित् नहीं है, इससे मैं कहता हूं कि छोटे बच्चों का आरोग्य, जीवन, सर्वस्व जैसा तुम्हारे पर अवलम्बित है वैसा और किसी पर नहीं।

यह कितनी बड़ी जोखिम है। परन्तु मैं समझता हूं कि छोटे बच्चे जैसे मुझे सुहाते हैं वैसे ही तुम्हें भी भाते होंगे। बच्चों पर प्यार करना ये स्त्रियों का स्वाभाविक धर्म ही है। बच्चों को कैसे सँभालना चाहिये यदि यह तुम्हें अच्छी तरह आ जायगा तो तुम्हारे पास में रहने वाले बच्चे नीरोगी और सुखी रहेंगे।

सब बातों का सार एक बार फिर मैं तुम्हें कहता हूं कि छोटे बच्चों के लिये ताज़ी हवा अवश्य ही होना चाहिये।

जिस कमरे में बच्चा सोता हो, उसके खिड़की, दर्वाजे सब बन्द कर देने से एक दो घंटे में ही बच्चा बहुत बीमार हो सकता है। इतने में ही जो बालक स्वयं बीमार हो, उसके कमरे में जलती हुई अंगीठी रखदी, और बच्चे को दस पांच मिनट सोने दिया (किवाड़ वगैरः बन्द हुये) तो फिर पूछिये ही मत! बच्चे को मारने के लिये फिर किसी भी मदद की ज़रूरत ही नहीं। इसपर भी यदि बच्चा, फुसफुस सम्बन्धी बीमारी से घिरा हुआ है तो इन सब सामग्रियों के ज़ोर से मरेगा और अवश्य मरेगा। मैंने ऐसी अपमृत्युएं बहुत देखी हैं कि ठंढ के दिनों में किवाड़ आदि बन्द कर अँगीठी जलते हुये कमरे में सुला देने से बच्चे मर गये।

थोड़े दिनों पहिले रेसिडेंट साहिब के यहां से मुझे बुलौवा आया कि "शीघ्र आकर मेरे माली को देख जाइये कि कल रात में जब सोया तब बहुत अच्छा, तन्दुरुस्त था और प्रातःकाल देखा गया तो बेहोश मिला। कदाचित् प्लेग तो नहीं है ?" यह बुलौवा आते ही तुरंत मैं उनके बँगले पर पहुंचा और देखा तो दर्वाजा खुला हुआ है और माली बिल्कुल अच्छी तरह सुध में आया हुआ है। वह बेसुध क्यों हुआ, इसकी बहुत जांच की परन्तु कोई न बता सका। आखिर मेरी दृष्टि उसकी खाट के पास की अगीठी के पास गई। मैंने उसी वक्त उससे पूछा कि क्या यह अंगीठी रात भर यहीं थी ? उसने कहा "हां !" सोते समय शीत बहुत था इससे कोयले सुलगा कर इसके सराने रख दिया था और मैं किवाड़ बन्द कर सो गया था।" उस कोठरी में एक ही दर्वाजा था और खिड़की थी ही नहीं। दर्वाजा बन्द कर दिये बाद ताजी हवा आने का मार्ग ही न था। अंगीठी और श्वासोच्छ्वास से कोठरी की हवा बिगड़ गई और इसी से वह बेसुध होगया। प्रातःकाल में यदि उस कोठरी का दर्वाजा किसी ने न खोला होता और उसे ताजी हवा मिली न होती तो वह थोड़ी ही देर में मर गया होता। उसके अच्छे होने में न औषध ही लगी न पानी ही, केवल ताजी हवा से वह अच्छा होगया। उसकी जगह

कोई बच्चा होता या उसके पास ही कोई बच्चा सोता होता तो वह अवश्य ही मर जाता। बड़े आदमी पर दूषित हवा का असर होने में देर लगती है, परन्तु छोटे बच्चों के न तो अच्छे होने ही में देर लगती है और न मरने ही में।

एक समय मुझे एक लखपती श्रीमान् के यहां जाना पड़ा। उसका मकान एक बड़ी हवेली थी। उसमें एक सुन्दर और सुशोभित दीवानखाना था जिसमें उसकी स्त्री अपने छोटे बच्चे को जांघों पर लेकर बैठी हुई थी। दीवानखाने में जाने के लिये एक दर्वाजा था। वह भी बन्द अँधेरगुप जीने के मुँह पर ही था। जीने के नीचे एक तल घर था जिसमें अफ़ियून की पेटियां ठोंस ठोंस के भरीं थीं। जीने से ऊपर जाते समय मार्ग दिखलाने के लिये दिया लेकर जो मनुष्य आगे २ चलता था उसके दीवान-खाने के दर्वाजे में जाते जाते दिया बुझ गया। जीने से ऊपर पहुंचते ही मेरा जी मचलाने लगा। उस समय मुझे ऐसा होने लगा कि खूब हवा में मैं कब जाऊंगा। दीवानखाने में चार खिड़कियां थीं, उनमें दोहरे किवाड़ थे, बाहर से रङ्ग बिरङ्गे कांच के और भीतर से लकड़ी के। दोनों तरह के किवाड़ बन्द थे इससे दीवानखाने में अंधेरा हो रहा था। बच्चे की नाड़ी देखी जासके इस ख्याल से एक लालटेन बच्चे के मुंह के पास रक्खी हुई थी।

बच्चे को देखो तो वह अखीर समय का घरौटा कर रहा था और बीच बीच में उचके भरता था। कोई बीमारी न देख पड़ी इससे मैं खिड़कियां खोलने के लिये उठा और खिड़कियों के पास जाने लगा तो बच्चे की मां बोल उठी कि "हं! हं! खिड़कियां न खोलिये, बच्चे को झोंके लग कर न जाने क्या हो जायगा, बच्चा मर जायगा।" परन्तु मैंने उसके कहने पर ध्यान न देकर चारों बारियों को बिलकुल खोल दिया और दो घंटे वहीं बच्चे के पास बैठा रहा। जैसे जैसे बच्चे को ताजी और स्वच्छ हवा मिलने लगी बच्चा होशियार होने लगा, दो घंटे में अच्छी तरह स व-धान होकर हँसने लगा, उसकी मां को भी यह विश्वास हो गया कि अब मेरा बच्चा नहीं मरता। बच्चों के सोने केकमरे में ताजी और स्वच्छ हवा आने देना चाहिये, सिर्फ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बच्चे के बदन पर हवा के झोंके न लगने पावें। इस पर भी यदि बच्चा अशक्त हो तो विशेष फ़िक्र रखना चाहिये। अब कोई बाई यह पूछे कि "क्या करें और क्या नहीं" कुछ सूझ नहीं पड़ता; आपही कहते हैं ज्यादः न खाने दो और आपही कहते हैं कि खाने को थोड़ा न दो, आपही कहते हैं कमरा बन्द न करो, और आपही कहते हैं खूब उघाड़ो मत, आपही कहते हैं बच्चे को स्वस्थ न पड़ा रहने दो और आपही कहते हैं खिलाओ भी मत," तो मुझे उनसे

यही कहना है कि बाई जो कुछ करो व्यवस्था से करो; व्यवस्था किसको कहते हैं इस बात को कितनी ही तो भूल में भी नहीं समझतीं और वह उन्हें सिखाई भी नहीं जा सकती। पहले पहले मुझे भी अड़चनें आती थीं। उस समय मुझे भी क्या करना चाहिये इस विषय में गोते खाने होते थे। धीरे धीरे ठीक होगया।

व्यवस्था किस तरह करना चाहिये यह बात पुस्तकें पढ़ने से नहीं आती। बच्चों को कैसे सँभालना यह अनुभव से और अपनी अपेक्षा बड़ी सीखी और सुधरी हुई बाइयां कैसे सँभालती हैं? इस पर रोज़ ध्यान देकर देखने से अपने आप आ जाती है।

प्राचीन समय की माताओं की ऐसी समझ है कि छोटे बच्चों को हवा में लेजाने से उन्हें ठंड हुए बिना नहीं रहती। यह समझ बिलकुल पागलपने की है। बच्चे को सरदी लगी होने पर भी यदि उसे ताजी और स्वच्छ हवा खूब न मिली तो उससे नुकसान हुए बिना कभी न रहेगा। यह बात बिलकुल ठीक है। बच्चे को न्हिलाने बाद हवा लगने से या बच्चे के बीमार होने पर खुले बदन पर हवा लगने से सरदी होजाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है, परन्तु यह तुम अच्छी तरह समझ रक्खो कि बच्चे को जितनी ताज़ी और स्वच्छ हवा न होगी उतने ही उसके फुसफुस कमजोर रहेंगे। जितना

कम न्हिलाओगे उतना ही उसका अङ्ग (त्वचा) मलीन रहेगा और इससे उसे ऊपरा ऊपरी सरदी और खांसी होगी।

घर में या बाहर बच्चे को सरदी न होने देने के लिये तुम उसे जितनी स्वच्छ हवा दे सकोगी उतनी ही तुम्हारी होशियारी समझी जायगी।

कितने ही बीमार बच्चों का शरीर बिलकुल शीतल मालूम होता है। ऐसे बच्चों को कमरा बन्द कर उसमें रखने से उनके बदन में गरमी नहीं आजाती। ऐसे समय उनके शरीर के नीचे या बगल में गरम पानी की बोतलें रख कर उनके बदन पर फलालेन जैसे गरम कपड़े रखने चाहिये और खिड़की व दरवाजे खोलकर कमरे की हवा को स्वच्छ होने देना चाहिये। बच्चे को थोड़ा गरम गरम दूध पिलाना चाहिये। इत्यादि। ऐसा न कर कितनी ही नर्सें खिड़की दरवाजे और उनकी सन्धों को भी अच्छी तरह बन्द कर देती हैं। इससे बच्चे के बदन में गरमी तो आती नहीं उलटा ठंडे दम होजाता है। अगर तुम ऐसा करोगी तो ऐसा करने से एकाध बुखारवाले बच्चे को झट से मार बैठोगी।

एक प्रसिद्ध विद्वान डाक्टर का मत है कि जितने छोटे बच्चे मरते हैं, उनमें से आधे से ज्यादा तो उनके घरवालों की या नर्स की भूल से मरते हैं। बीमार बच्चा,

एकाएक मर जाय तो समझना चाहिये कि कुछ अपघात हुआ और वह अपघात घर के मनुष्य सावधान होते तो टाला जा सकता था। दुनिया कहती है कि बच्चा बीमार होकर अमुक सबब से मर गया अगर वह सबब न होता तो नहीं मरता इत्यादि परन्तु उसका यह कहना व्यर्थ है।

बीमार बच्चे के एकाएक मरने के बहुत से सबब हैं। परन्तु मुख्य कहे जाय तो ये हैं:—

एकदम जोर से चिल्लाना, बच्चे को उघाड़ा रख कर उसे ठंड लगने देना, एकदम उसे जगाना, पेट फूल जाय इतना दूध पिलाना, ऊपरा ऊपरी खाने को देना, सोते हुए को एकदम बैठा या खड़ा कर देना, बाहुओं को पकड़ कर! झुलाना, डराना, खराब हवा में रखना या रात में झुलाना इत्यादि। यह अखीरी कारण प्रायः बच्चों के मरने का प्रधान कारण होता है।

छोटे बच्चों का श्वासोच्छ्वास बड़ा ही नाजुक होता है। वह बहुत जल्द बिगड़ता है। कभी कभी छोटे बालकों का श्वासोच्छ्वास इतना खराब चलता है कि प्रत्येक श्वास बड़ी कठिनता से आने लगती है। ऐसे समय नर्स को चाहिये कि बड़ी सावधानी से वह बच्चे के श्वास को देखती रहे। इसमें थोड़ी सी भी अव्यवस्था हुई तो समझ लो कि बच्चा खत्म हुआ। ऐसे समय बच्चे

को कुछ भी श्रम हुआ और उससे उसका दम उखड़ गया तो बच्चा मर ही जायगा।

बच्चे का शरीर बिलकुल स्वच्छ रखने के लिये तुम्हें खूब ध्यान देना चाहिये। बड़ी फिकर रखना चाहिये। छः महीने में मैंने बच्चे के शरीर में पानी भी नहीं लगने दिया ऐसी शेखी मारते हुए मैंने कई माताओं को सुना है और वैसा करते हुए देखा भी है। वे यों कहते हुए नहीं चूकतीं कि अमुक अमुक अपने बच्चों को रोज न्हिलाती है इससे उनके बच्चे कैसे दुबले होगये हैं।

बाई बापड़ी कुछ भी कहो परन्तु तुम सीखी सुधरी हुई हो तुम्हारे लिये ऐसी बातें नहीं कही जा सकतीं। बच्चे का शरीर नख सिख से धोकर स्वच्छ रखना चाहिये। उसके अङ्ग पर तिल बराबर भी ऐसी जगह न होना चाहिये जो मैली हो क्योंकि मैलापन उपयोगी नहीं है। अब तुम सब इस बात को जानती हो और मुझे आशा भी है कि तुमसे ऐसे विषय में भूल न होगी ऐसा किया जायगा तभी बच्चा नीरोगी और आनन्दी रहेगा।

छोटे बच्चों को रोज एकबार तो स्वच्छ कर न्हिलाना आवश्यक ही है। कोई कोई दो बार भी न्हिलाती हैं। इसके सिवाय उसका शरीर किसी भी कारण से अस्वच्छ होगया या बू वाला होगया हो तो और भी धो पोंछ कर साफ करना चाहिये। बच्चे को न्हिलाते या पोंछते

समय इस बात पर भी ध्यान रखना चाहिये कि बच्चों की त्वचा बहुत ही नाजुक होती है।

बच्चों के सिर्फ हाथ पैर धो देने से जैसा नुकसान होना सम्भव है वैसा न्हिला देने से नहीं। बड़े आदमियों की अपेक्षा बच्चों के शरीर में पसीना ज्यादा आता है। इसलिये छोटे बच्चों के कपड़े बड़े आदमियों की अपेक्षा जल्दी जल्दी पलटना चाहिये। बूवाले मिट्टी धूल मिले हुए मैले कपड़े यदि बच्चों के शरीर में पिन्हाये जांयगे तो बच्चा बीमार होने से क्यों कर बचेगा? बच्चों के कपड़े ढीले होने चाहियें। बहुत गाढ़े न होने चाहियें। वे ऐसे होने चाहियें कि फौरन पिन्हाये और निकाले जा सकें। वैसे ही वे बोझ में हलके और गरम होने चाहियें। छोटे बच्चों को यदि ठीक कपड़े नहीं पहनाये जाय तो उनकी प्रकृति पर हवा के फेरफार का असर तुम्हारी अपेक्षा बहुत जल्दी होता है। मतलब यह है कि छोटे बच्चों को सँभालने के लिये कौन कौन सी महत्त्व की बातें इस समय समझना चाहिये सो कहता हूं। वे ये हैं:—

(१) स्वच्छ वायु

(२) योग्य उष्णता

(३) शरीर, कपड़े, बिछौना, कमरा, घर इत्यादि की सफाई

(४) ठीक समय पर खिलाना पिलाना

(५) एकदम भयादि का धक्का न पहुंचाना
(६) खूब प्रकाश देना और खेलने देना
(७) दिन के और रात के कपड़े अलग अलग रखना
(८) इन सब बातों का योग्य बन्दोबस्त करना

मोमबत्ती की ज्योति को जैसे फूंक देकर बुझा देने में देरी नहीं लगती वैसे ही बीमार बच्चे के प्राण लेने में कोई देर नहीं लगती। उसको खाना देने में १०-५ मिनिट की देरी हुई कि (इसी कारण से) वह मर जाता है।

अभी तक जो जो सूचनायें मैंने कीं वह प्रत्येक बीमार को लागू होती हैं। शस्त्र प्रयोग किये हुए रोगी के जितनी लागू पड़ती है उतनी ही खांसी जैसी बीमारी में पड़े हुए रोगी को भी लागू पड़ती है। वास्तव में देखें तो एकाएक आघात पाये हुये रोगी की जितनी फिकर करना पड़ता है उतनी फिकर और तरह के रोगी की न भी की जाय तो घड़ी भर चल सकता है।

कहीं मैल जमी हो उसे दूर करने के लिये, बू को दूर करने लिये अन्धेरे को मिटाने के लिये और गरमी कायम करने के लिये नर्स को हमेशा अपनी आंखें खोल कर तैयार रहना चाहिये।

अपघात से आराम पानेवाले रोगी की प्रकृति सब तरह से हृष्ट पुष्ट होना चाहिये। यदि ऐसा न हो तो वह दोष नर्स का है। इस पुस्तक में जो जो सूचनायें की हैं वे सब आरोग्यशास्त्र के तत्वों के ग्रहण करके की हैं

परन्तु इससे यह बात नहीं समझना चाहिये कि नर्स के धन्दे की ओर और बातों को मैं कम महत्व की समझता होऊं। एक निर्मल जगह पर बैठे बैठे ही रोगी का शिर टूट जा सकता है और रक्तास्राव होकर रोगी मर जा सकता है इससे नर्स को स्वच्छता, स्वच्छ हवा, उजेला, शान्तता इत्यादि बातों की ओर ध्यान देना चाहिये और अपने अशक्त हुए रोगी को एक करवट से दूसरी करवट भी लिवाना चाहिये वरना वह एक ही जगह सड़ के मर सकता है। ये सब बातें नर्स को जानना चाहिये। परन्तु एक तो यह पुस्तक बहुत ही छोटी है। इसमें सब प्रकार की शुश्रूषा का समावेश करना कठिन है और दूसरे मैं अपने निज के दीर्घकाल के अनुभव से विश्वास पूर्वक कह सकता हूं कि शुश्रूषा का विषय केवल पुस्तक पढ़ कर ही समझने का नहीं है।

नर्स का काम डाक्टर के दिये हुये हुक्म का पालने का है। दवा का तबदील करना, बन्द करना, बढ़ाना वगैर॰ काम सिर्फ डाक्टर का है, नर्स का नहीं। इसी तरह रोगी को क्या खाने को देना चाहिये और क्या नहीं, यह ठहराना भी डाक्टर का ही काम है;

मर्ज को उसमें मीनमेख नहीं करना चाहिये। उसे अपने बुद्धि से ही और अपनी जवाबदारी पर औषधो पचार और खाने पीने के विषय में हाथ न डालना चाहिये। इतना कह कर यहां पर इस विषय को पूरा करता हूं।

